Impact Factor : 7.834

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा पटियाला, श्रीगंगानगर व नेपाल से प्रसारित
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

ISSN : 2321-8037
Nov.-December 2025
Volume 13, Issue 11-12

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Editor :
Dr. Rekha Soni

Chief-Editor :
Dr. Naresh Sihag Adv.

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष
डॉ. विश्वकीर्ति

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

www.ginajournal.com

संस्थापक संरक्षक :
स्मृति शेष
श्री हरविन्द्र कमल चौधरी

वर्ष : 13 | अंक : 11 – 12 | नवम्बर – दिसम्बर : 2025 | आईएसएसएन : 2321 – 8037

सम्पादक :
डॉ. रेखा सोनी
शिक्षा विभाग, टांटिया वि.वि.,
श्रीगंगानगर – 335001 (राज.)

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,
भिवानी (हरियाणा)

मार्गदर्शन :
डॉ. राजेन्द्र गोदारा
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. लक्ष्मी जोशी
त्रिभुवन वि.वि. काठमाण्डू।

डॉ. सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स
एंड कम्युनिकेशन,
सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर
गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्री श्रेष्ठ चौधरी,
सीनियर मैनेजर,
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया,
साहिबजादा अजित सिंह नगर,
मोहाली, पंजाब।

कानूनी सलाहकार :
डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट,
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी।

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

श्री हेमराज न्यौपाने
नेपाल।

डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।

डॉ. संदीप
ओम विश्वविद्यालय, हिसार।

प्रो. मधुबाला
राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार।

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका
राजकीय महाविद्यालय, हिन्दुमलकोट,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग हरियाणा

डॉ. राजेश शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुद्दस्सिर अहमद भट्ट
हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर

डॉ. सीहेच वी. महालक्ष्मी
सीहेच एसडीएसटी थेरेसा महिला
महाविद्यालय, एलुरू, आंध्र प्रदेश

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

डॉ. अनुपमा, पूर्व प्रोफेसर,
अंकारा विश्वविधालय, अंकारा, टर्की

डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, टांटिया, वि.वि.

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग,** एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज,** पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी – 127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

(Journal of Literature, Arts, Science, Commerece, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 7.834

ISSN : 2321-8037

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान/ अभियांत्रिकी/ कृषि/चिकित्सा/ पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा/ मानविकी/कला/ सामाजिक विज्ञान/ पुस्तकालय/शिक्षा/ शारीरिक शिक्षा/ वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	07–07
2.	**Variation in Biochemical estimation in different population of R.emodi and R.moorcroftianum from Garhwal Himalaya**	**Dr. U.C. Maithani**	**08-10**
3.	सतनामियों का परिचय, उदभव और स्वरूप	रोहित कुंवर, डॉ. सोनू सारण, डॉ. केशव देव शर्मा	11–15
4.	कौशल विकास एवं रोजगार में नई शिक्षा नीति (2020) की भूमिका (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)	डॉ० विक्रम सिंह	16–21
5.	**Exploring Technology-Driven Commerce Synergies and Guest Loyalty in Budget Hotels**	**Dr. Rajesh Kumar, Mr. Pankaj**	**22-26**
6.	**(m, n) - DIFFERENT TYPES OF IDEAL OF SEMIRINGS**	**Sakshi**	**27-33**
7.	विकास की अवधारणा और आदिवासी	डॉ. अंशु यादव, डॉ. रवि कुमार गोंड	34–38
8.	माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके सामाजिक आर्थिक स्थिति के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन	सोनी कुमारी, डॉ जयप्रकाश सिंह	39–51
9.	अनूपगढ़ जिले के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का शिक्षण पर प्रभाव का अध्ययन	लवप्रीत सिंह, डॉ. अनिल कुमार	52–57
10.	जलवायु परिवर्तन : एक वैश्विक चुनौती	सलोचना यादव	58–60
11.	उच्च संगठनात्मक वातावरण व निम्न संगठनात्मक वातावरण वाले सरकारी व निजी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार का अध्ययन	सतपाल, डॉ. संगीता अग्रवाल	61–65
12.	पंजाबी प्रवासी कहानियों में वृद्ध विमर्श	भक्ति कुमारी	66–70
13.	स्वदेश दीपक की रचनाओं में बाजारवाद	श्रीमती लक्ष्मी साहू	71–73
14.	भरतपुर जिले के माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापनरत शिक्षकों के शैक्षिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन	प्रियंका कुमारी, डॉ. प्रभा कुमारी	74–79
15.	**Ethics, Governance, Bias and Regulation of Artificial Intelligence**	**Dr. S. Swarnalatha, Dr. K. P. Mangani**	**80-84**
16.	**Balancing Copyright Protection and User Freedom : Rethinking Anti-Piracy Laws in the Digital Age**	**Rishi Kumar Mishra**	**85-94**

17.	हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना	डॉ. समणी मंजुलप्रभा	95–106
18.	**DRAMA IN MODERN SANSKRIT LITERATURE**	**Priyamvada Kannan**	**107-111**
19.	किन्नर विमर्श और आधुनिक समाज	डॉ. सुनिता गजभिये	112–116
20.	हिंदी कहानी–साहित्य में किन्नर विमर्श और समाज की संवेदनशीलता	डॉ. निता चांगदेव देशभ्रतार	117–121
21.	ज्ञान प्रकाश विवेक के कथा साहित्य में आर्थिक मूल्य	सुमन लता, डॉ. सुनीता सिंह	122–127
22.	महाभोज में चित्रित विषयों की प्रासंगिकता आज के संदर्भ में	जाह्नवी राज, डॉ. दिवाकर पांडेय	128–131
23.	ધર્મ	**Dr. Hemant R. Patel**	**132-139**
24.	**Performance of lentil (*Lens culinaris*) under diverse organic and inorganic fertilizer sources in sandy loam soil**	**Manish Kumar, Manoj Kumar Shukla**	**140-151**
25.	पश्चिमी राजस्थान में कन्या भ्रूण हत्या : सामाजिक मुद्दा	केदार पंवार, डॉ. पूजा सिसोदिया	152–154
26.	ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸਕ ਪਿਛੋਕੜ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਦਰਜ ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਅਧਿਐਨ	**Mrs. Jaspreet Kaur, Dr. Kanwaljeet Kaur**	**155-158**
27.	डॉ. नरेश सिहाग की कहानियों में किन्नर विमर्श	डॉ. मालोजी अर्जुन जगताप	159–163
28.	शक, सातवाहन और कुषाण कालीन अभिलेखों में धार्मिक परंपराओं का निरूपण : एक ऐतिहासिक विश्लेषण	अमित कुमार पाण्डेय, डॉ. प्रवीण कुमार श्रीवास्तव	164–171
29.	**Inflation Dynamics in India : An Empirical Analysis of Price Movements, Climate Impact, and Policy Responses (FY24–FY25)**	**Saba Ashraf**	**172-180**
30.	राजस्थान की लोक कथाओं में छुपी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान	डॉ. मरजीना, नीतू पारीक	181–186
31.	**GST and its Impact on MSMEs in India**	**Dr. Kunjan Pandey**	**187-194**
32.	जगद्गुरू स्वामी रामभद्राचार्य जी के अरूंधती महाकाव्य में राष्ट्रीय चेतना	प्रो. शिशिर कुमार पांडेय, शीला देवी	195–198
33.	हिंदी और तेलुगू की डिजिटल पत्र–पत्रिकाएं	डॉ. गोविंद जाधव	199–204
34.	हिंदी साहित्य और नारी सशक्तिकरण : चिंतन और चुनौतियाँ सामाजिक चुनौतियों को स्वीकारती स्त्री **Women Facing Social Challenges : An Analytical Study Based on Secondary Data In India**	**Suman Kumari Jaisal**	**205-213**
35.	नागार्जुन की कविताओं में ग्राम्य संवेदना	कु० आरती पाण्डेय	214–220

सम्पादक की कलम से.....

वर्ष 2025 अपने अंतिम पड़ाव की ओर अग्रसर है। यह समय केवल कैलेंडर के पन्ने पलटने का नहीं, बल्कि बीते महीनों की बौद्धिक यात्रा का आत्ममंथन करने और आने वाले समय के लिए नई दृष्टि विकसित करने का भी अवसर है। आज जब समाज, संस्कृति और साहित्य एक साथ अनेक मोर्चों पर बदलाव देख रहे हैं, तब शोध–जगत के लिए यह और भी आवश्यक हो जाता है कि वह अपने कार्य की दिशा और गंतव्य दोनों पर पुनर्विचार करे।

'गीना शोध संगम' का यह नवंबर–दिसंबर 2025 अंक उसी चिंतन की परिणति है। इस अंक में सम्मिलित सभी आलेख, शोध–पत्र, समीक्षा और चिंतनपरक लेख हमारे समकालीन समाज के उन पहलुओं को स्पर्श करते हैं जो आज के समय की सबसे बड़ी आवश्यकता हैं। सत्य की खोज, मूल्यबोध की पुर्नस्थापना और मानवीय संवेदना का पुनर्पाठ। हम ऐसे युग में प्रवेश कर चुके हैं जहाँ ज्ञान केवल पुस्तकों और ग्रंथों तक सीमित नहीं रहा। डिजिटल तकनीक ने सूचना को तत्काल उपलब्ध करा दिया है, लेकिन इस सहजता के साथ एक नई चुनौती भी उपस्थित हुई है– "मौलिकता और मानवीयता की रक्षा।" आज शोधार्थी के सामने सबसे बड़ी कसौटी यही है कि वह अपने अनुसंधान को तथ्यों के साथ–साथ मानवीय गहराई और संवेदना से भी जोड़े।

'गीना शोध संगम' का यह अंक इस दिशा में एक विनम्र प्रयास है। यहाँ प्रस्तुत लेख समाज, साहित्य और शिक्षा की विभिन्न धाराओं को एक संगम पर लाकर खड़ा करते हैंकृजहाँ परंपरा और आधुनिकता, भावना और तर्क, विचार और क्रियान्वयन एक साथ उपस्थित हैं। स्त्री विमर्श, पर्यावरणीय चेतना, नैतिक मूल्यों का पुनर्पाठ, ग्रामीण संस्कृति का पुर्नस्मरण, भाषा और तकनीक के नए रूपकृये सब विषय इस अंक में अपने विविध आयामों के साथ विद्यमान हैं।

आज का शोध केवल अतीत को देखने का माध्यम नहीं, बल्कि भविष्य के निर्माण का औजार बन चुका है। शोधार्थियों और विद्वानों का यह उत्तरदायित्व है कि वे अपने लेखन के माध्यम से समाज की दिशा को सकारात्मकता दें। इस अंक में सम्मिलित अनेक लेख न केवल इस उत्तरदायित्व को समझते हैं, बल्कि उसे निभाने का सार्थक उदाहरण भी प्रस्तुत करते हैं। हिन्दी साहित्य के परिप्रेक्ष्य में देखें तो आज यह भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि चिंतन का भी आधार बन चुकी है। हिन्दी में हो रहा समकालीन शोध भारतीय समाज के भीतर पल रहे द्वंद्वों, आकांक्षाओं और संभावनाओं का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है। हमारे लेखक आज सिर्फ साहित्यकार नहीं, बल्कि यथार्थ के साक्षी हैं – वे बदलते समय को शब्दों में नहीं, संवेदनाओं में दर्ज कर रहे हैं। इस अंक में शामिल शोध लेख यह प्रमाणित करते हैं कि नई पीढ़ी के लेखक और शोधार्थी विषयों की गहराई को समझने और उन्हें सामाजिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करने की क्षमता रखते हैं। यही वह शक्ति है जो किसी भी समाज को जीवंत बनाती है।

वर्तमान युग "कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI)" और "डिजिटल शोध" का है। अब हर शोधार्थी के पास सूचना का अथाह भंडार उपलब्ध है, लेकिन प्रश्न यह है कि क्या यह सुविधा हमें और संवेदनशील बना रही है या केवल तथ्यों के उपभोक्ता में बदल रही है? हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि शोध का मूल उद्देश्य आंकड़ों का संकलन नहीं, बल्कि "सत्य की खोज" है। इस संदर्भ में 'गीना शोध संगम' निरंतर यह प्रयास कर रहा है कि प्रत्येक अंक में प्रकाशित सामग्री न केवल नवीनतम जानकारी दे, बल्कि विचारों की प्रामाणिकता और भावों की गहराई को भी स्पर्श करे। इस अंक में विविध विमर्श और सामाजिक चेतना पर लिखे लेख विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये न केवल समकालीन समाज की बदलती संवेदनाओं का दर्पण हैं, बल्कि यह भी बताते हैं कि शोध अब केवल अकादमिक अभ्यास नहीं रहा, बल्कि सामाजिक दायित्व का भी हिस्सा बन चुका है। इसी तरह भाषा और मीडिया पर लिखे आलेख यह दर्शाते हैं कि संप्रेषण के नए माध्यम किस प्रकार सामाजिक सरोकारों को प्रभावित कर रहे हैं।

'गीना शोध संगम' की यही विशेषता है कि यह केवल विषयवस्तु का संग्रह नहीं करता, बल्कि विचारों के प्रवाह को दिशा देता है। इस अंक के प्रत्येक लेख के पीछे शोधकर्ता की मेहनत, दृष्टि और समाज के प्रति उत्तरदायित्व झलकता है। यही भाव इस पत्रिका को अन्य शोध पत्रिकाओं से विशिष्ट बनाता है।

–सम्पादक

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 8–10

Variation in Biochemical estimation in different population of R.emodi and R.moorcroftianum from Garhwal Himalaya

Dr. U.C. Maithani
Assistant Professor Botany
Govt. Degree College Narendra Nagar (Tehri)

Abstract :

Biochemical analysis of seeds of both the species showed high soluble protein content in R.moorcroftianum in comparison to R.emodi. Among the different populations, highest total soluble protein was observed in the seeds of R.moorcroftianum collected from madhyamashwar whereas it was lowest in the tungnath population. In seeds of R.emodi, highest soluble protein content was observed in the Valley of Flowers and lowest in the Tungnath population.

Keyword : TN, Tungnath, HKD,Harkeedun, VF: Valley of flower, HK:Hemkund, KN,Kedarnath, MD,Madhyamaheswar.

Introduction -

The starch content in the plants various being dependent on many factors leading to a decrease in the concentration of the soluble carbohydrate during the period of chill and is regarded as a factors increasing the chilling toleranGe of plants. (Ashworth et a1 1993). Levitt (1980) has reviewed the role of increased sugars in freezing tolerance. The sugar concentration raises at low temperature and the magnitude of conversion of starch to soluble carbohydrate with increasing temperatures various from species to species. It has been reported that temperature also accelerates the conversion of starch into sugars and decrease hemicelluloses and pectin during fruit ripening (Chandler 1993).

In higher plants and in other organism the induction of unique proteins in response to high temperature is a feature common to all species studied to date. These normal proteins are termed heat shock proteins (Booz and Traris 1980).

Material and method : Soluble sugars and starch content in the seeds of both the species

from all population was estimated by hemogonizing seeds in 80% cold ethanol in mortar and pistle. The Homogenates were centrifuged at 3000rpm for l5inin (model REME C-30) the supernatants obtained after centrifugation were used for estimation of soluble sugars. The pellet left behind was dissolved with 52% perchloric acid and left overnight in the next morning this mixture was centrifuged at 3500rpm for l5min. The supernatants was used for starch estimation. Both soluble sugar and starch were estimated using the anthrone method (MCC Ready etal 1966)

Result and Discussion : - The soluble sugar content in the fresh seeds of R.emodi was recorded highest in Vf(61.9z3.15), followed by HK(52.69= 3.76), KN (45-21) z2.22) (36.58 + 5.79) and lowest in TN (30.56 z 0.13) where as in R. moororoftianum the maximum total sugar content (22.14 4.25) was recorded in MD followed by HK (21.74 0.61) and minimum in TN (17.61 + 1.12). Among different population of both the Rheum species the maximum total sugar content (61.94 +3.15) was observed in VF population of Rheum emodi while minimum soluble sugar content (17.61 + 2.12) was recorded in TN population of Rheum moorcroftianum. Soluble sugars content of seeds also affects the germination of seeds. Biochemical estimation of seeds of both the Rheum species in seeds of the flowering plants starch in considered chief organic reserve. The sugar and search were considered active components of total carbohydrates in alpine plants (fonda and Bliss, 1966) .

Maximum starch content (121.22) was absorved in the seeds of HK population of R.emodi whereas minimum (41.30) in MD population R.moocroftianum. In R.emodi maximum starch content (121.22zl2.46) were absorved in HK population followed by HKD (87.56z2.26) KN(66.0lz4.51), VF (58.80z2.89) and minimum (51.72z2.97) in TN population. Whereas in R.moocroftianum maximum starch content was absorved HK (90.67z0.86) followed by TN (85.03a0.72) and minimum (41.30z1.11) in MD population fig.The total soluble protein content was recorded heighest 7.92 in the seeds of KN population R.emodi followed by HK (7.252),VF (6.288), HKD (5.254) and lowest in TN (3.934). Where as in R. moocroftianum the total soluble protein content was absorbed maximum (8.215) in MD and minimum (7.892) in HK population. In both the Rheum species heighest protein content (8.21)was absorved in MD while lowest (3.93) in TN population Fig.

References :

1. Ashworth, E.N, Strim V.E. Volence , J.J. (1993): Seasonal variation in soluble suger and starch within woody sterms of coenus sericea L.Tree Physiological, 13: 379-388.
2. Levitt. (1980). Responses of plants to Environmental streses Chilling freezing and high tempreture stresses. Acad Press; 479 Newyork.

3. Chandler, W.H (1993). The killing of plant tissue by low temperture. MO. Agr. Expt. Sta. Bull, 8:171.
4. Booz, M.L and Traris, R.L (1980) Electrophoretic comparision of polypeptides from enriched plasma membrane from developing Soybean roots. Plant Physiological; 66:1037:1043.
5. Fonda,R.W and Blins, L.C (1966) Annula Carohydrate of alpine plants on M.T washigton New Hengeshire, Bull. Torrey Bot. Club. 93:268:277.

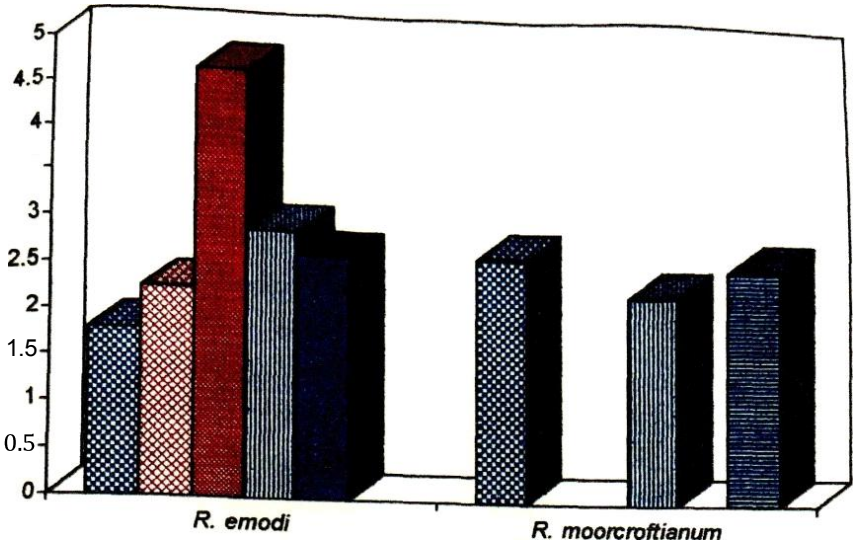

Fig. 5. Free amino aCid content in seeds of different populations ofR6erm species (TN-Tungnath, HKD-Harkeedun, VF-Valley of Flowers, HK- Hemkund, KN- Kedamath, MD-Madhyamaheshwar)

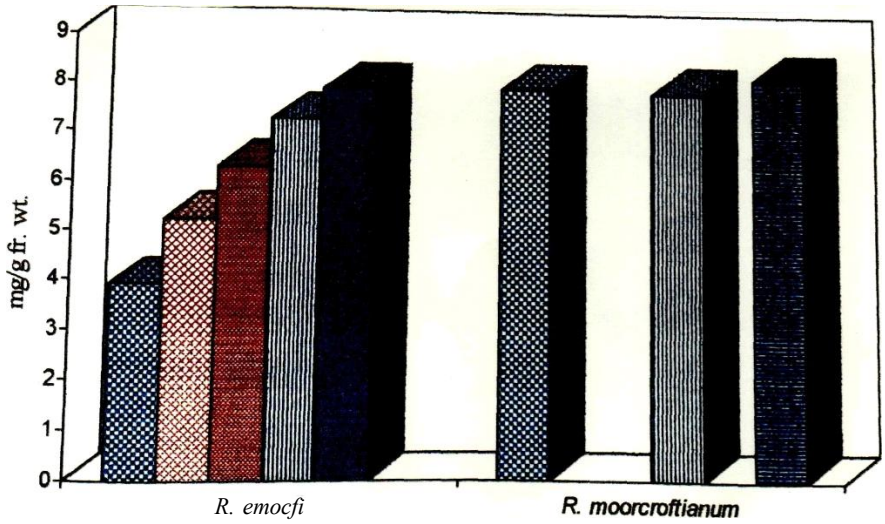

Fig. 6. Total soluble protein content in seeds of different populations of Mr < species (TN-Tungnath, HKD- Harkeedun, VF- Valley of Flowers, Hemkund, KN- Kedamath, MD-Madhyamaheshwar)

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 11-15

सतनामियों का परिचय, उदभव और स्वरूप

रोहित कुंवर, शोधार्थी
डॉ. सोनू सारण, शोध निर्देशिका,
डॉ. केशव देव शर्मा, सह–शोध निर्देशक,
इतिहास विभाग, श्री जगदीश प्रसाद झाबरमल टिबड़ेवाला विश्वविद्यालय, झुंझुनूं।

शोध आलेख सारांश :-

हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात् भारत में राजनीतिक उथल पुथल थी। भारत छोटे–छोटे राज्यों में बँट चुका था। वी.ए. स्मिथ के अनुसार हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद भारत का इतिहास छोटे–छोटे राज्यों का अव्यवस्थित आख्यान मात्र था। न केवल आंतरिक अराजकता ही थी अपितु बाह्य आक्रमण भी प्रारम्भ हो चुके थे। अरबों की शक्ति का तथा इस्लाम का उदय भी 7वीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी। राजनीतिक दृष्टि से भारत एक भौगोलिक अभिव्यक्ति मात्र रह गया था। हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात् से लेकर 12वीं शताब्दी तक का काल उत्तर भारत के इतिहास में सामान्यतः 'राजपूत काल' के नाम से जाना जाता है। इस काल के दौरान एक अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ था, वह सामन्तवाद का उत्कर्ष, जिसने भारतीय इतिहास को प्राचीन से मध्यकाल में परिवर्तित कर दिया।

मूल शब्द : उदभव, स्वरुप, राजपूतों।

भूमिका :-

राजपूतों के इतिहास को जानने के लिए सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है भिन्न–भिन्न के अभिलेख और समकालीन या बाद की लिखी साहित्यिक रचनाएं। सभा श्रृंगार, कुमारपाल चरित, वर्ण रत्नाकर, राजतरंगिणी, पृथ्वीराज रासो आदि ग्रंथों में 36 राजपूत कुलों का उल्लेख मिलता है। विशेष वंश एवं कुलों के लिए या सम्मिलित रूप से इस वंशों एवं कुलों के लिए 'राजपुत्र' शब्द का प्रयोग 12वीं शताब्दी से शुरू हुआ। हालांकि 8वीं शताब्दी से ही यह शब्द शासक वर्ग का पर्याय बनता हुआ दिखाई देता है। राजपूत शब्द संस्कृत के राजपुत्र का अपभ्रंश है। पाणिनी की अष्टाध्यायी, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, अश्वघोष के ग्रंथों, बाणभट्ट के हर्षचरित तथा कादम्बरी आदि में 'राजपुत्र' शब्द मिलता है, किन्तु किसी जाति या वंश के लिए नहीं बल्कि क्षत्रिय राजकुमारों के लिए प्रयुक्त है।

यह रहस्यमयी मिथक सर्वप्रथम प्रद्मगुप्त कृत नवसहसांक चरित में मिलता है। इसका सबसे पहला अभिलेखीय साक्ष्य पूर्णपाल का वंसतगढ़ अभिलेख 1049 ई. है। चंदरबर दाई कृत पृथ्वीराज रासो विधिवत रूप से प्रतिपादित इस मत के अनुसार राक्षसों का संहार करने के लिए वशिष्ठ ऋषि द्वारा आबू पर्वत पर किए गए

यज्ञ के कुण्ड से चार राजपूत वंश क्रमशः प्रतिहार (द्वार रक्षक), चालुक्य (सोलंकी), परमार (पंवार) तथा चाहमान (चौहान) उत्पन्न हुए। जयानक कृत पृथ्वीराज विजय के अनुसार म्लेच्छों ने यज्ञ स्थल को नष्ट–भ्रष्ट कर दिया। अतः ब्रह्मा द्वारा असुर वध के लिए प्रेरित पुरुष (विष्णु) का अवतार हुआ, जो शस्त्र लिए चार भुजायुक्त (चाहुवान) तथा रक्त वर्ण का था। वही पुरुष चाहमान के रूप में प्रसिद्ध हुआ। धनपाल की तिलकमण्जरी, अनेक परमार अभिलेखों, बेदला के चौहानों के सीसाना अभिलेख, जोधराज कृत हम्मीर रासो, नैणसी री ख्यात, नन सूर्यमल्ल मिश्रण कृत वंश भास्कर आदि इसी कथानक का वर्णन करते हैं। 13वीं से 18वीं सदी के मध्य भाटों द्वारा अग्निकुण्ड कथानक का खूब प्रचार किया गया। कर्नल टॉड ने इस मत का प्रयोग अपने मत (विदेशी उत्पत्ति) की पुष्टि के लिए किया। विलियम कुक ने अग्निवंशी कथानक को विदेशियों की शुद्धि का आयोजन बनाते हुए इसकी प्रामाणिकता पर बल दिया। पृथ्वीराज रासो के उल्लेखित चारों वंशों में से केवल परमार ही अपने को अग्निवंशी मानते हैं। उदयपुर प्रशसित, पिंगल सूत्रवृत्ति, तेजपाल अभिलेख आदि परमारों की जानकारी के प्रमुख स्रोत हैं, किन्तु इनमें उन्हें कहीं भी अग्निवंशी नहीं कहा गया है, अपितु इसके लिए 'ब्रह्म–क्षत्रकुलीन' शब्द का प्रयोग किया गया है।

राजपूतों की विदेशी उत्पत्ति के मत का प्रतिपादन सर्वप्रथम कर्नल जेम्स टॉड ने अपनी पुस्तक 'एनल्स एण्ड एंटीक्वीटीज ऑफ राजस्थान' में किया है। उन्होंने शकों व राजपूतों में प्रचलित अनेक रीति–रिवाजों–सूर्य पूजा, सती प्रथा, अश्वमेघ यज्ञ, मद्यपान, शस्त्र व अश्व पूजा, रहन–सहन, वेशभूषा, रथों का युद्ध में प्रयोग आदि की साम्यता के आधार पर राजपूतों को 'शक–सीथियन' बताया है। डॉ. स्मिथ के अनुसार विदेशी आक्रमणकारी राजवंशों को उनके भारतीय करण के बाद राजपूत नाम से जाना गया। उनके अनुसार उत्तर–पश्चिम की राजपूत जातियां – प्रतिहार, चौहान, परमार तथा चालुक्य की उत्पत्ति शकों तथा हूणों से हुई। मनुस्मृति में शकों को 'व्रात क्षत्रिय' कहा गया है। इसी प्रकार गहड़वाल, चन्देल तथा राष्ट्रकूट आदि मध्य तथा दक्षिणी क्षेत्र की जातियां– गोंड, भर, खरबार आदि देशी जंगली व आदिम जनजातियों की संतान थीं। चन्देल, राठौड़, गहड़वाल आदि प्रसिद्ध राजपूत वंशों की कालान्तर में वंश प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए उन्हें चन्द्रवंशी घोषित किया गया। चन्देलों कों स्मिथ ने मध्य भारत की गोंड जाति से सम्बन्धित बताया है।

सैद्धान्तिक रूप से यह मानने में कोई असंगति नहीं है कि कृषि, राजनीतिक सत्ता तथा वर्ण व्यवस्था के प्रसार के कारण जनजातियों में सामाजिक वर्गीकरण अवश्य हुआ। कनिंघम ने सर्वप्रथम 'ब्रोच गुर्जर ताम्रपत्र (978 ई.) के आधार पर राजपूतों को यूची जाति का वंशज बताते हुए उनका सम्बन्ध कुषाणों के साथ जोड़ा। महिपाल प्रथम के समय 915 ई. में अरब यात्री अल मसूदी भारत आया था, वह लिखता है कि 'बऊर' (महिपाल प्रथम) ने चार सेनाओं का संगठन किया था तथा प्रत्येक में 7 लाख से 9 लाख सैनिक थे। एक सेना उत्तर में मुसलमानों से लड़ने के लिए तथा दूसरी 'बल्हर' (राष्ट्रकूट) के विरूद्ध तैनात थी। अन्य शत्रुओं से लड़ने के लिए तीसरी व चौथी सेनाओं का संगठन भी बनाया गया था।

राष्ट्रकूट इन्द्र तृतीय के आक्रमण के फलस्वरूप महिपाल के समय में ही प्रतिहार साम्राज्य का विघटन शुरू हो गया। महिपाल के पश्चात् क्रमशः महेन्द्रपाल द्वितीय (945–48 ई.) देवपाल (948–49 ई.) विनायक पाल द्वितीय (953–54 ई.) महिपाल द्वितीय (955 ई.) तथा विजयपाल (960–84 ई.) शासक बने। महेन्द्रपाल द्वितीय का प्रतापगढ़ लेख (946 ई.), दशपुर (मन्दसौर) में हरि ऋषिश्वर मठ को प्रदत्त भूमिदान का उल्लेख करता है।

इससे ज्ञात होता है कि महेन्द्रपाल के महासामन्त दण्डनायक तंत्रपाल के रूप में उज्जयिनी में माधव तथा श्रीशर्मन मण्डपिका अर्थात् माण्डु में बलाधिकृत के रूप में शासन करते थे। सियाडोनी अभिलेख (948 ई. झांसी, उत्तर प्रदेश) से ज्ञात होता है कि देवपाल ने कन्नौज के सियाडोनी गांव में ब्राह्मणों को भूमिदान दिया था। गौरीशंकर ओझा ने आहड़ अभिलेख के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि मेवाड़ के गुहिल वंशी अल्लट्ट ने प्रतिहार वंशी देवपाल को परास्त किया तथा युद्ध में मार डाला।

राष्ट्रकूट इन्द्र तृतीय के पश्चात् 963 ई. में विजयपाल के समय कृष्ण तृतीय के नेतृत्त्व में पुनः राष्ट्रकूटों का आक्रमण हुआ तथा प्रतिहार पराजित हुए। इस विजय में गंगवाड़ी के सामन्त मारसिंह (नरसिंह) ने राष्ट्रकूटरों की सहायता की थी तथा विजय के पश्चात् 'गुर्जरराज' की उपाधि धारण की। महिपाल द्वितीय के सासबाहू अभिलेख से ज्ञात होता है कि कच्छवाहा वज्रदामन ने चन्देल धंग की ओर से ने अन्तक तथा गोपगिरि (ग्वालियर) की विजय की। धंग नै उषारवाह में स्थित युल्ली गांव का दान काशिका (काशी) के भट्ट यशोधर को दिया। सन् 998 ई0 में महमूद गजनवी गजनी की राजगद्दी पर आसीन था। उसने सन् 1000 से सन् 1028 के मध्य भारत पर सत्रह बार आक्रमण किया। सन् 1026 में उसने सोमनाथ के मंदिर पर जो दुर्दान्त आक्रमण किया, उससे हिंदुओं की धार्मिक भावनाएं आहत हुई। उसकी जीत हुई और बगदाद के खलीफा ने महमूद को 'इस्लाम जगत का सितारा घोषित किया। उसने सन् 1027 में जाटों से युद्ध किया, जो उसके जीवन का अंतिम युद्ध था तथा सन् 1030 में उसकी मृत्यु हो गई। उसने भारत के युद्धकाल में लगभग 50,000 हिंदुओं का बेरहमी से कत्ल किया और उसने घोषणा की वह वुतशिकन अर्थात् मूर्तिभंजक इस्लामी है।' महमूद गजनवी के इतिहासकार उल्वी की रचना ''किताब–उल–यामिन'', इतिहासकार फिरदौसी की रचना शाहनामा, इतिहासकार अलबरूनी की रचना ''किताब–उल–हिंद'' या ''त तहकीकाते –हिंद'' एवं अन्य इतिहासकार ''बैहाकी'' और ''फारूखी'' की रचनाओं में इसका उल्लेख मिलता है। गजनवी के अत्याचारों और जुल्मों से गुजरात, राजस्थान व उत्तरी भारत के हिन्दुओं में सर्वाधिक भय व्याप्त था क्योंकि नारियों की अस्मिता खतरे में रहती थी। इस आतंक को गजनवी के बाद मुहम्मद गौरी ने भी अधिक बढ़ावा दिया, मोहम्मद गोरी अत्यंत महत्वकांक्षी एवं धर्मान्ध शासक था। हिंदू ईश्वर से प्रार्थना करता था कि जब–जब धर्म की हानि होती है, दुष्टों का अत्याचार बढ़ता है, ईश्वर अवतार लेते हैं। अतः ''हे ईश्वर हिंदू धर्म संकट में है, अवतार लेकर इसकी रक्षा करो''।

सारांश :-

दसवीं शताब्दी में चतुर्दिक अनेक धार्मिक–सांस्कृतिक संप्रदायों की बाढ़ आ रही थी। जन सामान्य धार्मिक संप्रदायों से आकृष्ट होता था किन्तु उनकी अतिचारिता से उसका मोह टूट जाता था। अनेक संप्रदायों में प्रमुख रूप से शैव, जैन, बौद्ध, नाथ, सिद्ध आदि अलौकिक शक्तियों को जो चमत्कार प्रदर्शन करते थे, उससे जन सामान्य ऊब चुका था। जन–सामान्य ऐसे धर्म की खोज कर रहा था, जिसमें सहजता, सरलता और शांति का भाव हो। भारत के प्राचीनतम धर्म शैवमत में रूद्र और पाशुदत संप्रदाय प्रमुख है। पाशुपत के समानांतर वीर शैव, कापालिक, कालमुख, प्रतिभिज्ञा नाथ एवं सिद्ध संप्रदाय का उत्तरी भारत पर विशेष प्रभाव था, नाथ संप्रदाय के प्रवर्तक आदिनाथ शिव तथा व्यवस्थित रूप प्रदान करने वाले गुरु गोरखनाथ माने जाते हैं। इनकी हठयोग–साधना, आचरण–प्रवणता ने काम शुद्धि पर बहुत जोर दिया, जिसका अनुपालन करने में जन साधारण असमर्थ था। भारत में इन धर्मों का पतनोन्मुखी रूप दिखाई देने लगा था।

ऐसे संक्रमण काल में सन् 1130 (सवत् 1187) में सतुगुरु बाबा सबलदास साहिब ने अपने शिष्य नितानंद के साथ खंडेला रियासत राज्य राजस्थान जयपुर में प्रकट होकर ''सतनामी साध धर्म का मूलाधार किया''। तथा रात्रि सत्संग में सतनाम भी साध वचनामृत से साधों के गुणों को स्थापित किया। तदनंतर साधपुरा आश्रम में नितानंद बाबा साहिब ने 1334 में राजकुमार कायम कुँवर को हिंगलाज देवी का दर्शन करा दिया तो वह राज पाट त्यागकर उनके शिष्य बन गये।[15] उन्होंने छः वर्ष की साधना की और पाँच तत्व– तीन गुणों से परे हो गये। कायम कुँवर सतगुरू स्वरूप में सं0 1348 में रुकनपुर पधारे। इससे पूर्व सं0 1340 से 1345 तक मान गाँव (अलीगढ़) सं० 1346–47 ककौला (अलीगढ़) में साध धर्म का प्रचार कर अलग–अलग बारह बारह गाँवों में साध बनाये, तदनंतर रूकनपुर में सं0 1348–1356 तक साठ गाँवों में साध बनाये। इस प्रकार 84 गाँवों की गुरुगद्दी के रूप में सं० 1356 (सन् 1299ई) को सतनामी साध धर्म मंदिर रूकनपुर (बुलन्दशहर) एवं गुरु गद्दी की स्थापना हुई। आज 19 वें सतगुरू के रूप में सतगुरू बाबा रोहित कुँवर साहिब विराजमान हैं। यह 726 वर्ष पुरानी गुरु गद्दी है, जहाँ विभिन्न प्रांतों, गुजरात, राजस्थान, मध्य–प्रदेश, छत्तीसगढ़, हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, उ०प्र० आदि के लोग प्रति पूर्णिमा गुरु गद्दी की मान्यता के भाव से पधारते हैं।

राष्ट्रीय सम्मेलन के अवसर पर छत्तीसगढ़ की बारह गुरू गदिदयों, भुड़कुड़ा गुरु गद्दी (गाजीपुर), चित्तबाडा गुरु गद्दी (बलिया) बाराबंकी की चार गुरू गदियाँ, प्रमुखतम कोटवा धाम, सतनामी चार बैठकें फरुर्खाबाद इत्यादि के बहुसंख्यक प्रतिनिधियों व गुरूओं का आगमन रहता है। सतनामी धर्म की प्राचीनतम गुरु गद्दी रूकनपुर एवं दिल्ली राजधानी की निकटता के कारण पर इसे राष्ट्रीय स्तर के मंच की मान्यता प्राप्त हैं। ऐतिहासिक प्रमाण है कि रुकनपुर में सं० 1356 (सन् 1299 ई) में जब सतनामी प्रथम गुरु गद्दी की स्थापना हुई। उसी वर्ष परमसंत रामानंद जी का आभिर्भाव हुआ इसका उल्लेख उदय प्रताप सिंह ने अपनी कृति भारतीय साहित्य के निर्माता स्वामी रामानंद में पृष्ठ सं0 9 पर किया है। सतनामी साध धर्म का उद्देश्य है कि परवर्ती संत कबीर, रैदास, पीपा आदि सगुण–निर्गुण को अपने जीवन में साथ लेकर चले हैं। सन्त रामनन्द का व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली हो गया कि 'परवर्ती संत ने जो उनके जीवन में जन्म नहीं ले सके थे, वे भी उन्हें अपना गुरु घोषित करते हैं। उनका व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि उनके नाम की मुहर लगे बिना भक्त कहलाना भी असंभव था। सतनामी साध धर्म निर्गुण साधना एवं गुरु परंपरा के आधार पर संचालित है। इसका अपना दर्शन, आध्यात्मिक क्रियाएँ, योग–साधना, शब्द–वाणी गायन, मंत्र दीक्षा, सात्विक आचरण, आडंबर विहीन धर्माचरण, योग–साधनाओं का अभ्यास, मौन–जप, व्रत, सत्संग, गुरु–उपदेश, सम्मेलन, भंडारा, संत– मनीषियों के प्रवचन से चित्त शुद्ध कराता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. अनुराग सागर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद।
2. अशोक के फूल : हजारी प्रसाद द्विवेदी, चतुर्थ संस्करण, 1955.
3. अमर मूल, लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई, सं० 2011.
4. अगस्त्य संहिताः सं० पं० राम नारायण दास।
5. अथर्ववेद : निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।

6. अनुशीलन : डॉ० राम कुमार वर्मा, प्रथम संस्करण, 1957.
7. आत्मबोध, लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई, सं० 2009.
8. आदि ग्रंथ वा गुरू ग्रंथ साहेब, तरणतारण संस्करण।
9. ईशावास्योपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर।
10. उत्तरी भारत की संत परम्परा आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, भारती भण्डार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण–1972.
11. ऋग्वेद : सं० पं० श्रीराम शर्मा आचार्य, संस्कृति संस्थान, बरेली।
12. ए ग्लासरी ऑफ दि ट्राइब्स ऐंड कास्ट्स एच०ए० रोज।
13. एन आउट लाइन ऑफ रिलीजंस लिटरेचर ऑफ इंडिया : फर्कुहर।
14. कबीर पंथ (साहित्य, दर्शन एवं साधना) डॉ० उमा ठुकराल, हिन्दी बुक सेंटर, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1998.
15. कबीर साधना और साहित्य डॉ० प्रताप सिंह चौहान, ग्रन्थम, रामबाग, कानपुर, संस्करण–1976.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 16–21

कौशल विकास एवं रोजगार में नई शिक्षा नीति (2020) की भूमिका (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ० विक्रम सिंह
असि० प्रोफे०– समाजशास्त्र
एस. डी. एम. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोईवाला (देहरादून)

शिक्षा की अवधारणा का मतलब है, किसी उद्देश्य या लक्ष्य को पूरा करने के लिए किया जाने वाला व्यवस्थित प्रयास, इसका मकसद, किसी व्यक्ति को ज्ञान, कौशल, और समझ प्रदान करना होता है, शिक्षा के ज़रिए व्यक्ति का विकास होता है और वह समाज में बेहतर ढंग से रह पाता है। शिक्षा जीवन के लिए आवश्यक है क्योंकि यह दुनिया को समझने और ज्ञान बढ़ाने में मदद करती है। शिक्षा को सफल जीवन की कुंजी माना जाता है जो व्यक्ति शिक्षित नहीं है उसका कौशल विकास नहीं हो पाता साथ ही उसे रोजगार मिलना मुश्किल होता है, समाज में जो व्यक्ति शिक्षित नहीं हो पाते उन्हें अपने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में विकास की गति के साथ सामंजस्य करना असम्भव सा प्रतीत होने लगता है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का कौशल विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है जिससे उन्हें अपनी बुनियादी जरूरतें पूरी करने में मदद मिलती है। शिक्षा समाज में सामाजिक न्याय, समानता एकता और शक्ति को बढ़ावा देती है। शिक्षा समाज में गरीबी, अशिक्षा, अज्ञानता, अन्धविश्वास और अन्य सामाजिक बुराइयों को दूर करने में मदद करती है। शिक्षा के बिना हमारा जीवन अधूरा लगता है। शिक्षा के बिना हम ज्ञान, समझ और सोचने की क्षमता से वंचित रह जाते हैं।

शिक्षा एक महत्वपूर्ण साधन है जो हर किसी के जीवन में एक महत्वपूर्ण प्रविधि के रूप में कार्य करती है। शिक्षा ही हमें पृथ्वी पर अन्य जीवित प्राणियों से पृथक करती है। यह मनुष्य को इस जगत पर सबसे बुद्धिमान प्राणी बनाती है। यह मनुष्य को सशक्त बनाती है और उन्हें जीवन की चुनौतियों का कुशलतापूर्वक सामना करने के लिए तैयार करती है। यह ज्ञान प्राप्त करने, कौशल विकसित करने, रोजगार प्राप्त करने और नैतिक मूल्यों को आकार देने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में कार्य करती है।

शिक्षा द्वारा हमें नैतिक मूल्यों, समाज सेवा की भावना को समझने में मद्द मिलती है। शिक्षित लोग समाज की समस्याओं के समाधान में अपना योगदान देते हैं, और समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप बदलाव को प्रोत्साहित करते हैं और समाज के उद्धार में योगदान करते हैं। शिक्षा मानव के हर पहलू पर प्रभाव डालती है।

आज के आधुनिक समय में हर किसी के लिए अच्छा जीवन जीने के लिए शिक्षा एक आवश्यक आवश्यकता है। शिक्षा हमें टेक्निकल सिस्टम और सेवाओं का उपयोग करने में सक्षम बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अच्छी तरह से शिक्षित लोग विभिन्न नौकरियॉ कर सकते हैं और अपने जीवन में सफल हो सकते हैं।

29 जुलाई 2020 को कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में नई शिक्षा नीति बनायी गई। यह शिक्षा के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा की गई उत्कृष्ट पहल है। वर्ष 2030 तक इस नीति को पूर्ण रूप से लागू करने की आशा है। शिक्षा नीति (NEP-2020) यह व्यापक नीति है जिसका उद्देश्य देश की शिक्षा प्रणाली में सुधार और आधुनिकीकरण करना है। यह नीति पाठ्यचार्य सुधार, शिक्षण प्रशिक्षण और शिक्षा में प्रौद्योगिकी के एकीकरण सहित कई महत्वपूर्ण परिवर्तन और सुधार पेश करती है। नई शिक्षा नीति 2020 के तहत 2030 तक शिक्षा व्यवस्था निर्धारित की गई है। पाठ्यक्रम को वर्तमान में चल रहे 102 मॉडल के स्थान पर 5,334 के शिक्षा व्यवस्था के आधार पर विभाजित करने का उद्देश्य है। नई शिक्षा नीति 2020 के लिए केन्द्र और राज्य सरकार के निवेश का लक्ष्य भी निर्धारित किया गया। जिससे क्षेत्र में सहयोग के लिए केन्द्र और राज्य सरकारें देश के सकल घरेलू उत्पाद के 6 प्रतिशत के बराबर शिक्षा क्षेत्र में निवेश करेंगे। के० कस्तूरीरंगन समिति अध्यक्ष ने कहा कि ''व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से, हमने अपने देश में व्यापक शैक्षिक परिदृश्य के विभिन्न आयामों को शामिल करने का प्रयास किया है। यह नीति सभी मार्गदर्शक उद्देश्यों जैसे पहुंच, क्षमता, गुणवत्ता, सामर्थ्य और जवाबदेही पर आधारित है। प्री–प्राइमरी से लेकर उच्च शिक्षा तक, हमने इस क्षेत्र को एक निर्बाध निस्तरता के साथ–साथ, व्यापक परिदृश्य से जुड़े अन्य क्षेत्रों को शामिल करते हुए देखा है।

नई शिक्षा नीति 2020 लागू करने के पीछे अनेक उद्देश्य है, जो भारत की शिक्षा व्यवस्था, शिक्षा के ढांचे में सुधार लाता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रमुख उद्देश्य निम्न है :–

- एनईसी की स्थापना।
- शिक्षा में सार्वजनिक निवेश बढ़ाना।
- प्रौद्योगिकी के उपयोग को सुदृढ़ बनाना।
- व्यावसायिक और प्रौढ़ शिक्षा पर अधिक ध्यान देना।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति स्कूल और उच्च शिक्षा में छात्रों की मदद करने के आवश्यक सुधार प्रदान करती है।

उक्त लिखित शिक्षा के उद्देश्य एवं महत्व को ध्यान में रखकर रोजगार एवं कौशल विकास में नई शिक्षा नीति–2020 की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

शोध विधि –

इस शोध पत्र में शोध आलेख द्वितीयक तथ्यों पर आधारित है जिसमें सरकारी रिपोर्ट, गैर–सरकारी रिपोर्ट, इन्टरनेट, शोध आलेख, पत्र–पत्रिकाओं एवं पुस्तक आदि से तथ्य प्राप्त कर विश्लेषण किया गया है जिसके लिए शोध आलेख में वर्णात्मक शोध विधि का प्रयोग किया गया है। यह शोध विधि इस शोध पत्र के लिए उपयुक्त है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. शिक्षा की अवधारणा एवं महत्व के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना।
2. कौशल एवं विकास के अर्थ का विश्लेषण करना।
3. कौशल एवं विकास के महत्व का अध्ययन करना।

4. नई शिक्षा नीति 2020 के उद्देश्यों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना।
5. नई शिक्षा नीति के तहत महिलाओं के कौशल विकास और रोजगार के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना।
6. नई शिक्षा नीति द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के छात्र–छात्राओं को राष्ट्रीय छात्रवृत्ति प्राप्त करने के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना।
7. रोजगार एवं कौशल विकास में सभी जाति, वर्ग के लोगों में नई शिक्षा नीति की भूमिका के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना।

नई शिक्षा नीति 29 जुलाई 2020 का यह मसौदा इसरो के पूर्व अध्यक्ष के० कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में बनायी गयी है। कस्तूरीरंगन द्वारा दिये गये महत्वपूर्ण सुझावों के द्वारा नई शिक्षा नीति 2020 में भारत सरकार ने शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये जो इस शिक्षा नीति 2020 की महत्वपूर्ण विशेषता बनी जिसके माध्यम से वर्तमान में चल रही पुरानी शिक्षा नीति वर्तमान समय में राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय क्षेत्र में शिक्षा के बदलते प्रारूप और प्रतियोगी समीक्षा के सन्दर्भ में होने वाली प्रभावहीनता को समाप्त कराते हुए भारत सरकार ने एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है जो आने वाले समय में मील का पत्थर साबित होगी।

नई शिक्षा नीति 2020 में भारत सरकार ने शिक्षा के क्षेत्र में जो परिवर्तन किये हैं इसका मूल उद्देश्य शिक्षा को एक साधन बनाना हैं जिसे ग्रहण करके देश के बच्चे व युवा मात्र एक साहित्यिक ज्ञान के साथ डिग्री धारक न बनकर अपितु एक ऐसे मस्तिष्क एवं कौशल, कुशल व्यक्तित्व बनकर उभरे जो न मात्र सरकार की तरफ देखकर रोजगार की अभिलाषा रखे वरन वह स्वयं रोजगार सृजक बनकर स्वयं के व समाज के कल्याण के लिए कार्य कर सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत सबसे पहले साक्षरता, बुनियादी शिक्षण, व्यावसायिक कौशल, संख्यात्मक आदि के उत्कृष्ट पाठचर्य का ढ़ांचा एनसीआरटी द्वारा विकसित किया जायेगा। पाठ्यचर्यात्मक ढ़ांचे में बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान के लिए कार्यक्रम, वित्तीय साक्षरता, डिजिटल साक्षरता, व्यावसायिक कौशल, स्वास्थ्य संबधी जागरूकता, शिशु पालन एवं शिक्षा और परिवार कल्याण जैसे महत्वपूर्ण जीवन कौशल कार्यक्रम, स्थानीय रोजगार प्राप्ति को ध्यान में रखते हुए व्यावसायिक कौशल विकास कार्यक्रम, प्रारम्भिक माध्यमिक एवं उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के समकक्ष बुनियादी शिक्षा के लिए कार्यक्रम कला, विज्ञान, तकनीकी संस्कृति, खेल मनोरंजन आदि के अतिरिक्त कौशलों पर अधिक उन्नत सामग्री का निर्माण सतत शिक्षा को ध्यान में रखकर किया जायेगा। भारतीय सामाजिक सरचंना में सरकार सामाजिक, आर्थिक रूप से वंचित लोगों के साथ–साथ ग्रामीण और दूरदराज के आंचलों में रहने वाले शिक्षार्थियों को पुस्तकों तक पहुँच सुनिश्चित करेंगे। जिसके लिए विद्यालय, महाविद्यालय सभी के लिए जिसमें निशक्तजन और विशेष आवश्यकता वाले शिक्षार्थी की आवश्यकता एवं रूचियों को पूरा करने वाली पुस्तकों की समुचित व्यवस्था की जायेगी। पुस्तकों की गुणवत्ता एवं आकर्षण बेहतर बनाने तथा पुस्तकों का मूल्य सभी के खरीद सकने के सामर्थ्य के अन्दर रखने के लिए अच्छी रणनीति बनाने पर बल दिया गया है। पुस्तकों की ऑनलाइन उपलब्धता बेहत्तर करने तथा डिजिटल पुस्तकालय को आर्थिक व्यापक बनाने तथा जीवंत पुस्तकालयों का सफल संचालन करने के लिए यथोचित संख्या में पुस्तकालय स्टाफ की उपलब्धता व्यवस्था का प्रावधान भी शामिल है। इसके अतिरिक्त छात्र–छात्राओं के कौशल विकास हेतु विद्याालयों के पुस्तकालयों को समृद्ध करना, वंचित क्षेत्रों में ग्रामीण पुस्तकालयों एवं पठन कक्षों की

स्थापना करना, भारतीय भाषाओं में पठन सामग्री उपलब्ध कराना एवं बाल पुस्तकालय खोलने की व्यवस्था भी सम्मिलित है।

कौशल एवं विकास का अर्थ ज्ञान, दक्षताओं को प्राप्त करना, प्राप्त ज्ञान को आगे बढ़ाने और परिष्कृत करने की एक सतत और जान–बूझकर की जाने वाली प्रक्रिया है, जिससे व्यक्ति अपने व्यक्तित्व और व्यावसायिक जीवन में प्रभावी ढ़ंग से प्रदर्शन कर सकें। इसमें तकनीकी ज्ञान एवं कौशल (जैसे – मशीनरी का उपयोग एवं संचालन) और व्यावसायिक कौशल (जैसे – संचार) दोनों शामिल है। जिससे यह व्यक्तियों और कार्यबल को बदलती मांग के लिए पूर्ण रूप से तैयार करती है। कौशल विकास आत्मजागरूकता, आत्मनियंत्रण और आत्मविश्वास को बढ़ावा देता है। जो बेहतर मानसिक स्वास्थ्य, मजबूत रिश्तों और शैक्षणिक व व्यावसायिक सफलता में योगदान करता है। कौशल विकास व्यक्तियों, कम्पनियों और अर्थव्यवस्था के लिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह आर्थिक क्षेत्र में उत्पादकता बढ़ाता है, रोजगार एवं योग्यता में सुधार करता है, नवाचार को बढ़ावा देता है। और समग्र सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास में योगदान देता है। यह समाज के सदस्यों को आज के बदलते और प्रतिस्पर्धी कार्यबल के लिए तैयार करता है, व्यक्तियों को व्यक्तिगत और व्यावसायिक लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद करता है और आत्मनिर्भर भारत की नींव तैयार करने में सहायक है।

नई शिक्षा नीति के रोजगार एवं कौशल विकास के आयाम नई शिक्षा नीति 2020 के द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के छात्रों को उनकी योग्यता को प्रोत्साहित करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जायेगी जिसके लिए एक राष्ट्रीय छात्रवृति पोर्टल को विकसित किया जायेगा तथा निजी उच्चतर संस्थान अपने छात्रों को अधिकतर संख्या में फ्रीशिप और छात्रवृत्ति प्रदान करेंगे।

नई शिक्षा नीति के अंत्तर्गत छात्र का कौशल विकास करने के लिए ऐसे पाठ्यक्रमों को भी सम्मिलित किया गया है जिससे वह शिक्षा अर्जित करने के साथ–साथ ऐसा कौशल विकास में भी आगे बढ़ सके। स्नात्तक की उपाधि लेने के साथ–साथ ऐसा कौशल उसके अन्दर विकसित हो सके जिसे वह अपनी जीविका उपार्जन का माध्यम बना सके। नई शिक्षा नीति के अन्तर्गत छात्रों को माध्यमिक स्तर से ही अपनी पसन्द की विदेशी भाषा सीखने का भी अवसर प्रदान किया जायेगा। जिसमें फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश, चीनी जापानी आदि भाषाएं सम्मिलित होगी। जो कि भारतीय समाज के छात्र–छात्राओं का कौशल विकास में वृद्धि होगी और यह प्रयास निश्चित ही भारत को एक वैश्विक पहचान दिलाने का कार्य करेगी।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में माध्यम भाषा, मातृभाषा एवं स्थानीय भाषा के चुनाव पर भी बल दिया गया है जो कम्प्यूटर एवं तकनीकी ज्ञान के लिए भी पूर्णतः विकसित किया जायेगा साथ ही विभिन्न कौशल प्रशिक्षणों को छात्रों में खानापूर्ति नहीं की जायेगी अपितु उन्हें रोजगार एवं स्वरोजगार पाने हेतु निपुण बनाये जायेगा। साथ ही नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में विदेशी विश्वविद्यालय जो टॉप 50 की सूची में हैं वे भारत में अपनी शाखायें खोल सकते हैं जिससे छात्र उसका लाभ उठा सकेंगे।

नई शिक्षा नीति में यह भी कहा गया कि सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित समूहों के छात्र–छात्राओं के लिए मुफ्त छात्रावासों का निर्माण किया जायेगा, जिनमें बालिकाओं की शिक्षा का सुरक्षा का पूरा ध्यान रखा जायेगा। जिससे वे भारतीय समाज की विकास की मुख्यधारा में सम्मिलित हो सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति रोजगारोन्मुखी की ओर कदम बढ़ाते हुए व्यावसायिक शिक्षा की प्रशिक्षण पर जोर देती

है। इस नीति में यह परिकल्पना की गई है कि व्यावसायिक शिक्षा को अगले दशक में चरणबद्ध तरीके से सभी शैक्षणिक संस्थानों में एकीकृत किया जाए। इसके लिए पाठ्क्रम तैयार करने के लिए आईटीआई, पॉलिटेक्निक, स्थानीय उद्योग आदि के साथ सहयोग को प्राथमिकता दी जाए। 12(http://surl.li/kyvwg) जिससे विद्यार्थी यदि कारणबस अपना अध्ययन मध्य में ही छोड़कर जाता है तो उसे अपने रोजगार के लिए किसी भी प्रकार से भटकना न पड़े। विभिन्न असंगठित क्षेत्रों में वह रोजगार के अवसर प्राप्त कर पाए या रोजगार के विकल्प को चुन पाए। समग्र शिक्षा के अन्तर्गत सभी उच्च शिक्षण संस्थानों के विद्यार्थियों को स्थानीय कारखाने, व्यवसायों, कलाकारों, शिल्पकारों आदि के साथ अनुसंधान और इंटर्नशिप के अवसर, दिये जाने चाहिए। इसके साथ ही अपने स्वयं के या अन्य उच्च शिक्षण संस्थानों या अनुसंधान संस्थानों और शोधकर्ताओं के साथ शोध इंटर्नशिप का मौका दिया जाना चाहिए ताकि वे सक्रिय रूप से शिक्षा के व्यावहारिक पक्ष से जुड़ सके और व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त कर सके। कौशल की कमी के विश्लेषण और स्थानीय अवसरों के मानचित्रण के आधार पर व्यावसायिक शिक्षा के लिए फोकस क्षेत्र का चयन किया जाए। मानव संसाधन विकास मंत्रालय इस प्रयास की देख–रेख के लिए व्यावसायिक शिक्षा के एकीकरण के लिए एक राष्ट्रीय समिति का गठन करें जिसमें व्यावसायिक शिक्षा के विशेषज्ञ और विभिन्न मंत्रालयों तथा उद्योगों के प्रतिनिधि शामिल हो। अतः सभी धाराओं के स्नातकों की रोजगार योग्यता और व्यावसायिक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को अस्तित्व में लाया गया और व्यावहारिक और सुधारवादी दृष्टिकोण शिक्षा और रोजगार को एक दूसरे के साथ अधिक करने की दिशा में एक बहुत बड़ा कदम है। 14(http://surl.li/kyvwg)

इस नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति में विकलांग बच्चों के लिए क्रास विकलांगता प्रशिक्षण, संसाधन केन्द्र, आवास सहायक उपकरण, उपयुक्त प्रौद्योगिकी आधारित उपकरण, शिक्षकों का पूर्ण समर्थन एवं प्रारम्भिक से लेकर उच्च शिक्षा तक नियमित रूप से शिक्षा प्रक्रिया में भागीदारी सुनिश्चित करना आदि प्रक्रियाओं को सक्षम बनाने का प्रावधान है। 14(http://surl.li/kyvwg)

नई शिक्षा नीति के तहत महिलाओं के कौशल विकास और रोजगार के लिए भी कई पहल की गयी है, इन पहलों का मकसद महिलाओं का आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाना और उन्हें स्किल्ड वर्क फोर्स में शामिल करना है। नई शिक्षा नीति के तहत महिलाओं के कौशल विकास और रोजगार के लिए की गई पहले निम्न प्रकार से है :–

- कौशल विकास मिशन।
- प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना।
- महिलाओं के लिए विशेष कौशल विकास कार्यक्रम।
- महिलाओं के नेतृत्व वाले स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) को बाजार में पहुँचाने का काम।
- कामकाजी महिलाओं के लिए छात्रावास और क्रेच स्थापित करना।
- कौशल विकास कार्यक्रमों की क्षमता बढ़ाना।

अतः शिक्षा महिलाओं में बेहतर तरीके से निर्णय लेने के लिए आत्मविश्वास पैदा करती है। कौशल विकास और माइक्रोफाइनेस महिलाओं को आर्थिक रूप से स्थिर बना सकते हैं और इसलिए वे समाज में दूसरों पर निर्भर नहीं हो सकती।

निष्कर्ष –

नई शिक्षा नीति किताबों और परीक्षाओं के बारे ही नहीं है, यह जीवन के लिए महत्वपूर्ण व्यावहारिक कौशल बनाने एवं रोजगार एवं स्वरोजगार से जोड़ने हेतु पुल का कार्य करेगी। कौशल निर्माण में नई शिक्षा नीति की भूमिका महत्वपूर्ण है, जो आलोचनात्मक रूप से सोचने, समस्याओं को सुलझाने और प्रभाव ढ़ंग से संवाद करने जैसी जरूरी क्षमताओं के लिए आधार तैयार करेगी। नई शिक्षा नीति कौशल को बढ़ावा देने में एक विशेष भूमिका निभायेगी जो सिर्फ किताबी ज्ञान और बुनियादी पढ़ने और लिखने से कही आगे रहेगी। नई शिक्षा नीति किसी भी विषय को सीखने के व्यावहारिक दृष्टिकोण पर केन्द्रित है, क्योंकि यह अवधारणा को समझाने का एक बेहत्तर तरीका माना जाता है। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति का विजन भारतीय मूल्यों से विकसित शिक्षा प्रणाली है जो सभी को उच्चत्तर गुणवत्ता शिक्षा उपलब्ध कराके और भारत को वैश्विक ज्ञान महाशक्ति बनाकर भारत को एक जीवंत और न्यायसंगत ज्ञान समाज में बदलने के लिए प्रत्यक्ष रूप से योगदान करेगी क्योंकि यह सीखने वाले की आत्म क्षमता, अनुशासन कौशल पर जोर देता है। यह एक बच्चे की अपनी प्रतिभा विकसित करने में मदद करना चाहता है यदि वे जन्मजात प्रतिमान हो। अतः एनईपी 2020 का उद्देश्य केवल संज्ञात्मक समझ न होकर चरित्र निर्माण और इक्कीसवीं शताब्दी के मुख्य कौशल से सुसज्जित करना जिससे समाज के सभी जाति, धर्म एवं वर्ग के लोगों का कौशल विकास एवं रोजगार व स्वरोजगार प्राप्त हो सके जिससे वे दूसरों पर निर्भर न रहे। अंत में सम्पूर्ण अध्ययन करने के पश्चात यह कहा जा सकता है– कि नई शिक्षा नीति रटने वाले विषयों, समय सीमा को पूरा करने और अंक प्राप्त करने से कई अधिक है, क्योंकि यह हमें ज्ञान, कौशल, विकास, आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, रोजगार, एवं स्वरोजगार के साथ–साथ व्यक्तित्व, चरित्र, आदर्शों का निर्माण करेंगी और समाज में एक सकारात्मक भूमिका निभाने में मदद करेगी।

सन्दर्भ सूची :–

1. Kasturirangan Committee Report, Ministry of Human Resource and Development (2019)
2. पांडे के० पी० शिक्षा की सामाजिक नींव में परिप्रेक्ष्य 2010 शिक्षा प्रकाशन, नई दिल्ली भारत।
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन विकास मत्रांलय, भारत सरकार।
4. दृष्टि द विजन (वार्षिक मुद्दे) नई शिक्षा नीति 2020।
5. परिहार प्रेस (2020) ''नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 सम्भावनाएँ एवं चुनौतियां।
6. कुमार प्रकाश : 21वीं सदी की मांग पूरी करेगी नई शिक्षा नीति आउटलुक हिन्दी 24 अगस्त 2020।
7. कुरैन, अजय, चन्द्रमना, बी सुदीप (दिसम्बर 2020) इंपैक्ट ऑफ न्यू एजुकेशन पालिसी 2020 ऑन हायर एजुकेशन।
8. सिंह, अविनाश कुमार (2021) 'नवभारत की नींव' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. सिंह रेनु एवं सिंह नगेन्द्र कुमार (2023) राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कौशल विकास, नेशनल एजुकेशन पॉलिसी 2020।
10. मिश्र आलोक कुमार (2023) मनुस्मृति में निहित आत्मनिर्भरता एवं स्वावलम्बन शिक्षा की नयी शिक्षा नीति–2020 में समालोचनात्मक अध्ययन, नेशनल एजुकेशनल पॉलिसी।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 22-26

Exploring Technology-Driven Commerce Synergies and Guest Loyalty in Budget Hotels

Dr. Rajesh Kumar
Assistant Professor, Department of Commerce,
Chaudhary Ranbir Singh University, Jind, Haryana
Mr. Pankaj
Assistant Professor, Department of Hotel and Tourism Management
Chaudhary Ranbir Singh University, Jind, Haryana.

Abstract :

This study examines how technology-driven commerce platforms such as Online Travel Agencies (OTAs), Customer Relationship Management (CRM) systems, and digital payment solutions influence guest satisfaction and loyalty in budget hotels. As digitalization reshapes the hospitality landscape, budget properties are leveraging these tools to enhance efficiency and personalization. The research highlights that technology integration not only simplifies operations but also builds trust and repeat patronage.

Keywords : Budget Hotel ,Revenue Management, OTA , Booking , Front office.

Introduction :

Technology has revolutionized the hospitality landscape, transforming how budget hotels connect with and serve their guests. The integration of digital platforms like OTAs, CRM systems, and online payments has redefined convenience, trust, and guest engagement. In this competitive era, technology is not a luxury but a necessity for sustaining guest loyalty and operational excellence. Budget hotels are increasingly using data-driven tools to personalize experiences and strengthen long-term relationships. This study explores how technology-driven commerce synergies are reshaping guest satisfaction and loyalty in the evolving budget hotel sector.

History of Budget Hotels :

The concept of budget hotels originated in the 1950s when global travel became more accessible to the middle class, creating a demand for affordable yet comfortable lodging. Early pioneers such as

Holiday Inn (USA) and Premier Inn (UK) introduced standardized rooms with limited services to meet the needs of cost-conscious travelers (Buttle, 1996). During the 1970s–1990s, the model expanded across Europe and Asia as air travel increased and business tourism grew rapidly. In India, the organized budget hotel sector began to take shape in the early 2000s with the emergence of Ginger Hotels, followed by Treebo and OYO Rooms, which revolutionized affordable hospitality through standardization and technology (Samy, 2016; KPMG, 2025).

Initially, loyalty among guests in budget hotels was driven mainly by low prices and convenience, not by brand connection or emotional engagement. However, as competition intensified, hotels began focusing on service quality, cleanliness, and reliability to retain repeat guests (Rahimi et al., 2017). With the rise of Online Travel Agencies (OTAs) and Customer Relationship Management (CRM) systems in the 2010s, The budget hotel concept in India gained momentum in the early 2000s with the launch of Ginger Hotels by the Tata Group, offering standardized, affordable stays for business and leisure travelers. Soon after, brands like Lemon Tree Hotels and Sarovar Portico entered the mid-scale segment, bridging comfort and value. The real transformation came after 2013, when tech-based aggregators such as OYO Rooms, Treebo Hotels, and FabHotels revolutionized the market through digital booking and brand standardization. These chains made quality accommodation accessible to India's growing middle-class and millennial travelers. Today, budget hotel brands dominate the domestic hospitality sector, combining technology, affordability, and consistent guest experience (KPMG, 2025).

LITERATURE REVIEW :

Recent studies emphasize that OTAs have become essential intermediaries in the hotel business, improving visibility and occupancy levels for budget properties. O'Connor et al. (2025) observed that OTA participation positively affects a hotel's financial performance by increasing RevPAR.

However, excessive dependence on OTAs often reduces direct bookings and compresses profit margins. Balanced partnerships, data sharing, and dynamic pricing models are key to optimizing OTA benefits. Thus, the literature suggests that effective OTA management enhances both sales performance and customer reach.

Digital platforms have significantly influenced how guests perceive service quality and satisfaction. Phillips et al. (2017) found that online reviews and manager responses directly impact booking intentions and trust. In the budget hotel segment, even small service inconsistencies can lead to negative reviews, emphasizing the role of digital feedback management. Positive e-reputation not only drives sales but also strengthens guest confidence.

Therefore, digital transparency has become a cornerstone of modern guest satisfaction

trategies.

CRM systems are increasingly recognized as strategic tools to build guest loyalty in competitive markets. Wu and Lu (2012) highlighted that CRM integration allows hotels to personalize offers, predict guest behavior, and increase retention rates. Rahimi et al. (2017) concluded that CRM enhances service consistency by aligning marketing, sales, and operations. In budget hotels, CRM bridges the emotional gap caused by low-price positioning through personalized engagement. As a result, CRM adoption fosters sustainable customer loyalty beyond transactional interactions.

The rise of mobile and online payments has transformed hotel operations and guest convenience. Wang et al. (2025) noted that secure, instant, and transparent payment options elevate guest satisfaction levels. In India, platforms like UPI, Paytm, and Google Pay have become trusted tools for both domestic and international travelers. Seamless payment integration reduces checkin delays and improves customer confidence. Hence, cashless transactions are now a critical component of digital hospitality excellence.

Current Scenario in Budgets Hotels :

The hospitality industry is undergoing a paradigm shift driven by the growing influence of technology and digital commerce. Over the past decade, budget hotels—once considered limitedservice accommodations—have embraced technology as a strategic tool to enhance guest experiences, operational efficiency, and long-term profitability. In the contemporary era, the convergence of digital platforms such as Online Travel Agencies (OTAs), Customer Relationship Management (CRM) systems, and online payment solutions has transformed how hotels interact with guests and manage business operations. These innovations are not merely convenience tools but have evolved into essential components of competitive advantage, shaping customer perceptions and loyalty in the budget segment.

In India, the post-pandemic resurgence of domestic travel and the rapid rise of price-sensitive millennial and Gen Z travelers have fueled the expansion of budget hotels. These travelers demand personalization, speed, and seamless digital experiences from booking to checkout. As a result, hotels are increasingly leveraging technology-driven commerce synergies—integrating online distribution, data analytics, and mobile-based services—to deliver consistent and valuedriven experiences. According to recent reports by KPMG (2025) and STR Global, over 60% of Indian budget hotels now depend on OTAs for bookings, while more than half have adopted cloud-based management systems. This digital momentum signifies a deep transformation from manual operations toward automated, data-informed decision-making.

The collaboration between hotels and OTAs has revolutionized the visibility and reach of smaller

properties, allowing them to compete on a national and global scale. However, heavy reliance on OTAs introduces challenges such as high commission rates, limited control over pricing, and brand dilution. Consequently, budget hotels are seeking to balance third-party partnerships with direct relationship-building strategies through CRM tools. By collecting and analyzing guest data, CRM systems enable hoteliers to design personalized communication, reward programs, and post-stay engagement—strengthening emotional connection and repeat patronage. The integration of CRM data with OTA analytics thus creates a synergistic ecosystem that enhances both guest satisfaction and loyalty.

Moreover, the increasing penetration of digital payment systems such as UPI, Paytm, and Google Pay has further simplified the guest journey, promoting transparency, trust, and convenience. These payment innovations, coupled with automated check-in technologies, have minimized friction in service delivery while ensuring contactless, secure transactions. Such advancements resonate deeply with modern travelers who prioritize time efficiency, digital access, and safety. Hence, the digitalization of hotel commerce has shifted from being a back-end operational function to a front-line driver of guest delight.

In today's competitive market, where customer expectations evolve rapidly, technology acts as both a differentiator and a unifier. For budget hotels in smaller cities like Jind, Haryana, technology adoption is bridging the gap between affordability and quality service. The present scenario underscores the growing necessity for hotels to not only adopt digital tools but to integrate them cohesively for maximum impact. The interplay between technology-driven commerce and guest loyalty represents a new dimension of hospitality excellence—where data intelligence, personalization, and service automation converge to create memorable guest experiences. This study, therefore, aims to explore how the effective use of OTAs, CRM systems, and digital payments collectively influence guest satisfaction, operational success, and brand loyalty in the dynamic landscape of budget hotels.

Conclusion :

The study of technology-driven commerce synergies reveals that the future of budget hospitality depends on digital adaptability and guest-centric innovation. The integration of OTAs, CRM systems, and digital payment solutions has evolved from being operational add-ons to strategic assets that directly influence guest loyalty and satisfaction. Hotels that effectively synchronize these technologies can achieve stronger brand equity, improved service efficiency, and long-term profitability Ultimately, technology and loyalty are no longer parallel goals but interconnected pillars of success. The synergy between data intelligence, personalized service, and seamless digital interaction is reshaping hospitality into a more efficient, customer-driven ecosystem. For India's rapidly evolving budget hotel sector,

the path forward lies in embracing technology not just as an operational necessity but as a catalyst for memorable guest experiences and enduring relationships.

References :

1. Ma, S., Chen, W., & Zhang, Y. (2025). Agent or merchant? Hotel–OTA selling formats and power structures. Tourism Management, 98, 104791.
2. O'Connor, P., Murphy, J., & Frew, A. J. (2025). OTA participation and hotel financial performance. Cornell Hospitality Quarterly, 66(2), 157–170.
3. Rahimi, R., Köseoglu, M. A., Ersoy, A., & Okumus, F. (2017). CRM research in tourism and hospitality: A review. International Journal of Contemporary Hospitality Management, 29(1), Sayfuddin, A. T. M., Tan, K. P. S., & Lim, C. (2021). Signaling and reputational effects of customer ratings. International Journal of Hospitality Management, 94, 102866.
4. Wang, R., Li, D., & Zhang, X. (2025). A systematic review of payment methods in hospitality and tourism. Financial Innovation, 11(1), 1–31
5. Wu, S.-I., & Lu, C.-L. (2012). The relationship between CRM and RM performance in hotels: Evidence from Taiwan. International Journal of Hospitality Management, 31(3), 936–945.
6. Cobanoglu, C., Yang, W., & Shao, B. (2015). Are consumers ready for mobile payment? FIU Hospitality Review, 33(1), 1–20. https://digitalcommons.fiu.edu/hospitalityreview
7. Han, S. H., Kim, Y., & Lee, J. (2021). Mobile technology adoption among hotels: Managerial implications and customer satisfaction outcomes. Journal of Hospitality and Tourism
8. Technology, 12(4), 676–699. https://doi.org/10.1108/JHTT-06-2020-0154
9. Ma, S., Chen, W., & Zhang, Y. (2025). Agent or merchant? Hotel–OTA selling formats and power structures. Tourism Management, 98, 104791.
10. https://doi.org/10.1016/j.tourman.2023.104791
11. O'Connor, P., Murphy, J., & Frew, A. J. (2025). OTA participation and hotel financial performance : A contemporary analysis. Cornell Hospitality Quarterly, 66(2), 157–170.
12. https://doi.org/10.1177/1938965524123456

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 27–33

(m, n) - DIFFERENT TYPES OF IDEAL OF SEMIRINGS

Sakshi
Research Scholor

Abstract: This paper presents the development of the theory of ((m, n))-semirings, extending the fundamental concepts of semiring structures. In particular, it focuses on the study and characterization of ideals and primary ideals within ((m, n))-semirings, exploring their properties and relationships to enhance the understanding of this generalized algebraic framework.

Keywords: (m, n)-semiring, primary ideal, subtractive ideal

1. Introduction to (m, n)-semirings

The notion of a semiring was introduced by Vandiver in 1934 [19]. Semirings are studied by many authors in various directions. One of the main directions of such studies is investigation of properties of ideals, for example see [3, 4, 5, 8, 10, 18]. Crombez [6] in 1972 generalized rings and named it as (n, m)-rings. It was further studied by Crombez and Timm [7], Leeson and Butson [11, 12], Dudek [9], Mirvakili and Davvaz [13, 14, 15]. Alam, Rao and B. Davvaz [1] proposed a new class of mathematical structures called (m, n)-semirings (which generalize the usual semirings) and described their basic properties. They gave the definition of partial ordering and initiated the generalization of congruence and homomorphism for (m, n)-semirings. Also, see , Pop [16], Pop and Lauran [17], Asadi et al. [2].

Let R be a non-empty set and $f : R^m \longrightarrow R$ be a map, that is, f is an m-ary operation. A nonempty set R with an m-ary operation f is called an m-ary groupoid and is denoted by (R, f). We use the following general convention. The sequence $x_i, x_{i+1}, \ldots, x_m$ is denoted by x_i^m where $1 \leq i \leq j \leq m$. For all $1 \leq i \leq j \leq m$, the following term $f(x_1, x_2, \ldots, x_i, y_{i+1}, \ldots, y_j, z_{j+1}, \ldots, z_m)$ is represented as $f(x_1^i, y_{i+1}^j, z_{j+1}^m)$. In the case when $y_{i+1} = y_{i+2} = \ldots = y_j = y$, the term is expressed as $f(x_1^i, y^{(j-i)}, z_{j+1}^m)$. An m-ary groupoid (R, f) is called an m-ary semigroup if f is associative, that is, if $f(x_1^{i-1}, f(x_{i+1}^{m+i-1}), x_{m+i}^{2m-1}) = f(x_1^{j-1}, f(x_{j+1}^{m+j-1}), x_{m+j}^{2m-1})$, for all $x_1, x_2, \ldots, x_{2m-1} \in R$ where $1 \leq i \leq j \leq m$. We say f is commutative if

$$f(x_1, x_2, \ldots, x_m) = f(x_{\eta(1)}, x_{\eta(2)}, \ldots, x_{\eta(m)})$$

for every permutation η of $\{1, 2, \ldots, m\}$, $x_1, x_2, \ldots, x_m \in R$. Let R be a non-empty set and f, g be m-ary and n-ary operations on R, respectively. The n-ary operation g is distributive with respect to the m-ary operation f if

$$g(x_1^{i-1}, f(a_1^m), x_{i+1}^n) = f(g(x_1^{i-1}, a_1, x_{i+1}^n), \ldots, g(x_1^{i-1}, a_m, x_{i+1}^n)),$$

for every a_1^m, x_1^n in R and $1 \leq i \leq n$. An m-ary semigroup (R, f) is called a semi-abelian or $(1, m)$-commutative if

$$f(x,\underbrace{a,\ldots,a}_{m-2},y)=f(y,\underbrace{a,\ldots,a}_{m-2},x).$$

for all $a, x, y \in R$.

Definition 1.1. Let R be a non-empty set and f, g be m-ary and n-ary operations on R, respectively. Then (R, f, g) is called an (m, n)-*semiring* if the following conditions hold:

(1) (R, f) is an m-ary semigroup;
(2) (R, g) is an n-ary semigroup;
(3) The n-ary operation g is distributive with respect to the m-ary operation f.

One can find many examples of (m, n)-semirings in [1].

Let (R, f, g) be an (m, n)-semiring. Then, m-ary semigroup (R, f) has an identity element 0 if

$$x=f(\underbrace{0,\ldots,0}_{i-1},x,\underbrace{0,\ldots,0}_{m-i}),$$

for all $x \in R$ and $1 \leq i \leq m$. We call 0 as an identity element of (m, n)-semiring (R, f, g). Similarly, n-ary semigroup (R, g) has an identity element 1 if

$$y=g(\underbrace{1,\ldots,1}_{j-1},y,\underbrace{1,\ldots,1}_{n-j}),$$

for all $y \in R$ and $1 \leq j \leq n$.

2. Ideals of (m, n)-semirings

In this paper f is an addition m-ary operation and g is a multiplication n-ary operation. Definition 2.1.

Let I be a non-empty subset of an (m, n)-semiring (R, f, g) and $1 \leq i \leq n$.

We call I an i-ideal of R if

(1) I is a subsemigroup of m-ary semigroup (R, f);
(2) For every $a_1, a_2, \ldots, a_n \in R$, $g(a_1, a_2, \ldots, a_{i-1}, I, a_{i+1}, \ldots, a_n) \subseteq I$.

I is called an ideal of R if for every $1 \leq i \leq n$, I is an i-ideal.

Lemma 2.1. If $A_1, \ldots, A_n$ are ideals of (m, n)-semiring (S, f, g), then

(1) $A_1 \cap \ldots \cap A_n$ is an ideal of (S, f, g);
(2) $f(A_1, \ldots, A_m)$ is an ideal of (S, f, g);
(3) $g(A_1, \ldots, A_n)$ is an ideal of (S, f, g).

Definition 2.2.

(1) A proper ideal I of an (m, n)-semiring (R, f, g) is said to be *prime* if for any ideals $A_1, \ldots, A_n$ of R, $g(A_1, \ldots, A_n) \subseteq I$ implies $A_i \subseteq I$ for some $1 \leq i \leq n$.
(2) A proper ideal I of an (m, n)-semiring (R, f, g) is said to be *weakly prime* if for any ideals $A_1, \ldots, A_n$ of R, $\{0\} \neq g(A_1, \ldots, A_n) \subseteq I$ implies $A_i \subseteq I$ for some $1 \leq i \leq n$.
(3) An ideal I of an (m, n)-semiring (R, f, g) is called *subtractive* or *k-ideal* if for any elements $a_1, \ldots, a_{n-1} \in I$ and $a_n \in R$, $g(a_1, \ldots, a_n) \in I$, then $a_n \in I$.

Theorem 2.1. *An ideal of an (m, n)-semiring (S, f, g) is weakly prime if and only if for any ideals $A_1, A_2, \ldots, A_n$ of S, we have:*

either $g(A_1, A_2, \ldots, A_n) = A_1$ *or* $\ldots$ *or* $g(A_1, A_2, \ldots, A_n) = A_n$ *or* $g(A_1, A_2, \ldots, A_n) = 0$.

Proof. Suppose that every ideal of S is weakly prime. Let $A_1, A_2, \ldots, A_n$ be ideals of S. If $g(A_1, A_2, \ldots, A_n) \neq S$, then $g(A_1, A_2, \ldots, A_n)$ is weakly prime. If $\{0\} \neq g(A_1, A_2, \ldots, A_n) \subseteq g(A_1, A_2, \ldots, A_n)$, then we have $A_i \subseteq g(A_1, A_2, \ldots, A_n)$ for some i (since $g(A_1, A_2, \ldots, A_n)$ is weakly prime ideal of S). Hence, $A_i = g(A_1, A_2, \ldots, A_n)$ for some i. If $g(A_1, A_2, \ldots, A_n) = S$, then $A_1 = A_2 = \ldots = A_n = S$.

Conversely, let I be any proper ideal of S and suppose that $\{0\} \neq g(A_1, A_2, \ldots, A_n) \subseteq I$ for ideals $A_1, A_2, \ldots, A_n$ of S. Then, we have $A_i = g(A_1, A_2, \ldots, A_n) \subseteq I$ for some i.

Lemma 2.2. Let P be a subtractive ideal of (m, n)-semiring (S, f, g). Let P be a weakly prime ideal but not a prime ideal of S. If $g(a_1, a_2, \ldots, a_n) = 0$ for some $a_1, a_2, \ldots, a_n \in P$, then $g(a_1, P^{(n-1)}) = g(P, a_2, P^{(n-2)}) - \ldots - g(P^{(n-1)}, a_n) - \{0\}$.

Proof. Suppose that $g(a_1, p^{(n-1)}) \neq 0$ for some $p_1, p_2, \ldots, p_{n-1} \in P$. Then, we obtain

$$0 \neq g(a_1, f(g(1, a_2, a_3, \ldots, a_n), (g(1, p_1, p_2, \ldots, p_{n-1}))^{(m-1)}), 1^{(n-2)}) \in P.$$

Since P is a weakly prime ideal of S, it follows that $a_1 \in P$ or

$$f(g(1, a_2, a_3, \ldots, a_n), (g(1, p_1, p_2, \ldots, p_{n-1}))^{(m-1)}) \in P,$$

that is, $a_i \in P$ for some $1 \leq i \leq n$, a contradiction. Therefore, $g(a_1, P^{(n-1)}) = \{0\}$. Similarly, we can show that $g(P, a_2, P^{(n-2)}) = \ldots = g(P^{(n-1)}, a_n) = \{0\}$.

Theorem 2.2. *Let P be a subtractive ideal of an (m, n)-semiring (S, f, g). If P is a weekly prime ideal but not prime, then $P^n = \{0\}$.*

Proof. Suppose that $g(p_1, p_2, \ldots, p_n) \neq 0$ for some $p_1, p_2, \ldots, p_n \in P$ and $g(a_1, a_2, \ldots, a_n) = 0$ for some $a_1, a_2, \ldots, a_n \notin P$, where P is not a prime ideal of S. Then, by Lemma 2.5,

$$0 \neq g(f(a_1, p_1^{(m-1)}), f(p_2, a_2, p_2^{(m-2)}), \ldots, f(a_n, p_n^{(m-1)})) \in P.$$

Hence, either $f(a_1, p_1^{(m-1)}) \in P$ or $f(p_2, a_2, p_2^{(m-2)}) \in P$ or $\ldots$ or $f(a_n, p_n^{(m-1)}) \in P$, and so $a_i \in P$ for some $1 \leq i \leq n$, a contradiction. Hence, $P^n = \{0\}$.

Corollary 2.1. *Let P be a weakly prime ideal of (m, n)-semiring (S, f, g). If P is not a prime ideal of S, then $P \subseteq Nil\ S$.*

A subtractive ideal in a commutative (m, n)-semiring (S, f, g), satisfying $P^n = \{0\}$ may not be weakly prime.

Lemma 2.3. Let h be a homomorphism from (m, n)-semiring (S_1, f, g) onto (m, n)-semiring (S_2, f', g'). Then, each of the following statements is true:

(1) If I is an ideal (subtractive ideal) in S_1, then $h(I)$ is an ideal (subtractive ideal) in S_2.

(2) If J is an ideal (subtractive ideal) in S_2, then $h^{-1}(J)$ is an ideal (subtractive ideal) in S_1.

Theorem 2.3. *If $h : S_1 \longrightarrow S_2$ is a homomorphism of (m, n)-semirings and P is a prime ideal of S_2, then $h^{-1}(P)$ is a prime ideal of S_1.*

Proof. By the previous lemma $h^{-1}(P)$ is an ideal of (S_1, f, g). Let $g(a_1, a_2, \ldots, a_n) \in h^{-1}(P)$. Then, $h(g(a_1, a_2, \ldots, a_n)) \in P$ implies $g'(h(a_1), h(a_2), \ldots, h(a_n)) \in P$. Since P is a prime ideal of S_2, it follows that $h(a_i) \in P$ for some $1 \leq i \leq n$. Thus, $a_i \in h^{-1}(P)$ for some $1 \leq i \leq n$. Hence, $h^{-1}(P)$ is a prime ideal of S_1.

Theorem 2.4. *Let (S, f, g) be an (m, n)-semiring such that $S = h a_1, a_2, \ldots, a_k i$ for $k = max\{n, m\}$ is a finitely generated ideal of S. Then, each proper k-ideal A of S is contained in a maximal k-ideal of S.*

Proof. Let β be the set of all k-ideals B of S satisfying $A \subseteq B \subset S$, partially ordered by inclusion. Consider a chain $\{B_i \mid i \in I\}$ in β. One easily checks that $B = B_i$ is a k-ideal of S, because if $a_1, a_2, \ldots, a_{n-1}, f(a_1, a_2, \ldots, a_n) \in B$ then as defined B, there is $i_1, i_2, \ldots, i_{n-1}, j \in I$ such that $a_1 \in B_{i_1}, a_2 \in B_{i_2}, \ldots,$

$a_{n-1} \subset B_{i_{n-1}}$, $f(a_1, a_2, \ldots, a_n) \subset B_j$, as B_i partially ordered by inclusion, then $B_j \subseteq B_{i_1}$or $B_{i_1} \subseteq B_j$. Without loss of generality assuming that $B_{i_1}, B_{i_2}, \ldots, B_{i_{n-1}} \subseteq B_j$, then $a_1, a_2, \ldots, a_{n-1}$, $f(a_1, a_2, \ldots, a_n) \subset B_j$ because B_j is a k-ideal. Therefore, $a_n \in B_j$ and $B_j \subseteq B$; so $a_n \in B$ which means B is a k-ideal, and $S = ha_1, a_2, \ldots, a_ki$ implies B 6= S, and hence $B \in \beta$. By Zorn's lemma, β has a maximal element as we were to show.

Corollary 2.2. *Let (S, f, g) be an (m, n)-semiring with identity* 1. *Then, each proper k-ideal of S is contained in a maximal k-ideal of S.*

Proof. The proof is immediate by $S = h1i$.

Lemma 2.4. If A, B are two k-ideals of an (m, n)-semiring (S, f, g), then $A \cap B$ is a k-ideal.

Proof. Suppose that A, B are two k-ideals of S . Then, $A \cap B$ is an ideal. Now, let $x \in S$ such that $f(a_1^{m-1}, x) \in A \cap B$ for some $a_1, a_2, \ldots, a_{m-1} \in A \cap B$. Then $a_1, a_2, \ldots, a_{m-1} \in A$, $a_1, a_2, \ldots, a_{m-1} \in B$, $f(a_1^{m-1}, x) \in B$ and $f(a_1^{m-1}, x) \in A$. So, $x \in A$ and $x \in B$ as A, B are k-ideals. Hence, $x \in A \cap B$.

Definition 2.3. An equivalence relation ρ on an (m, n)-semiring (S, f, g) is called a *congruence* on S if for any $a_1, \ldots, a_m, b_1, \ldots, b_n \in S$ such that $a\rho b$, then

(1) $f(a, a^{2m})\rho f(b, a^{2m})$;
(2) $g(a, b_2^n)\rho g(b, b_2^n)$;
(3) $g(b_2^n, a)\rho g(b_2^n, b)$.

Let ρ be a congruence on an (m, n)-semiring (S, f, g). Then, the congruence class of $x \in S$ is denoted by $x\rho$ and is defined by $x\rho = \{y \in S \mid (x, y) \in \rho\}$. The set of all congruence classes of S is denoted by S/ρ. Now, we define two operations on S/ρ as follows:

$$f(a_1\rho, \ldots, a_m\rho) = f(a_1^m)\rho \text{ and } g(b_1\rho, \ldots, b_n\rho) = g(b_1^n)\rho,$$

for all $a_1, \ldots, a_m, b_1, \ldots, b_n \in S$.

Theorem 2.5. *Let (S, f, g) be an (m, n)-semiring. Then, $(S/\rho, f, g)$ is an (m, n)-semiring under the above operations.*

Proof. Suppose that $a_1\rho, a_2\rho, \ldots, a_m\rho$ are elements of S/ρ. Then, for every permutation η at $\{1, 2, \ldots, m\}$,

$$\begin{aligned} f(a_1\rho, a_2\rho, \ldots, a_m\rho) &= f(a_1, \ldots, a_m)\rho = f(a_{\eta(1)}, a_{\eta(2)}, \ldots, a_{\eta(m)})\rho \\ &= f(a_{\eta(1)}\rho, a_{\eta(2)}\rho, \ldots, a_{\eta(m)}\rho). \end{aligned}$$

50, S/ρ is commutative under addition.

For each $1 \leq i \leq j \leq m$, we have

$$\begin{aligned} &f(a_1\rho, a_2\rho, \ldots, a_{i-1}\rho, f(a_i\rho, a_{i+1}\rho, \ldots, a_{m+i-1}\rho), a_{m+i}\rho, a_{m+i+1}\rho, a_{2m-1}\rho) \\ &\quad = f(a_1\rho, a_2\rho, \ldots, a_{j-1}\rho, f(a_j\rho, a_{j+1}\rho, \ldots, a_{m+j-1}\rho), a_{m+j}\rho, a_{m+j+1}\rho, \ldots, a_{2m-1}\rho). \end{aligned}$$

So, addition is associative on S/ρ. Similarly, multiplication is associative.

Finally, we have the distributive law,

$$\begin{aligned} &g(a_1\rho, a_2\rho, \ldots, a_{i-1}\rho, f(b_1\rho, b_2\rho, \ldots, b_m\rho), a_{i+1}\rho, a_{i+2}\rho, \ldots, a_n\rho) \\ &= f(g(a_1\rho, a_2\rho, \ldots, a_{i-1}\rho, b_1\rho, a_{i+1}\rho, \ldots, a_n\rho), g(a_1\rho, a_2\rho, \ldots, a_{i-1}\rho, b_2\rho, a_{i+1}\rho, \ldots, a_n\rho), \ldots, g(a_1\rho, \\ &a_2\rho, \ldots, a_{i-1}\rho, b_n\rho, a_{i+1}\rho, \ldots, a_n\rho)). \end{aligned}$$

Therefore, S/ρ is an (m, n)-semiring.

Lemma 2.5. Let (R, f, g) be an (m, n)-semiring with $1 \neq 0$. Then, R has at least one k-maximal ideal.

Proof. Since $\{0\}$ is a proper k-ideal of R, it follows that the set Δ of all proper k-ideals of R is not empty. Of course, the relation of inclusion, $\subseteq$, is a partial order on Δ, and by using Zorn's lemma, a maximal k-ideal of R is just a maximal member of the partially ordered set $(\Delta, \subseteq)$.

3. Primary ideal

Definition 3.1. Let (R, f, g) be an (m, n)-semiring and I be an ideal of R. The union of all ideals B such that $B^s \subseteq I$ for some positive integer l where $s = l(2n - 1)$ or $s = l(2n + 1)$ is an ideal of R and is called the *radical* of I which we shall denote by $N(I)$.

Definition 3.2. Let (R, f, g) be an (m, n)-semiring and I an ideal of R. The set of all elements $x \in R$ such that $x^s \in I$ for some positive integer l where $s = l(2n - 1)$ or $s = l(2n + 1)$ is said to be the *nil-radical* of I which we shall denote by $P(I)$.

If I is 0 in the previous definitions we use the symbols N and P for the radicals (radical and nil-radical) of 0.

From the above preliminary discussion and definitions, we introduce the following definition.

Definition 3.3. A proper ideal I of an (m, n)-semiring (R, f, g) is called *i-N -primary* provided $a_1, a_2, \ldots, a_n \in R$ with $g(a_1 \ldots a_n) \in I$ implies $a_i \in I$ or $j \neq i$ and $j \in \{1,2,\ldots,n\}, a_j \in N(I)$.

The ideal I is said to be *N -primary* provided it is i-N -primary for all $i \in \{1, 2, \ldots, n\}$.

If we substitute the symbol P for N in the definition, we have the definitions of i-P -primary and P -primary.

Remark 3.1. It is clear that prime ideal in an (m, n)-semiring (R, f, g) is N -primary, but the converse is not true in general (similarly, for P -primary).

Definition 3.4. A proper ideal I of an (m, n)-semiring (R, f, g) is called *weakly i-N -primary* provided $a_1, a_2, \ldots, a_n \in R$ with $0 \neq g(a_1, a_2, \ldots, a_n) \in I$ implies $a_i \in I$ or $j \neq i$ and $j \in \{1, 2, \ldots, n\}$, $a_j \in N(I)$.

The ideal I is called *weakly N -primary* provided it is weakly i-N -primary for all $i \in \{1, 2, \ldots, n\}$.

If we substitute the symbol P for N in the definition, we have the definitions of weakly i-P -primary and weakly P -primary.

Remark 3.2. It is easy to see N -primary ideal is weakly N -primary, but the converse is not true, because 0 is always weakly N -primary ideal (by definition) but not necessarily N -primary. So, weakly N -primary ideal need not to be N -primary (similarly, for P -primary ideal).

Remark 3.3. It is clear that every weakly prime ideal of an (m, n)-semiring (R, f, g) is weakly N -primary, but the converse is not true in general (similarly, for weakly P -primary ideal).

Lemma 3.1. Let I be a weakly P -primary subtractive ideal of an (m, n)-semiring (R, f, g). If I is not a P -primary ideal, then $I^n = \{g(a_1, a_2, \ldots, a_n) \mid a_1, a_2, \ldots, a_n \in I\} = 0$.

Proof. Suppose that $I^n \neq 0$. We show that I is a P -primary ideal of R. Suppose that $g(a_1, a_2, \ldots, a_n) \in I$ where $a_1, a_2, \ldots, a_n \in R$. If $g(a_1, a_2, \ldots, a_n) \neq 0$, then there exist $i \in \{1, 2, \ldots, n\}$, $a_i \in I$ or $a_i \in P(I)$. Assume that $g(a_1, a_2, \ldots, a_n) = 0$. If $0 \neq g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-1}, I) \subseteq I$, then there is an element d_n of I such that $g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-1}, d_n) \neq 0$. Hence,

$$0 \neq g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-1}, d_n) = g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-1}, f(d_n, a^{(n^{m-1})}) \in I.$$

Then, either $a_i \in I$ for $i \in \{1, 2, \ldots, n - 1\}$ or $f(d_n, a^{(n^{m-1})}) \in P(I)$. Thus, $a_i \in I$ for $i \in \{1, 2, \ldots, n - 1\}$ or $a_n \in P(I)$. Therefore, I is a P -primary ideal.

Suppose that $g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-1}, I) = 0$. If $g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-2}, I, a_n) \neq 0$, then there exists $d_{n-1} \in I$ such that $g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-2}, d_{n-1}, a_n) \neq 0$. Now, we have

$$0 \neq g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-2}, f(a_{n-1}, d_{n-1}), a_n) \in I.$$

So, we obtain $a_i \in I$ for $i \in \{1, 2, \ldots, n-2, n\}$ or $a_{n-1} \in P(I)$, and hence I is a P-primary ideal. Thus, we assume that

$$g(a_1, a_2, \ldots, a_{n-2}, I, a_n) = 0.$$

Also, we can prove that $g(I, a_2, \ldots, a_{n-2}, a_{n-1}, a_n) = 0$. Since $I^n \neq 0$, it follows that there are elements $c_1, c_2, \ldots, c_n \in I$ such that $g(c_1, c_2, \ldots, c_n) \neq 0$. Then, $0 \neq g(c_1, c_2, \ldots, c_n) = g(f(a^{(1^{m-1})}, c_1), f(a^{(2^{m-1})}, c_2), \ldots, f(a^{(n^{m-1})}, c_n) \in I$, so either $a_i \in I$ or $a_i \in P(I)$ for $i \in \{1, 2, \ldots, n\}$, and hence I is a P-primary ideal.

Theorem 3.1. *Let I be a proper subtractive ideal of an (m, n)-semiring (R, f, g). If for ideals $A_1, A_2, \ldots, A_n$ of R with $0 \neq g(A_1, A_2, \ldots, A_n) \subseteq I$ implies $A_i \subseteq I$ or for some positive integer k, $s = k(2n-1)$ or $s = k(2n+1)$, $A_i^s = \{a_i^s \in R \mid a_i \in A_i\} \subseteq I$, then I is a weakly P-primary ideal of R.*

Proof. Suppose that I is a proper subtractive ideal of an (m, n)-semiring (R, f, g) and let $0 \neq g(a_1, a_2, \ldots a_n) \in I$, where $a_1, a_2, \ldots, a_n \in R$. Then, $0 \neq g(ha_1i, ha_2i, \ldots, ha_ni) \subseteq I$. Hence, $ha_ii \subseteq I$ or $ha_i^si \subseteq I$ for some positive integer k, where $s = k(2n-1)$ or $s = k(2n+1)$. So, $a_i \subset I$ or $a_i^s \subset I$ for some positive integer k, where $s = k(2n-1)$ or $s = k(2n+1)$. This implies that $a_i \in P(I)$. Therefore, I is a weakly P-primary ideal of R.

Lemma 3.2. If I is a weakly P-primary subtractive ideal that is not a P-primary over a semiring R, then $P(I) = P$.

Proof. Assume that I is a weakly P-primary subtractive ideal that is not a P-primary over an (m, n)-semiring (R, f, g). Then, it is clear that $P \subseteq P(I)$. Now, by Lemma 3.5, $I^n = 0$ gives $I \subseteq P$, and hence $P(I) \subseteq P$. Therefore, $P(I) = P$.

4. Conclusions

Semirings constitute a natural generalization of rings with broad applications in the mathematical foundation. The class of (m, n)-semirings is a generalization of semirings.

For future research, one may consider (m, n)-semihyperrings and related algebraic structures and study their properties.

References:

[1] Alam, S., Rao, S., Davvaz, B., (2013), (m, n)-semirings and a generalized fault-tolerance algebra of systems, J. Appl. Math, Art. ID 482391, 10p.

[2] Asadi, A., Ameri, R., Norouzi, M., (2021), A categorical connection between categories (m, n)-hyperrings and (m, n)-ring via the fundamental relation Γ, Kragujevac J. Math., 45(3), pp.361-377.

[3] Ashour, A., AbedRabou, S.S.A., Hamoda, M., (2012), On weakly primary subtractive ideals over noncom- mutative semirings, Int. J. Contemp. Math. Sci., 32(7), pp.1519-1527.

[4] Bourne, S., (1952), On the homomorphism theorem for semirings, Proc. Nat. Acad. Sci. U.S.A., 38(2), pp.118-119.

[5] Chinram, R., (2008), A note on quasi-ideals in Γ-semirings, Int. Math. Fourm, 3(26), pp.1253-1259.

[6] Crombez, G., (1972), On (n, m)-rings, Abh. Math. Sem. Univ. Hamburg, 37, pp.180-199.

[7] Crombez, G., Timm, J., (1972), On (n, m)-quotient rings, Abh. Math. Sem. Univ. Hamburg, 37, pp.200-203.

[8] Dubey, M.K., (2012), Prime and weakly prime ideals in semirings, Quasigroups and Related Systems, 20, pp.197-202.

[9] Dudek, W.A., (1981), On the divisibility theory in (m, n)-rings, Demonstratio Math., 14(1), pp.19-32.

[10] Jagatap, R.D., Pawar, Y. S., (2009), Quasi-ideals and minimal quasi-ideals in Γ-semirings, Novi Sad J. Math., 39(2), pp.79-87.

[11] Leeson, J.J., Butson, A. T., (1980), Equationally complete (m, n)-rings, Algebra Universalis, 11(1), pp.28-41.

[12] Leeson, J.J., Butson, A. T., (1980), On the general theory of (m, n)-rings, Algebra Universalis, 11(1), pp.4276.
[13] Mirvakili, S., Davvaz, B., (2010), Relations on Krasner (m, n)-hyperrings, European J. Combin., 31, pp.790802.
[14] Mirvakili, S., Davvaz, B., (2015), Constructions of (m, n)-hyperrings, Mat. Vesnik, 67(1), pp.1-16.
[15] Mirvakili, S., Davvaz, B., (2015), Characterization of additive (m, n)-semihyperrings, Kyungpook Math. J., 55, pp.515-530.
[16] Pop, A., (2014), Some properties of idempotents of (n, m)-semirings, Creat. Math. Inform., 23(2) pp.235-242.
[17] Pop, A., Lauran, M., (2018), A note on the morphism theorems for (n, m)-semirings, Creat. Math. Inform., 27(1), pp.79-88.
[18] Rao, M.M., (1995), Γ-semirings. I, Southeast Asian Bull. Math., 19(1), pp.49-54.
[19] Vandiver, H.S., (1934), Note on a simple type of algebra in which cancellation law of addition does not hold, Bull. Am. Math. Soc., 40, pp.914920.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 34-38

विकास की अवधारणा और आदिवासी

डॉ. अंशु यादव, सहायक प्रोफेसर
डॉ. रवि कुमार गोंड, सहायक प्रोफेसर
हिंदी विभाग, हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

शोध सार :

आदिवासी समाज का इतिहास प्राचीन है। वन, जंगल, पहाड़ और गुफाओं में रहते हुये अपनी पहचान और संस्कृति को बचाये रखने में वह आज भी सफल हैं। विकास की अवधारणा के बीच वर्तमान में आदिवासी के समक्ष जल, जंगल, जमीन और विस्थापन की समस्या उठ खड़ी हुई है। भूमंडलीकरण के दबाव में विकास की मुख्यधारा उलझ चुकी है। आये दिन विकास के नये–नये पैमाने जीवन के मानक बनते जा रहे है। तकनीकी युग एक तरफ आदिवासी को विकास की मुख्यधारा में लाने की बात करता है तो वहीं दूसरी ओर उसके समक्ष कई मुश्किलें भी पैदा कर रहा है। आदिवासी के लिए शिक्षा, चिकित्सा, रोजगार, रोटी, कपड़ा और मकान तो बुनियादी सवाल है ही साथ ही सभ्यता और संस्कृति के टकराहट का भी प्रश्न वाजिब है। संविधान में उनके अधिकारों की बात की गई है लेकिन जमीनी हकीकत कुछ और ही है। जब तक सरकार की नीतियाँ उनके हित में जमीन से नहीं जुड़ेंगी तब तक उनकी समस्याओं का समाधान नहीं हो सकता है।

बीज शब्द :

विकास की अवधारणा, विस्थापन, जल, जंगल, जमीन का प्रश्न, सभ्यता, संस्कृति, विकसित आधुनिक उद्योग, शहरीकरण व्यवस्था।

प्रस्तावना :

एक लोकतांत्रिक समाज अपने नागरिकों को विकास के समान अवसर प्रदान करने की गारंटी देता है क्योंकि लोकतांत्रिक समाज का मुख्य आधार है– एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए सरकार जनता के कल्याणार्थ अनेक प्रकार की विकास योजनाएं बनाती है। जैसे खनिजों से भरे जंगलों में खाने, स्टील प्लांट, पेट्रोलियम शोधक प्लांट, फयरिंग रेंज, बड़ी औद्योगिक परियोजनाएं, बड़े बांध, सिंचाई योजनाएं, सेज, गैस पाइप लाइने, बड़ी–बड़ी बिजली परियोजनाएं विदेशी नमूनों के आधार पर साफ और खूबसूरत महानगरों की रचना। निस्संदेह इन सभी योजनाओं का उद्देश्य लोगों के हितों और उनके जीवन की बेहतरी बताया जाता है। ''हम सभी जानते है कि स्वतंत्रता के बाद से सभी सरकारों का उद्देश्य रहा है– ब्रिटिश शासकों द्वारा छोड़ी गई दरिद्र, पिछड़ी हुई औपनिवेशिक समाज व्यवस्था का एक समृद्ध, स्वतंत्र, विकसित आधुनिक औद्योगिक शहरी समाज व्यवस्था में रूपांतरण।''[1] विकास का यह रास्ता मिश्रित अर्थव्यवस्था वाली

निर्देशात्मक योजना की अभिधारणा के अनुसार बनाया गया था। विकास की इस प्रक्रिया के तहत ही कुछ ऐसे कदम उठाये गए जिनका उद्देश्य शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करना था। पंचवर्षीय योजनाएं इसी दिशा में किया गया एक सार्थक सकारात्मक प्रयास था।

लेकिन यहां एक गंभीर प्रश्न जन्म लेता है कि जिस उद्देश्य के तहत इन विकास योजनाओं का निर्माण किया गया और उन्हें अमली जामा पहनाया गया क्या वे समस्त उद्देश्य पूर्ण हो पा रहे हैं? विकास 'किसके लिए और 'किस कीमत' पर होना चाहिए? विकास की प्राथमिकताएं क्या–क्या होनी चाहिए? विकास का सही ढ़ाँचा क्या होना चाहिए। ये सारे प्रश्न विकास के तमाम प्रयासों पर प्रश्नचिन्ह लगा देते हैं। कारण स्पष्ट है कि भारतीय अर्थव्यवस्था का बढ़ता ग्राफ, शेयर बाजार के सूचकांक में लगातार उछाल जिनकी बदौलत कायम है, वे लगातार दरिद्र हो रहे हैं। समाज में लगातार हाशिए पर धकेले जा रहे हैं और विकास की दौड़ में पीछे छूट रहे है। इसलिए सरकार का यह दायित्व है कि वह अपनी विकास परियोजनाओं को लागू करने से पहले यह सुनिश्चित कर ले कि इन विकास परियोजनाओं से आम आदमी लाभान्वित होता है। चूंकि "विकास परिवर्तन की एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक देश के अधिकाधिक नागरिक उच्च भौतिक रहन–सहन के स्तर, स्वस्थ एंव दीर्घ जीवन और अधिक शिक्षा का भोग करते है तथा उन्हें अपने रहन–सहन के तौर–तरीकों पर अत्यधिक नियंत्रण के साथ–साथ इस संबंध में उन्हें चयन की सुविधा भी प्राप्त होती है। दूसरे शब्दों में, सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक संरचना, संस्थाओं और सेवाओं की निरंतरता बढ़ती हुई ऐसी क्षमता को विकास कहते है जिसमें संसाधनों का उपयोग इस प्रकार किया जाता है ताकि जीवन स्तर में अनुकूल अपेक्षित परिवर्तन किया जा सके। यह परिवर्तन समाज के सभी वर्गो, मानव–समूहो के जीवन में स्पष्ट नजर आता है।''[2] इस प्रकार विकास की अवधारणा एकांगी न होकर समाज के सभी वर्गो, मानव समूहों को साथ लेकर चलने वाली होनी चाहिए। साथ ही, संसाधनों के न्यायोचित वितरण पर आधारित होनी चाहिए।

लेकिन पिछले कुछ दशकों में विशेषकर आदिवासी समाज के विकास की तीव्र गति ने हाशिये के लोगों को और अधिक हाशिये पर धकेल दिया है। ब्रिटिश सरकार ने जिस मानसिकता के तहत आदिवासी समाज को देखा समझा था, वही दृष्टिकोण आजाद भारत का भी बना हुआ है। तरह–तरह के कानून बनाकर जल, जंगल एवं जमीन पर से उनके अधिकारों को संकुचित किया गया है जो आज भी जारी है। विकास के नाम पर आदिवासियों की बस्तियां उजाड़ी जाती है। ''भारत के आदिवासी जन–समूहों का विस्थापन व पलायन तो ऐसे सदियों से ही जारी है परंतु इधर विकास के नाम पर बरती गई नीतियों के कारण वे केवल अपकी जमीनों, संसाधनों व गाँवों से ही बेदखल नहीं हुए बल्कि उनके मूल्यों नैतिक अवधारणाओ, जीवन शैलियों, एवं संस्कृति से भी उनके विस्थापन की प्रक्रिया तेज हो गई।"[3] यह विडंबना है कि जिस विकास से आदिवासियों को कोई लाभ नहीं होता उसके लिए सर्वाधिक बलिदान उन्हीं से लिया जाता है और विकास की बलि चाहते है निरीह आदिवासी।

विश्लेषण :

हमारा समाज पिछले कुछ दशकों से बदलाव की जिन परिस्थितियों से गुजर रहा है उनका बेहतरीन उल्लेख है– स्त्री, दलित और आदिवासी से संबंधित साहित्य में। नर्मदा बचाओं आंदोलन से जुड़ी मेधा पाटकर विस्थापन की अवस्था से गुजर रहे आदिवासी समाज की इन्हीं चिंताओं को लेकर पिछले कुछ दशकों से

आंदोलनरत हैं, वह परिवर्तन और विकास की इन्हीं असमान प्रक्रियाओं की देन है।

आदिवासी जीवन, समाज और संस्कृति का अस्तित्व आज वैश्वीकरण, उदारीकरण, निजीकरण और उपभोक्तावादी माहौल में संकटग्रस्त और चुनौतीपूर्ण हो गया है। उनकी सामूहिक और समतामूलक जीवन–शैली छिन्न–भिन्न होती जा रही है। ऐसे माहौल में, ऐसी स्थिति में, आदिवासियों के पारंपरिक–सांस्कृतिक मूल्यों के अस्तित्व का प्रश्न खड़ा हो गया है। विकास के नये मॉडल आदिवासी समाज के जल, जंगल और जमीन के भरपूर दोहन पर आधारित हैं जिसके कारण आदिवासीयों के विस्थापन की गंभीर समस्याएं पैदा हो रही है। विस्थापन और बेदखली की मार आदिवासी समाज की नियति बन गई है। आदिवासी अपने ही घर में बेगाने हो रहे हैं। विकास के नाम पर उनके हिस्से सिर्फ विनाश आ रहा है। इसकी शुरूआत विकास–योजनाओं के सरकारी ऐलान के साथ हो जाती है। जंगल, जमीन, नदी–झरने और पर्वत आदिवासियों की पारंपरिक मिल्कियत रहे हैं जो उनसे लगातार छिन रहे हैं। जहां वे अल्पसंख्यक हैं, वहां वे अरसे से इन ज्यादतियों को झेलते आ रहे हैं। दुखद यह है कि झारखंड में भी इसी नाइंसाफी को जी रहे हैं। यहां भी उन्हें लगातार हाशिये पर धकेला जा रहा है, जबकि इन राज्यों का गठन ही यहां के मूल निवासियों के विकास के उद्देश्य से किया गया था।

स्पष्ट है कि तथाकथित विकास के दौर में जिस तरह इन प्राकृतिक संसाधनों, ग्रामीण जीवन शैली और व्यवस्था को तहस–नहस, छिन्न–भिन्न किया जा रहा है, उससे स्थिति बद से बदतर होती गयी है। एक और तो पारिस्थितिक असंतुलन जैसी गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं तो दूसरी ओर अपने जल, जंगल और जमीन से विस्थापित आदिवासी समाज अपने आपको बहुत असुरक्षित अनुभव कर रहा है। उसे अपनी 'अस्मिता संकट में दिखाई दे रही है। उसके नैसर्गिक अधिकार को भी खत्म किया जा रहा है जिससे अनेक समस्याएं जन्म ले रही है। विस्थापन की मार झेल रहे इन आदिवासियों के लिए नौबत भूखे मरने और 'राजा से रंक होने जैसी है क्योंकि इन विस्थापितों को पुनर्वास और मुआवजे का हक भी नहीं मिलता। दरअसल मुआवजे और पुनर्वास के लिए जरूरी होता है जमीन का अपने नाम पट्टा लेकिन ज्यादातर आदिवासियों के पास यह कागजी दस्तावेज नहीं होता। जंगल और पहाड़ों पर नैसर्गिक अधिकार रखने वाले इन भूमि–पुत्रों को विस्थापन के बाद का एक टुकड़ा और मुआवजे का एक पैसा तक नहीं मिलता। आदिवासी समाज की इन जटिल स्थितियों का साहित्यिक रूपांतरण एक चुनौती भरा कार्य रहा है क्योंकि आदिवासी समाज की जो स्थिति है वह तात्कालिकता और रचनाशीलता के मध्य एक द्वंद्व को जमीन जन्म देती है। द्वंद्व की यह समस्या साहित्य की अन्य विधाओं के साथ–साथ कहानी में भी बेहतरीन तरीके से अभिव्यक्त हो रही है। हरिराम मीणा, रमणिका गुप्ता, अवधेश प्रीत, संजीव और अनंतकुमार सिंह जैसे कथाकारों की कहानियां आदिवासी समाज की समस्याओं, उनके स्वप्नों एवं संघर्षों की दास्तान है।

एक ओर विकास के लिए घने जंगलों के साफ किया जा रहा है, तो दूसरी ओर पहाड़ों और गांवों में बड़े–बड़े बाँध बनाए जा रहे है। बांधों के निमार्ण की प्रक्रिया में बहुत सारे गांव डूब जाते हैं। इसी तरह एक गांव के डूबने की कहानी है 'बुडान'। जिसमें केवल एक गांव ही नही डूबता बल्कि उसके साथ गांव के समस्त रीति–रिवाज, राग–द्वेष, सुख–दुख के अनुभव भी डूब जाते हैं। ''विकास के नाम पर बांध बनाए जाते हैं, गांव उजाड़ दिए जाते हैं। बांध के अथाह पानी में गांव बुड़ता है। इस बुड़ान के गर्व में ढेर सारी खट्टी–मीठी स्मृतियाँ बूड़ जाती हैं। मसलन बच्चों का बचपना और स्कूल, शैतानियां और प्यार, बड़ों का काइयांपन, घर–द्वार खेती बाड़ी

गांव के जायज–नाजायज दंड–विधान और दादी मां का बिछावन।"[4] इन्हीं डूबी हुई स्मृतियों और उनकी वेदना की दास्तान इस कहानी में सुनाई देती है। 'बुड़ान' की निम्नलिखित पंक्तियां विस्थापित समाज की जिन विडंबनाओं की तरफ संकेत करती है, वहां विकास की तस्वीर तो दिखाई पड़ती है, पर जिंदगी के नाम पर अब वहां सिर्फ जल है– मनुष्य तो लुप्त ही हो गया है, जिंदगी की तलाश में गई डोंगरी की विशाल परछाई भी कहीं विलीन हो गई है: ''जब वे वापस लौट रहे थे तब उनकी लंबी परछाईयां पानी पर थिरक रही थीं। कुछ देर बाद किनारे में फैली हुई उजाड़–काली और पथरीली डांगरी की विशाल परछाई में विलीन हो गई। धीरे–धीरे डोंगरी की परछाई भी लुप्त हो गई। अब वहां सिर्फ जल था। शांत और बंधा हुआ जल। जाहिर है, यहां सिर्फ परछाईयां ही लुप्त नहीं हुई हैं, बल्कि एक समाज का पूरा वजूद ही लुप्त हो चुका है, जिसकी खोज में गन्नू और चोई एक छोटी–सी डोंगी और पतवार लेकर जाते हैं।"[5]

संक्रमणकालीन स्थितियाँ व्यक्ति अथवा समाज को हाशिए पर ढकेलने में बड़ी भूमिका निभाती है। व्यक्ति अथवा समाज अपनी जमीन, अपनी मिट्टी से अलग होकर कहीं और बसने के लिए मजबूर हो जाता है। संक्रमणकालीन स्थितियों का सबसे अधिक खामियाजा स्त्रियों को भुगतना पड़ता है। उन पर दोहरी मार पड़ती है– पहला–स्त्री होने के कारण और दूसरी आदिवासी स्त्री होने के कारण। 'शनीचरी' कहानी में महाश्वेता देवी ने विकास के लिए जंगल से बाहर मुख्यधारा में गए आदिवासी समाज की स्त्रियों की संक्रमणकालीन स्थितियों एवं दुर्दशा का चित्रण किया है। 'शनीचरी' कहानी की उन अमानवीय स्थितियों की गवाह हैं जिनका सामना आदिवासी समाज को करना पड़ता है। अपने मूल स्थान से दूर होकर किसी नये समाज का हिस्सा बनना कितना पीड़ादायक है। ऐसा समाज जो बोली बानी में एकदम अलग है। क्या इन लोगों के लिए अपने समाज, अपनी संस्कृति, भाषा और भूगोल से दूर होने की यातना भयावह नहीं होती होगी?

वनभूमि आदिवासियों की सामाजिक सांस्कृतिक पहचान और आजीविका का आधार होती है। इससे अलग होना ये स्वीकार नहीं कर पाते। इनके लिए ''भूमिहीन होने का अर्थ अभावग्रस्त होना है और आदिवासी समाज में इसका एक ही अर्थ होता है– मनुष्य को मनुष्यता के आधार से वंचित कर देना।"[6] भूमि का मुआवजा नाम मात्र को मिल पाता है। सुदूर जंगलों में रहने के कारण सरकारी अधिकारी इलाके में विकास का जायजा लेने जाते ही नहीं हैं। बड़े नेता भी सिर्फ वोट के दिनों में ही जाते हैं। ''आज यह सभी स्वीकार करते है कि गाँव के छोटे किसान तथा आदिवासी शासन द्वारा निर्धारित विकास का लाभ लेने में असमर्थ हैं। इस तरह जमीन से बेदखल आदिवसी अपने को जीवित रखने की कोशिश में शहरों में मजदूरी करता है, रिक्शा चलाता है। शहरी होटलों में झूठे कप प्लेट धोता हैं। दूसरी तरफ शहरी आदिवासी परिवार की महिलाएँ नवनिर्मित तथा भव्य कालोनियों में नौकरानी के बतौर अपने आपको स्थापित कर चुकी है।"[7] इस प्रकार आजीविका का संकट, अनिश्चितता और सांस्कृतिक पहचान खत्म होने का डर इनके सामने हमेशा बना रहता है।

भालचंद्र जोशी की कहानी 'राजा गया दिल्ली' पुनर्वास और मुआवजे के नाम पर प्रशासन द्वारा की जा रही ज्यादतियों को सामने लाती है। यह कहानी एक ओर तो विकास योजनाओं की वास्तविकता को सामने लाती है और दूसरी ओर वह प्रशासन और राजनेताओं द्वारा गरीब भोले–भाले किसान–आदिवासियों के साथ किये जाने वाले दुर्व्यवहार को। जिस जनता की 'वोट' पाकर राजनेता तमाम तरह की सुविधाएँ और अधिकार हासिल करते हैं, उसी जनता को हफ्तों–हफ्तों पुनर्वास और मुआवजें की राशि पाने के लिए उनके पीछे दौड़ना पड़ता है। "कुल

मिलाकर कई दिनों, हफ्तों, महीनों तक जगन और कालू तहसील कार्यालय और पुनर्वास के दफ्तर के बीच टप्पे खाते रहे तो गाँव के स्कूल–मास्टर ने सलाह दी कि वे सीधे राजधानी जाकर विभाग के मंत्री से मिल लें, तत्काल निबटारा हो जाएगा,एक दिन में।"[8] परिणाम वही होता है जो जगन और कालू के साथ हुआ। मंत्री जी ने कोरा आशवासन देकर दोनों को वापस लौटा दिया। दोनों बिल्कुल निराश और हताश वापस लौट गए थे, जानते थे मंत्री जी ने उनसे झूठ बोला है।

निष्कर्ष :

हम यह देखते हैं कि आदिवासियों की बुनियादी समस्या अपने अस्तित्व और अस्मिता की खोज करना और उसकी लगातार रक्षा करना है। इसीलिए सामाजिक और कलात्मक दोनों स्तरों पर सता प्रतिष्ठान के विविध रूपों से संघर्षशीलता अनिवार्य हो जाती है क्योंकि मनुष्य की मुक्ति की प्रक्रिया अंततः अमानवीय सत्ता के विरूद्ध संघर्ष के साथ जुड़ी हुई है। अपनी अस्मिता और मुक्ति की भावना के प्रति निरंतर जागरूक हो रहे आदिवासी के संघर्ष, उनके शोषण और प्रतिवाद के स्वर को समकालीन हिन्दी कहानी बखूबी अभिव्यक्त कर रही है। आदिवासी समाज को जीवन के प्रत्येक मोड़ पर 'बाहरी लोगों' के उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता है। अंततः रचनाकार यदि वह सच्चे अर्थों में प्रतिबद्ध है तो आदिवासियों के बहुस्तरीय संघर्ष, को जरूर चित्रित करता है और समकालीन कहानी अपने इस प्रयास में निःसंदेह सफल हो रही है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची :

1. भारत का विकास मार्ग– डी. आर. देसाई, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृष्ठ–28, सं.–1989
2. सामाजिक मानवशास्त्र, वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ–186–187, सं.–1994
3. आदिवासी : विकास से विस्थापन– रमणिका गुप्ता, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संपादकीय से, सं.–2008
4. बुडान– पूरन हार्डी, कथा में गाँव, संपा–सुभाषचंद्र कुशवाहा, संवाद प्रकाशन, मेरठ, पृष्ठ–280, सं.–2006
5. वही, पृष्ठ–288
6. आदिवासी समाज और शिक्षा– रामशरण जोशी (अनुवादक–अरुण प्रकाश), ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली, सं. –1996
7. मानव और संस्कृति– श्यामचरण दुबे, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं.–1998
8. राजा गया दिल्ली– भालचंद्र जोशी, वसुधा–56–57, जन.–जून–2003, भोपाल।

ई–मेल anshuyadav@hrc.du.ac.in

मो. 9212647276

ई–मेल ravigoan86@gmail.com

मो. 7807111737

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 39–51

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके सामाजिक आर्थिक स्थिति के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन

सोनी कुमारी, शोधार्थी
डॉ जयप्रकाश सिंह, सह–आचार्य
नेताजी सुभाष विश्वविद्यालय, जमशेदपुर, झारखंड।

सार :

यह अध्ययन माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक आर्थिक स्थिति के प्रभाव का विश्लेषण करता है।इस शोध का उद्देश्य यह पता लगाना है कि विभिन्न सामाजिक को आर्थिक पृष्ठभूमि वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में क्या अंतर होता है। इसके लिए शोधार्थी ने 100 विद्यार्थियों पर अध्ययन किया जिनका चयन यादृच्छिक पद्धति से किया गया। विद्यार्थियों की वार्षिक परीक्षा के अंक को उपलब्धि का मानक माना गया तथा सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति प्रश्नावली से मापी गई। आंकड़ों का विश्लेषण औसत मानक विचलन एवं इनोवा द्वारा किया गया। परिणाम से यह स्पष्ट होता है कि उच्च सामाजिक आर्थिक स्थिति वाले विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि निम्न स्थिति वाले विद्यार्थियों को अपेक्षा अधिक होती है इसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है।

मुख्य बिंदु :

माध्यमिक स्तर, शैक्षिक उपलब्धि,सामाजिक स्थिति,आर्थिक स्थिति।

प्रस्तावना :

शिक्षा किसी भी समाज के विकास का मूल आधार होता है। शिक्षा मानव जीवन का आधार स्तंभ होता है जो न केवल व्यक्ति के बौद्धिक और नैतिक विकास में सहायक होता है

बल्कि समाज और राष्ट्र की प्रगति में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। शैक्षिक उपलब्धि किसी भी विद्यार्थी की परिश्रम, उसकी योग्यता और क्षमता का प्रतीक माना जाता है। यह उपलब्धि विद्यार्थीयों के व्यक्तिगत प्रयास का ही परिणाम नहीं बल्कि इसमें कई बाहरी की भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उन कारकों में से सामाजिक और आर्थिक स्थिति प्रमुख कारक है, जो विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करते हैं। सामाजिक स्थिति में जाति और आर्थिक स्थिति पारिवारिक आय शामिल होते हैं।

जैसा कि हम जानते हैं हमारे भारत देश में विविधतापूर्ण सामाजिक एवं आर्थिक स्तर के लोग रहते हैं। समाज के कुछ वर्गों के पास पर्याप्त संसाधन सुविधा और अवसर उपलब्ध होते हैं जबकि कुछ वर्गों को मूलभूत आवश्यकताओं के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है।

माध्यमिक स्तर (कक्षा 9) विद्यार्थियों के जीवन का एक अत्यंत संवेदनशील और निर्णायक चरण होता है। इस स्तर पर उनकी शैक्षिक उपलब्धियां के भविष्य के मार्ग को निर्धारित करती है। इस स्तर में विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाले कारक यदि विपरीत प्रभाव डालते हैं तो उनके प्रदर्शन में भी बाधा उत्पन्न सकती है।

इस संदर्भ में इस अध्ययन से यह समझने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमियों से आने वाले माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में क्या अंतर है।

साहित्य समीक्षा :

कुमार एवं सिंह (2017)-- अध्ययन में इन्होंने बताया कि सामाजिक स्तर भी शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करता है। अनुसूचित जाति और जनजाति के विद्यार्थी की उपलब्धि सामान्य वर्ग के विद्यार्थियों की तुलना में कम पाई गई ।इसका मुख्य कारण सामाजिक भेदभाव, शिक्षा के प्रति अभिभावकों की उदासीनता और अवसरों की कमी बताया गया

खालिक एट अल 2016 ने "माध्यमिक स्तर पर सामाजिक आर्थिक स्थिति और छात्रों की उपलब्धि स्कोर: एक सहसंबंधीय अध्ययन" का अध्ययन किया। परिणाम से पता चला कि माता-पिता की आय और छात्रों की उपलब्धि स्कोर, माता-पिता के शैक्षिक स्तर और छात्रों की उपलब्धि स्कोर, माता-पिता के व्यवसाय और छात्रों की शैक्षिक स्कोर के मध्य सकारात्मक संबंध पाया गया है।

शोध समस्या का कथन :

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि का सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन।

उद्देश्य :

- माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके सामाजिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन।
- माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके आर्थिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना :

Ho1- आदमी का कर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं उनके सामाजिक वर्गों के मध्य अंतर सार्थक नहीं है।

Ho2- माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं उनके आर्थिक स्थिति के मध्य अंतर सार्थक नहीं है।

शोध परिसीमन :

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने अपने शोध कार्य को सीमित समय, श्रम एवं पूंजी को ध्यान में रखते हुए झारखंड राज्य के अंतर्गत पूर्वी सीमा जिला के माध्यमिक विद्यालयों के जैक बोर्ड के कक्षा 9 के छात्र तक ही सीमित किया गया है।

शोध विधि :

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा वर्णनात्मक शोध विधि की सर्वेक्षण प्रविधि का प्रयोग किया गया है।

न्यायदर्श :

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने न्यायदर्श के उद्देश्य से झारखंड राज्य के अंतर्गत पूर्वी सिंहभूम जिले के माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत जैक बोर्ड की कक्षा 9 के कुल 100 विद्यार्थियों को चयनित किया है।

शोध न्याय- दर्शन विधि :

यादृच्छिक नमूनाकरण।

उपकरण :

इस शोध में शोधार्थी ने शैक्षिक उपलब्धि को मापने के लिए विद्यालय की वार्षिक परीक्षा के अंक का उपयोग किया है। सामाजिक आर्थिक स्थिति जानने के लिए प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकीय विधियां :

तालिका 1: विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि और सामाजिक स्थिति

प्रस्तुत शोध कार्य में आंकड़ों के विश्लेषण के लिए शोधार्थी ने प्रसारण विश्लेषण का प्रयोग किया है।

सामाजिक समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
सामान्य वर्ग	67	243.48	60.04
अन्य पिछड़ा वर्ग	13	245.92	68.75
अनुसूचित जाति	5	197	45.56
अनुसूचित जनजाति	15	219.4	62.31
कुल	100	226.45	

तालिका # 1

उपरोक्त तालिका का उपयोग विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि और उनके सामाजिक वर्गों के मध्य अंतर ज्ञात करने के लिए किया गया और जो चारों वर्गों के माध्य और मानक विचलन को दर्शाती है। 67 सामान्य, 13 अन्य पिछड़ा वर्ग, 5 अनुसूचित जाति तथा 15 अनुसूचित जनजाति है। सामान्य वर्ग का माध्य 243.48 तथा मानक विचलन 60.04, अन्य पिछड़ा वर्ग का माध्य 245.92 तथा मानक विचलन 68.75, अनुसूचित जाति का माध्य 197 तथा मानक विचलन 45.56, अनुसूचित जनजाति का माध्य 219. 4 तथा मानक विचलन 62.45 प्राप्त हुआ।

एनोवा सारांश तालिका

Source	DF	SS	MS	F-Stat	P-Value
Between Groups	3	29437.61	9812.54	2.64	0.05
Within Groups	96	357271.59	3721.58		
Total	99	386709.2			

- F-statistic = 2.64
- P-value = 0.05
- DF (Between) = 3, DF (Within) = 96

व्याख्या (Interpretation)

अध्ययन में प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने के लिए शोधार्थी ने प्रसारण परीक्षण का प्रयोग किया विश्लेषण के द्वारा f अनुपात का मान 2.64तथा p का मान 0.05 प्राप्त हुआ। परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि सामाजिक स्थिति के अनुसार विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में आंशिक रूप से महत्वपूर्ण अंतर पाया गया है।

यानी, यह संभावना (p = 0.05) है कि समूहों के बीच देखे गए अंतर सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

अतः शून्य परिकल्पना को आंशिक रूप से अस्वीकार किया जाता है। शोधार्थी द्वारा तैयार की गई शून्य परिकल्पना सामाजिक वर्गों के आधार पर विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के मध्य अंतर सार्थक नहीं है "आंशिक रूप से अस्वीकार किया जाता है। आजकल जातीयता से परे विद्यालयों में सभी सामाजिक वर्गों को लगभग समान शैक्षिक अवसर, संसाधन उपलब्ध कराए जा रहे जिससे शैक्षिक उपलब्धता में अंतर में कमी आ सकती है। शिक्षा में सफलता का आधार ज्यादातर व्यक्तिगत परिश्रम अध्ययन में रुचि और अभिप्रेरणा पर निर्भर करती है।

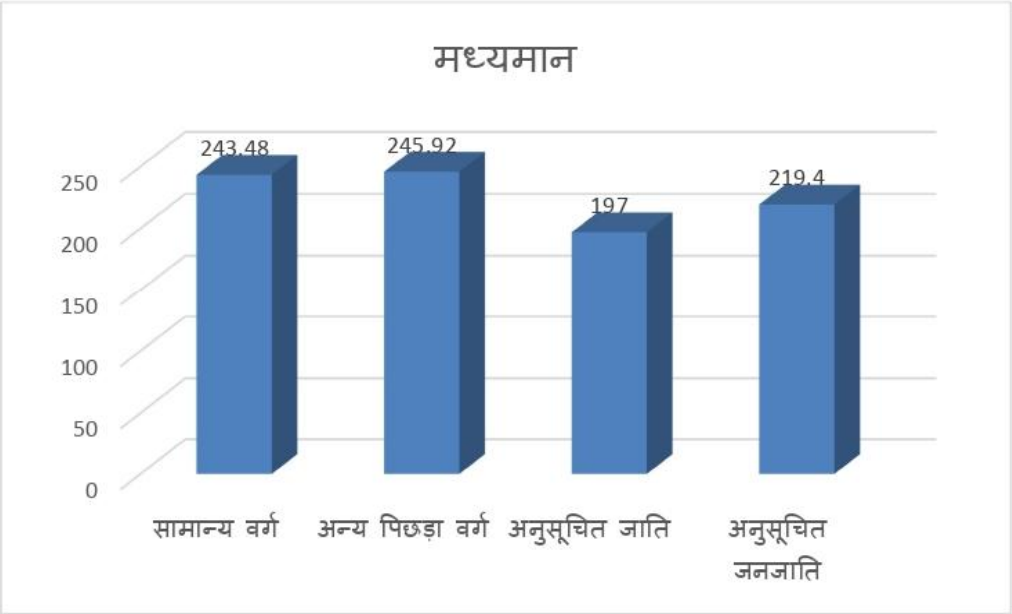

आकृति # 1

आकृति # 1 में विभिन्न सामाजिक वर्गों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का औसत दर्शाया गया।

परिणामों से स्पष्ट हुआ कि अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के विद्यार्थियों का औसत अंक सर्वाधिक 245.92पाया गया, जबकि अनुसूचित जाति (SC) के विद्यार्थियों का औसत न्यूनतम 197रहा। सामान्य वर्ग (243.48) और अनुसूचित जनजाति (ST) वर्ग (219.4) के विद्यार्थियों का औसत लगभग समान स्तर पर पाया गया। औसत अंकों की इस स्थिति से संकेत मिलता है कि OBC वर्ग के विद्यार्थी अपेक्षाकृत बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि इस वर्ग के विद्यार्थियों को अब अधिक शैक्षिक अवसर, सरकारी योजनाओं का लाभ तथा शिक्षा के प्रति बढ़ती जागरूकता प्राप्त हो रही होगी। दूसरी ओर, SC वर्ग का औसत कम रहने का कारण सामाजिक और आर्थिक कठिनाइयाँ, शिक्षा के संसाधनों की कमी तथा पारिवारिक सहयोग की न्यूनता हो सकती है। सामान्य और ST वर्ग के औसत लगभग समान पाए गए, परंतु ST वर्ग में अंकों का अधिक विचलन यह दर्शाता है कि इस वर्ग के विद्यार्थियों में कुछ अत्यधिक अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं जबकि कुछ बहुत पीछे हैं, जो संसाधनों की असमान उपलब्धता के कारण हो सकता है। अतः औसत माध्य मानों से यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक वर्गों के बीच शैक्षिक उपलब्धि में कुछ अंतर अवश्य है, किंतु यह अंतर बहुत बड़ा या निर्णायक नहीं।

विवेचना :-

सामाजिक वर्ग और शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध पर अनेक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय शोध किए गए हैं। प्रस्तुत शोध के परिणाम की सार्थकता के लिए कुछ शोधों का उल्लेख किया गया है-

शुक्ला ,रेड्डी और कुमार (2024) के भारत में जातीयता के आधार पर शैक्षिक उपलब्धि और घरेलू खर्च का तुलनात्मक अध्ययन में पाया गया कि अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गों के बच्चों की शिक्षा पर होने वाले घरेलू खर्चों में काफी अंतर है। जातीयता के आधार पर शैक्षिक उपलब्धि में सांख्यिकीय अंतर नहीं पाई गई है। इसी प्रकार भोई और लकड़ा (2022) के अध्ययन सामाजिक अपमान एवं पूर्वाग्रह से विद्यार्थियों की आत्म-प्रेरणा और शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव में पाया गया कि विद्यार्थि अपने प्रयासों से स्वयं को सामाजिक अपमान और पूर्वाग्रह से ऊपर उठाने में सक्षम है। सामाजिक वर्गों के आधार पर कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया। इसके विपरीत,असारी ,ज़रे (2022) ने भारत में जाति आधारित शिक्षा उपलब्धि के घटे हुए प्रतिफल और धन संचय पर उसके प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन से ज्ञात हुआ की शिक्षा सभी जातियों के लिए सामाजिक गतिशीलता और आर्थिक नीति का साधन है फिर भी अनुसूचित जाति समुदाय के लिए शिक्षा का आर्थिक लाभ अन्य समुदायों की तुलना में कम है। इसी प्रकार बाइबल और पॉल (2021) के अध्ययन ग्राम्य क्षेत्रों में जातीय संरचना और माध्यमिक विद्यालय की उपलब्धता का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव में पाया गया कि जिन गांवों में अनुसूचित जाति , अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या अधिक है वहां माध्यमिक विद्यालय की उपलब्धता कम है अवसरों की कमी उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर सीधा प्रभाव डालती है। वेणुमुद्दला (2020) के अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्गों में शैक्षिक उपलब्धि एवं सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति वर्गों में शैक्षिक उपलब्धि के माध्यम से सामाजिक गतिशीलता बढ़ती है। परिणाम यह दर्शाते हैं कि सामाजिक वर्गों का शैक्षिक उपलब्धि पर कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ता है। उपरोक्त अध्ययन प्रस्तुत अध्ययन के पक्ष में है। कुछ साहित्य समीक्षा उन अध्ययनों का विवरण प्रस्तुत करती है जो प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम के विपरीत है। इन अध्ययनों के परिणाम से स्पष्ट होता है कि जातीयता विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करती है।

तालिका 2 : विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि और आर्थिक स्थिति

डेटा सारांश तालिका

आय समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
10000-20000	63	238.71	55.64
21000-30000	18	226.78	67.97
31000-40000	11	254.91	84.48
41000-50000	8	232.63	61.18
कुल	100	232.63	

तालिका # 2

उपरोक्त तालिका प्रत्येक वर्ग में विद्यार्थियों के माध्य और मानक विचलन को दर्शाती है। पारिवारिक मासिक आय ₹10000-20000 वाले 63 विद्यार्थियों का माध्य 238.71तथा मानक विचलन 55.64 ₹21000-30000 मासिक आय वाले18 विद्यार्थियों का माध्य 226.78तथा मानक विचलन 67.97 ₹31000-40000 मासिक आय वाले 11विद्यार्थियों का माध्य 254.91तथा मानक विचलन 84.48 एवं ₹41000–50000 मासिक आय वाले 8 विद्यार्थियों का माध्य 232.63 तथा मानक विचलन 61.18 प्राप्त हुआ।

एनोवा सारांश तालिका

Source	DF	SS	MS	F-Stat	P-Value
Between Groups	3	5689.05	1896.35	0.5	0.68
Within Groups	96	368017.04	3833.51		
Total	99	373706.09			

- F-statistic = 0.50
- P-value = 0.68
- DF (Between) = 3, DF (Within) = 96

व्याख्या (Interpretation)

उपरोक्त तालिका में शोधार्थी ने आंकड़ों के विश्लेषण, माध्य तथा मानक विचलन के सहायता से प्रसारण परीक्षण विधि का उपयोग किया। इन आंकड़ों के विश्लेषण के द्वारा F

अनुपात का मान 0.50 तथा P का मान 0.68 प्राप्त हुआ। प्राप्त Fअनुपात का सांख्यिकीय मान (0.50), F के क्रांतिक मान (2.67) से कम है। आंकड़ों के विश्लेषण का परिणाम यह दर्शाता है, कि विद्यार्थियों के पारिवारिक मासिक आय का विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है।

विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि तथा उनके विभिन्न आर्थिक वर्गों में कोई महत्वपूर्ण सांख्यिकीय अंतर नहीं पाया गया। अतः शोधार्थी द्वारा तैयार की गई शून्य परिकल्पना पारिवारिक मासिक आय के आधार पर विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के मध्य अंतर सार्थक नहीं है, स्वीकार किया जाता है।

औसत माध्य मान यह दर्शाते हैं कि ₹21,000 से ₹30,000 की मध्यम आय श्रेणी के विद्यार्थियों का प्रदर्शन अन्य आय वर्गों की तुलना में अपेक्षाकृत बेहतर है। तथापि, ANOVA विश्लेषण से प्राप्त परिणाम यह इंगित करते हैं कि यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं है, अर्थात् यह अंतर वास्तविक प्रभाव के बजाय संयोगवश उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि केवल पारिवारिक आय पर निर्भर नहीं करती। बल्कि, शैक्षिक वातावरण, अभिभावकों की भागीदारी, विद्यालय की गुणवत्ता, उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग तथा व्यक्तिगत परिश्रम जैसे बहुआयामी कारक उनकी उपलब्धि को अधिक प्रभावी रूप से प्रभावित करते हैं।

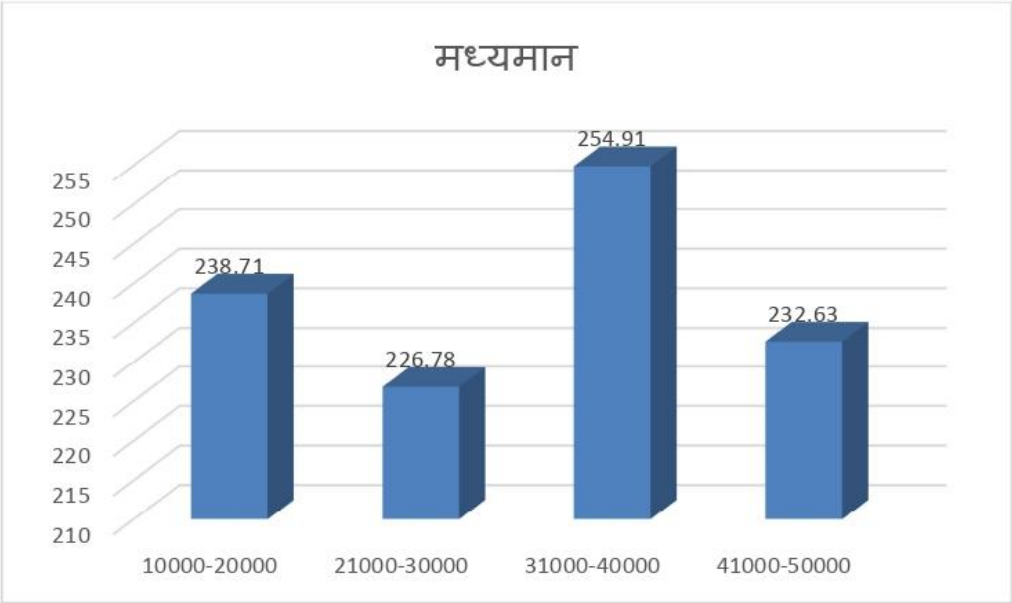

आकृति # 2

आकृति # 2 से स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि उनके पारिवारिक मासिक आय वर्ग के अनुसार कुछ अंतर है। ₹31,000–30,000 आय वर्ग के विद्यार्थियों का औसत सर्वाधिक (254.91) पाया गया, जबकि ₹21,000–30,000 आय वर्ग के विद्यार्थियों का औसत न्यूनतम (226.78) रहा। ₹10,000–20,000 आय वर्ग (238.71) और ₹41,000–50,000 आय वर्ग (232.63) के विद्यार्थियों का औसत लगभग समान और मध्यम स्तर पर पाया गया। इस प्रकार उच्चतम और न्यूनतम औसत के बीच लगभग 14.65 अंकों का अंतर दृष्टिगोचर होता है। मध्यम आय वर्ग (₹21,000–30,000) के विद्यार्थी अपेक्षाकृत बेहतर प्रदर्शन करते हैं, क्योंकि इस आय स्तर पर परिवारों के पास शिक्षा हेतु आवश्यक संसाधन और सहयोग उपलब्ध होता है, साथ ही अत्यधिक विलासिता या सामाजिक व्यस्तताओं का दबाव नहीं होता। इसके विपरीत, ऊँचे मध्यम आय वर्ग (₹21,000–30,000) के विद्यार्थियों का औसत न्यूनतम पाया गया, जिसका कारण यह हो सकता है कि अधिक आय के कारण अध्ययन पर एकाग्रता कम हो जाती है या विद्यार्थी संसाधनों के होते हुए भी उनका शैक्षिक उपयोग प्रभावी ढंग से नहीं कर पाते। निम्न आय वर्ग के विद्यार्थी (₹10,000–20,000) तथा उच्च आय वर्ग (₹41,000–50,000) मध्यम स्तर पर रहे, जो यह दर्शाता है कि संसाधनों की अत्यधिक कमी या अत्यधिक उपलब्धता दोनों ही स्थितियाँ शैक्षिक उपलब्धि को संतुलित रूप से प्रभावित नहीं कर पातीं।

विवेचना :-

इस अध्ययन के परिणाम से संबंधित पूर्वोत्तर में बहुत सारे शोध किए गए हैं।- बागड़े, एप्पल, Taylor (2022) के अध्ययन ग्रामीण क्षेत्रों में निजी और सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में लिंग, सामाजिक-आर्थिक स्थिति और शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन में पाया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में निजी माध्यमिक विद्यालयों के लिंग आए और सामाजिक आर्थिक स्थिति के आधार पर विद्यार्थियों का विभाजन बड़ा लेकिन सरकारी विद्यालयों में विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है। अतः अध्ययन से निष्कर्ष ज्ञात हुआ कि शैक्षिक उपलब्धि और आय वर्ग में कोई सांख्यिकीय के रूप से अंतर नहीं पाया गया । यादव (2020) ने माध्यमिक स्तर के विद्यालय के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक - आर्थिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन के निष्कर्ष से यह ज्ञात हुआ कि आर्थिक स्थिति और शैक्षिक उपलब्धि का संबंध महत्वपूर्ण नहीं है, जो दर्शाता है कि सरकारी योजनाओं और समान शैक्षिक अवसरों ने आय आधारित विषमता को कम किया। जो प्रस्तुत अध्ययन के अनुरूप है। इसी प्रकार जॉन (2020) ने विद्यालयी छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि पर

सामाजिक वर्ग और आय वर्ग के तुलनात्मक प्रभाव का अध्ययन किया। शोध में पाया कि शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक वर्ग का प्रभाव आय वर्ग की तुलना में कहीं अधिक था । उनके अनुसार केवल मासिक आय से छात्रों की उपलब्धि का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता। अतः छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि और उनके आर्थिक स्थिति के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं पाए गए। उपरोक्त अध्ययन प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम के पक्ष में है।

जबकि दुबे और रतनापारखी (2019) ने वरिष्ठ माध्यमिक छात्रों के शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक-आर्थिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन किया परिणाम से ज्ञात होता है कि सामाजिक आर्थिक स्थिति और शैक्षिक उपलब्धि के बीच सकारात्मक का संबंध है और विभिन्न सामाजिक-आर्थिक वर्गों के बीच स्पष्ट अंतर देखे गए। इसी प्रकार शर्मा (2017) के अध्ययन सामाजिक-आर्थिक स्थिति और छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के बीच संबंध का अध्ययन में उच्च सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले विद्यार्थियों और सामान्य सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले विद्यार्थियों के बीच शैक्षिक उपलब्धि में महत्वपूर्ण अंतर पाया गया जो प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम के विपरीत है। अतः उपरोक्त अध्ययन प्रस्तुत अध्ययन के पक्ष में नहीं है।

निष्कर्ष (Conclusion)

वर्तमान अध्ययन "माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके सामाजिक-आर्थिक स्थिति के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन" पर आधारित था। इस अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना था कि सामाजिक-आर्थिक स्थिति विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को किस सीमा तक प्रभावित करती है।

अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि सामाजिक-आर्थिक स्तर के साथ आंशिक रूप से संबंधित है। उच्च सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से आने वाले विद्यार्थियों का औसत प्रदर्शन अपेक्षाकृत अधिक रहा, जबकि निम्न आय वर्ग के विद्यार्थियों का प्रदर्शन कुछ कम पाया गया।

प्रसारण विश्लेषण (ANOVA) के परिणामों के अनुसार समूहों के बीच अंतर सांख्यिकीय दृष्टि से सीमांत रूप से महत्वपूर्ण पाया गया ($p = 0.05$)। अतः शून्य परिकल्पना आंशिक रूप से अस्वीकृत की गई। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि केवल आर्थिक स्थिति का परिणाम नहीं है, बल्कि इसमें पारिवारिक सहयोग,

शैक्षिक वातावरण, विद्यालय की गुणवत्ता, प्रेरणा स्तर और व्यक्तिगत परिश्रम जैसे कारकों का भी योगदान है।

शैक्षिक निहितार्थ (Educational Implications)

अध्ययन के निष्कर्षों से यह स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सामाजिक-आर्थिक कारकों का प्रभाव विद्यमान है। इस परिप्रेक्ष्य में निम्नलिखित शैक्षिक निहितार्थ प्रस्तुत किए जा सकते हैं–

समान शैक्षिक अवसरों की व्यवस्था :

सभी सामाजिक-आर्थिक वर्गों के विद्यार्थियों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने हेतु समान अवसर उपलब्ध कराना आवश्यक है।

आर्थिक रूप से कमजोर विद्यार्थियों के लिए सहायता :

निम्न आय वर्ग के विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति, निःशुल्क पुस्तकें, पोषण कार्यक्रम एवं ट्यूटोरियल सहायता जैसी योजनाएँ लागू की जानी चाहिए।

अभिभावक-विद्यालय सहयोग :

विद्यार्थियों की प्रगति के लिए विद्यालय और अभिभावकों के बीच प्रभावी संवाद तथा सहभागिता को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षण वातावरण :

विद्यालयों में संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता, प्रेरक शिक्षण विधियाँ और समान व्यवहार का वातावरण विकसित किया जाना चाहिए।

सामाजिक जागरूकता एवं प्रेरणा :

समाज में शिक्षा के महत्व और समान अवसरों के प्रति जागरूकता फैलाकर वंचित वर्गों में अध्ययन के प्रति रुचि उत्पन्न की जानी चाहिए।

नीतिगत सुधार :

शिक्षा नीति में ऐसे प्रावधान किए जाएँ जो सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों के शैक्षिक उत्थान को प्रोत्साहित करें।

सन्दर्भ सूची (References)

- अग्रवाल, जे. सी. (2019). शैक्षिक अनुसंधान और सांख्यिकी. नई दिल्ली: विनोद पुस्तक मन्दिर।
- शर्मा, आर. ए. (2018). शिक्षा में अनुसंधान की विधियाँ. मेरठ: ललिता प्रकाशन।
- तिवारी, एस. एन. (2020). शैक्षिक मनोविज्ञान. लखनऊ: उद्दीपन प्रकाशन।
- Koul, L. (2018). Methodology of Educational Research. New Delhi: Vikas Publishing House.
- Best, J. W., & Kahn, J. V. (2017). Research in Education. New Delhi: Pearson Education.
- Pandey, K. P. (2016). Educational Research and Statistics. New Delhi: APH Publishing Corporation.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 52–57

अनूपगढ़ जिले के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का शिक्षण पर प्रभाव का अध्ययन

लवप्रीत सिंह, शोधकर्ता,
डॉ. अनिल कुमार, शोध निर्देशक

शिक्षक का नाम हमारे मन में आते ही ऐसे व्यक्ति की छवि बनती है, जो विद्यार्थियों को स्कूल में अध्ययन करवाते हैं और ज्ञान रूपी प्रकाश से अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करवाते हैं ताकि छात्र का सर्वांगीण विकास हो सके। लेकिन वास्तव में देखें तो बड़ी संख्या में सरकारी शिक्षक शिक्षण के बजाए गैर शैक्षिक कार्यों में ही व्यस्त रहते हैं। इसी कारण शिक्षक को कक्षा में पढ़ाई जाने वाले विषय के संदर्भ में पाठ योजना व सहायक सामग्री का उपयोग करने हेतु बहुत कम समय मिलता है। कक्षा में शिक्षण कार्य करते समय शिक्षक को कक्षा–कक्ष में गतिविधियां करते हुए रहना चाहिए। शिक्षक यदि पूर्ण तैयारी से होता है तो वह आत्मविश्वास से गुणात्मक रूप से शिक्षण कर सकता है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु शिक्षक को एक गहन तैयारी की आवश्यकता होती है। यदि शिक्षक शिक्षा के साथ कुछ गैर शैक्षणिक कार्य करता है तो शिक्षक को अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है जोकि कक्षा–कक्ष शिक्षण को हानि पहुंचाता है। गैर शैक्षिक कार्यों की वजह से छात्र शिक्षक के मध्य परस्पर पूर्ण तालमेल नहीं हो पाता तथा शिक्षण कार्य पूर्ण रूपी से प्रभावी नहीं होता, जिससे छात्रों के चहुंमुखी विकास में बाधा आ जाती है।

गैर–शैक्षिक कार्य –

गैर शैक्षिक कार्य से तात्पर्य उन कार्यों से है जो शैक्षणिक पाठ्यक्रम पाठ्यसहभागी क्रियाओं के अतिरिक्त सरकार व संगठन द्वारा शिक्षकों को समय–समय पर सौंपे जाते हैं।

विद्यालय में शिक्षकों को शैक्षिक कार्यों के साथ–साथ अन्य गैर शैक्षिक कार्य भी करने पड़ते हैं। इन गैर शैक्षिक कार्यों की वजह से शिक्षकों पर अतिरिक्त भार पड़ता है। इससे शिक्षकों में तनावपूर्ण स्थिति बनी रहती है और न ही उनका शिक्षण कार्य प्रभावशाली बन पाता है। कक्षा व विद्यालय की सफलता अध्यापक के व्यक्तित्व के गुणों, शैक्षिक व्यावसायिक योग्यता व दक्षता पर निर्भर है। उसके व्यक्तित्व की छाप कक्षा–कक्ष व विद्यालय पर नजर आती है। एक शिक्षक तभी प्रभावशाली या अच्छा शिक्षक कहलायेगा जब विद्यार्थी उसका स्वयं सम्मान करने हेतु तत्पर हो। यह सम्मान एक शिक्षक तभी प्राप्त कर सकता है जब उसके व विद्यार्थियों के मध्य परस्पर

तालमेल सही हो। शिक्षक विद्यार्थियों को अधिक से अधिक समय दे सके, परंतु गैर शैक्षिक कार्यों की वजह से यह संभव नहीं हो पाता। अध्यापक अन्य कार्यों में ही उलझा रहता है।

न्यादर्श –

प्रस्तुत शोध कार्य के दत्त संकलन कार्य हेतु शोधकर्ता द्वारा अनूपगढ़ व श्रीगंगानगर जिले के सरकारी विद्यालयों के कुल 400 शिक्षकों को शामिल किया गया, जिनमें से 200 अनूपगढ़ जिले के शिक्षक (100 पुरूष + 100 महिला) तथा 200 श्रीगंगानगर जिले के शिक्षक (100 पुरूष + 100 महिला) का चयन किया गया।

विधि –

इस शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया।

उपकरण –

इस हेतु शोधकर्ता द्वारा उपकरण के रूप में स्वनिर्मित 'गैर शैक्षिक कार्यों का शिक्षण पर प्रभाव मापनी' का प्रयोग किया गया।

सांख्यिकी –

शोध कार्य हेतु शोधकर्ता द्वारा सांख्यिकी के रूप में मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–टेस्ट का प्रयोग किया गया।

शोध के उद्देश्य –

1. अनूपगढ़ जिले के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का शिक्षण पर प्रभाव अध्ययन करना।

विश्लेषण–

सारणी संख्या–1 (शिक्षक)

समूह (शिक्षक)	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
पुरूष शिक्षक	100	194.85	8.77	198	5.32	सार्थक
महिला शिक्षक	100	202.01	10.22			

परिणाम एवं व्याख्या –

सारणी संख्या 1 के अनुसार अनूपगढ़ जिले के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का शिक्षण पर प्रभाव मध्यमान क्रमशः 194.85 तथा 202.01 है। इन दोनों समूहों का प्रमाप विचलन क्रमशः 8.77 व 10.22 हैं। अतः दोनों के मध्यमानों के अंतर का टी मूल्य 5.32 है। ये मूल्य 198 स्वतंत्रता की कोटि हेतु 0.05 स्तर पर विश्वास मूल्य 1.97 तथा 0.01 के विश्वास मूल्य 2.60 से अधिक है। अतः दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर है।

अनूपगढ़ जिले के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का

शिक्षण पर प्रभाव में अंतर प्राप्त हुआ है जैसा कि लेखाचित्र से भी स्पष्ट हो रहा है–

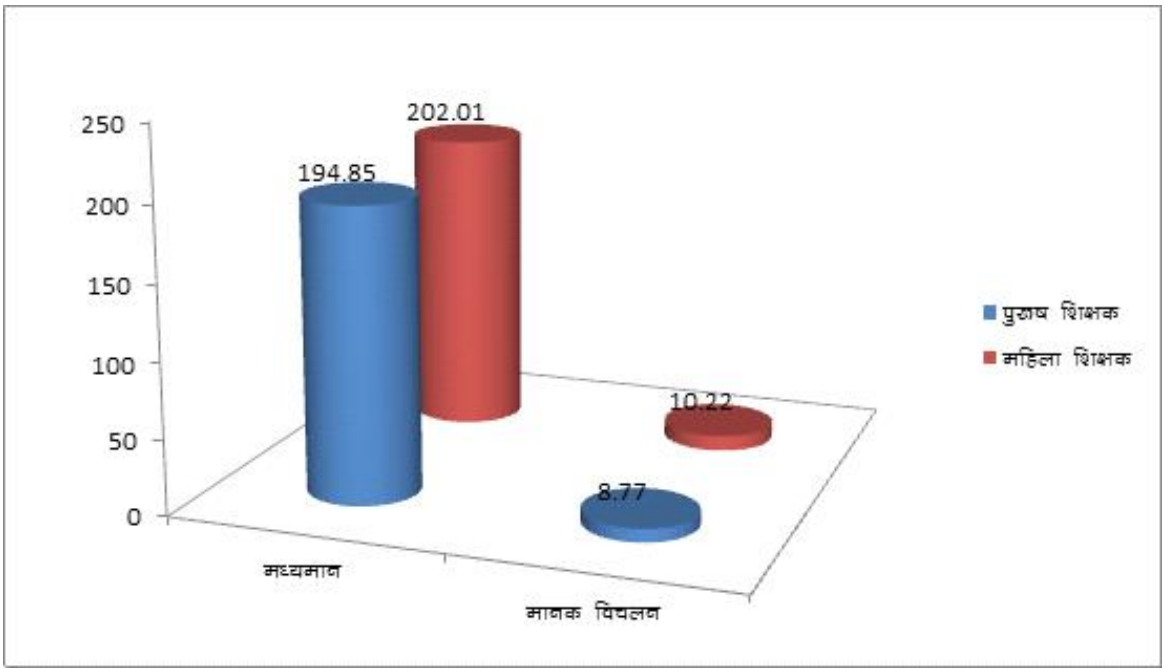

सारणी संख्या–2 (ग्रामीण व शहरी)

समूह (शिक्षक)	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
ग्रामीण शिक्षक	100	198.46	10.99	198	0.04	असार्थक
शहरी शिक्षक	100	198.40	9.30			

परिणाम एवं व्याख्या –

सारणी संख्या 2 के अनुसार अनूपगढ़ जिले के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का मध्यमान क्रमशः 198.46 तथा 198.40 है। इन दोनों समूहों का प्रमाप विचलन क्रमशः 10.99 व 9.30 हैं। अतः दोनों के मध्यमानों के अंतर का टी मूल्य 0.04 है। ये मूल्य 198 स्वतंत्रता की कोटि हेतु 0.05 स्तर पर विश्वास मूल्य 1.97 तथा 0.01 के विश्वास मूल्य 2.60 से कम है। अतः दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर नहीं है।

अनूपगढ़ जिले के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण व शहरी शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का शिक्षण पर प्रभाव में कोई अंतर प्राप्त नहीं हुआ है जैसा कि लेखाचित्र से भी स्पष्ट हो रहा है–

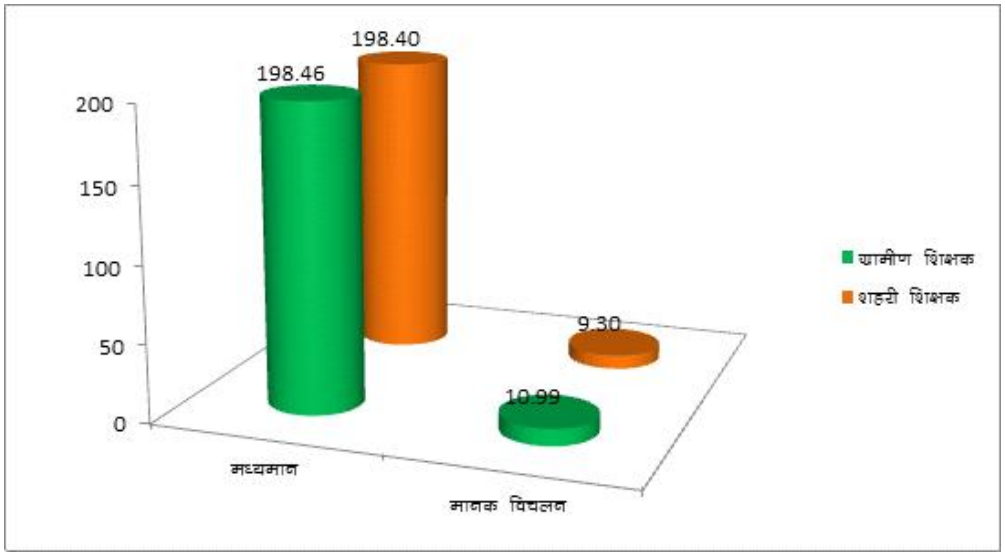

सारांश –

अध्ययन के परिणाम से अनूपगढ़ जिले के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का शिक्षण पर प्रभाव का अध्ययन पर प्रकाश डालने में मदद मिलेगी। यह शोध सरकारी विद्यालयों के ग्रामीण व शहरी शिक्षकों द्वारा किये जाने वाले गैर–शैक्षिक कार्यों का शिक्षण पर प्रभाव का अध्ययन करने में भी मदद करेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. Adeymi, B.A. (2020). Teachers Effectiveness and Student's Academic Achievement in Senior secondary School Civic, Osun State Nigeria. Asian Journal of Social Sciences and Management Studies. 7(2),99-103
2. Ahmad, Z., Saleem, Z. & Rehman, K. (2020). Impact of Teacher Effectiveness and Student Attitude on Student's Academic Achievement in Science Subject in the Secondary Schools of Dera Ismail Khan (Pakistan). Global Social Science Review,V(I), 241-247. doi:10.31703/gssr.2020 (V-I).25
3. Akiri, A.A. (2013). Effects of Teachers Effectiveness on Academic Performance in Public Secondary School; Delta state Nigeria. Journal of Educational and Social Research, 3(3), 105-111.
4. Bhatiya,S., & Gautam,G. (2018). A Study of Effectiveness in Teaching among Male and Female Teachers of Higher Secondary School and its Relation with Student's Achievement. CHETANA, 3(3),164-176.
5. Chikendu, R.E. (2022). Teachers Effectiveness And student's Academic Performance in Secondary Schools. International Journal of Advanced Academic Research,8 (2), 90-97.
6. Koralli, B.C. & Hoovinabhavi, B. (2021). Relationship of Teaching Effectiveness in Relation

to Academic Achievement of High School Students of Kalaburgi District. International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT), 9(9),681-688.

7. Lin,Y. (2016). Teacher Effectiveness in improving both Academic Achievement and Social – Emotional Skills. Degree of Master of Arts. University of California Riverside.
8. Garrett, H.E. (1984). Statistics in Psychology & Education.Kalyani Publishers,New Delhi, pp.399-400.
9. Singh, A.K. (2013). Research Methods in Psychology Sociology and Education. Motilal Banarsidas, Delhi, pp 220, 232
10. अग्रवाल, जे.सी. (1966), एज्यूकेशनल रिसर्च इन इन्ट्रोडक्शन. नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो।
11. अग्रवाल एवं अस्थाना (1980), मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर।
12. अग्रवाल, एस. (2012), अनुदानित व गैर अनुदानित उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के संगठनात्मक वातावरण का शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव का अध्ययन, शिक्षा चिंतन, त्रिमूर्ति संस्थान, अक्टूबर–नवम्बर पृष्ठ संख्या 14–22.
13. अग्रवाल, एस. व चंदेल, एन.पी.एस. (2009), अनुदानित व गैर अनुदानित उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता का उनके कृत्य संतोष पर प्रभाव का अध्ययन, परिप्रेक्ष्य, वर्ष 16, अंक 3, दिसम्बर 2009 पृष्ठ संख्या 53–66.
14. अरोड़ा डॉ. रीता, मारवाह डॉ. सुदेश (2004–05), शिक्षण एवं अधिगम के मनो सामाजिक आधार, जयपुरः शिक्षा प्रकाशन।
15. कपिल, एच.के. (1978), अनुसंधान परिचय. आगरा, हर प्रसाद भार्गव पब्लिकेशन।
16. कोठारी, डी.एस. (1966), शिक्षा आयोग शिक्षा मंत्रालय. नई दिल्ली।
17. गुप्ता एवं शर्मा (2011), 'अध्यापकों की कार्यप्रणाली के तरीकों पर व्यावसायिक दबाव व लिंग के आधार पर अध्ययन', पीएच.डी. स्तरीय अध्ययन।
18. चन्दराई, के. (2010). ओक्यूपेशनल स्ट्रैस इन टीचस, नई दिल्ली : ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉरपोरेशन।
19. चोपड़ा (2001), 'ग्रामीण व शहरी प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों के कार्यभार का तुलनात्मक अध्ययन', पीएच.डी. स्तरीय अनुसंधान।
20. चोपड़ा, अरूणा (2015), 'व्यावसायिक प्रतिबद्धता, कार्य संतुष्टि एवं शिक्षण प्रभाविकता का अध्ययन', पीएच.डी. स्तरीय अनुसंधान।
21. जायसवाल, वी. व गुप्ता, पी. (2011), नियमित शिक्षक–शिक्षिकाओं व शिक्षामित्रों के मानसिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में उनकी प्रभावशीलता का अध्ययन, वैश्विक शैक्षिक परिप्रेक्ष्य, वाल्यूम–1, नम्बर–1 जून 2011, पृष्ठ सं. 31–42.
22. डॉ. शर्मा, आर. ए (2013), शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
23. दक्षिण एम. (2009), 'विद्यार्थियों की अकादमिक उपलब्धि पर शिक्षण प्रभावशीलता के प्रभाव का अध्ययन',

पीएच.डी. स्तरीय अनुसंधान।
24. पाण्डे, के.सी. (1983), एज्यूकेशनल रिसर्च इन इन्ट्रोडक्शन. नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो।
25. बार्ग वाल्टर आर. (1965), एजूकेशन रिसर्च इन इन्ट्रोडक्शन, नई दिल्ली, डेविड सिक्की कम्पनी, नई दिल्ली।
26. बेलागाली, एच.बी. (2011), 'माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों की प्रबन्ध के प्रकार तथा शिक्षण अनुभव के सम्बन्ध में शिक्षण व्यवसाय के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन', पीएच.डी. स्तरीय अनुसंधान।
27. भटनागर, सुरेश (1996), विवेचनात्मक अध्ययन, कोठारी कमीशन, एजूकेशन कमीशन, आर. लाल बुक डिपो निकट गवर्नमेंट इन्टर कॉलेज, मेरठ।
28. भटनागर, सुरेश, सक्सेना अनामिका (1997), विवेचनात्मक अध्ययन, कोठारी कमीशन, एजूकेशन कमीशन, आर. लाल बुक डिपो निकट गवर्नमेंट इन्टर कॉलेज, मेरठ।
29. भटनगार, सुरेश– शिक्षा मनोविज्ञान, (दशम संस्करण) मेरठ, आरलाल बुक डिपो।
30. भटनागर, ए. बी. एवं मीनाक्षी (2002), शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान, मेरठ : एच. पी. भार्गव बुक हाउस।
31. भार्गव, डॉ. महेश (1985), आधुनिक मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन, आगरा : भार्गव बुक हाउस, राजा मण्डी।
32. मेस्लो, ए. एच. (1970), अभिप्रेरणा और व्यक्तित्व (द्वितीय संस्करण)। न्यूयार्क, हार्पर एवं रॉ।
33. रूहेला, एस. (1970), सामाजिक सर्वेक्षण व अनुसंधान के मूल तत्व. दिल्ली, विकास पब्लिकेशन।
34. वर्मा, डॉ. रामपाल सिंह (2004), अधिगम एवं विकास के मनोसामाजिक आधार, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर।
35. सिद्धु, के.सी. (1985), मैथडॉलोजी ऑफ रिसर्च इन एज्यूकेशन. एटलिंग पब्लिशर्स।
36. सिन्हा, एच.पी. (1929), शैक्षिक अनुसंधान. नई दिल्ली, विकास पब्लिकेशन हाऊस प्रा. लिमिटेड।
37. शिक्षा चिन्तन (2008), शैक्षिक त्रैमासिक शोध पत्रिका, त्रिमूर्ति संस्थान, नई दिल्ली; वर्ष 15, अंक 3, पृ. सं. 81–88.
38. त्रिवेदी, आर. एन. एवं शुक्ला, डी. पी. (2000), रिसर्च मेथेडोलॉजी, जयपुर : कॉलेज बुक हाउस।

Webliography :-

1. www.rspb.org.uk/webcams/projects
2. www.bbc.co.uk/schools/scienceclips/
3. www.ase.org.uk
4. www.elsevier.com/
5. www.shodhganga.net
6. www.usq.edu.au/users/albino/papers/site99/1345.html
7. http://www.nict.com/rajasthan-project.html

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 58–60

जलवायु परिवर्तन : एक वैश्विक चुनौती

सलोचना यादव
यूजीसी नेट 2018, भूगोल।

प्रस्तावना :–

जलवायु परिवर्तन एक ऐसी भयावह स्थिति है, जो आज दुनिया के सामने एक विकराल चुनौती है। यह कोई भविष्य की कल्पना नहीं बल्कि एक वर्तमान का संकट है। जिसके प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष परिणाम मानव जीवन, पारिस्थितिकी तंत्र और पृथ्वी के समस्त प्राकृतिक संतुलन को प्रभावित करते है।

जलवायु परिवर्तन का अर्थ है पृथ्वी के औसत तापमान वर्षा एवं अन्य मौसम संबंधी घटनाओं में दीर्घकालिक और असमान्य परिवर्तन।

जबकि यह बदलाव हमेशा प्राकृतिक कारणों से भी होते रहे है किंतु पिछले कुछ दशकों से इसमें अप्रत्याशित वृद्धि का मुख्य कारण मानवीय गतिविधियां है जिन्हें मानवजनित कारण कहा जाता है

जलवायु परिवर्तन के कारण :

जलवायु परिवर्तन के कारणों में मुख्य रूप से दो श्रेणियां है – प्राकृतिक और मानवजनित।

1. **प्राकृतिक कारण :– ज्वालामुखी विस्फोट** – ज्वालामुखी विस्फोट से निकलने वाली राख और गैंसे सल्फर डाइ ऑक्साइड, वायुमंडल में फैलकर तापमान को प्रभावित करती है।

- **वन अग्नि :–** प्राकृतिक रूप से लगने वाली आग बड़े पैमाने पर जंगलों को नष्ट कर देती जिससे कार्बन उत्सर्जन बढ़ जाता है और जैव विविधता को बहुत बड़ा नुकसान पहुंचता है।
- **पर्माफ्रॉस्ट पिंघलना :–** ध्रुवीय क्षेत्रों में जमी बर्फ के पिंघलने से बड़ी मात्रा में मीथेन कार्बन डाइ ऑक्साइड जैसी ग्रीन हाउस गैंसो का उत्सर्जन होता है जिससे ग्लोबल वार्मिंग बढ़ती है।

2. **मानवजनित कारण :–** औद्योगिक क्रांति के बाद से मानव गतिविधियों ने वायुमण्डल में ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा को बढ़ा दिया है जो सबसे बड़े कारण है।

- **जीवाश्म ईधन का दहन :–** कोयला, पेट्रोल, गैस आदि को जलाने से कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन गैसों का उत्सर्जन होता है, जो ग्रीनहाउस प्रभाव को बढ़ाता है।
- **औद्योगीकरण :–** उद्योगों से निकलने वाली गैस वायु प्रदूषण का एक बड़ा कारण है, जो जलवायु परिवर्तन को बढ़ावा देती है।
- **वनों की कटाई –** वनों की अंधाधुंध कराई से कार्बन–डाइ–ऑक्साइड का अवशोषण कम होता है जिससे यह गैस वायुमंडल में जमा हो जाती है। पेड़ कार्बनडाइ–ऑक्साइड को सोंखते है और उन्हें काटने पर

यह कार्बन वातावरण में वापस चला जाता है।

- **कृषि और पशुपालन** – कृषि से मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी ग्रीनहाउस गैसें निकलती है।
- **शहरीकरण और जीवनशैली** – शहरों का विस्तार और ऊर्जा की अधिक खपत वाली आधुनिक जीवनशैली भी ग्रीनहाउस गैसों के उत्सनर्जन को बढ़ा रही है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव :–

- **तापमान में वृद्धि :–** पृथ्वी का औसत वैश्विक तापमान में वृद्धि हो रही है जिससे हीटवेव और अत्यधिक गर्मी जैसी घटनाऐं अधिक बार होने लगी है।
- **प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि** – जलवायु परिवर्तन के कारण बाढ़, सूखा, तूफान और बवंडर जैसी प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि हुई है
- **कृषि का प्रभाव :–** तापमान और वर्षा के पैटर्न में बदलाव से कृषि उत्पादन प्रभावित हो रहा है। कुछ जगह/स्थानों पर सूखा पड़ रहा है जबकि कुछ में अत्यधिक सूखा पड़ रहा है जबकि कुछ में अत्यधिक वर्षा से फसले बर्बाद हो रही है।
- **ध्रुवीय बर्फ का पिंघलना और समुद्र स्तर में वृद्धि :–** आर्कटिक और अंटार्कटिक की बर्फ की चादर और ग्लेशियर तेजी से पिंघल रहे हैं जिससे समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है इससे तटीय क्षेत्रों में बाढ़ का खतरा बढ़ गया है जिससे तटीय शहरों और द्वीपीय देशों के डूबने की आंशका है।
- **जैव विविधता को खतरा** – तापमान में वृद्धि के कारण कई प्रजातियां अपने प्राकृतिक आवासों से पलायन कर रही है जबकि कुछ प्रजातियां विलुप्त होने के कगार पर है।
- **पानी का संकट :–** कई क्षेत्रों में पानी की कमी हो रही है। जिससे जल संकट की समस्या बढ़ रही है।
- **मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव :–** गर्मी से संबंधित बीमारियां, संक्रमक रोगों का प्रसार, कुपोषण जैसी समस्याऐं बढ़ रही है।

जलवायु परिवर्तन के निवारण के उपाय :–

जलवायु परिवर्तन समस्या से निपटने के लिए व्यक्तिगत, सामुदायिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समन्वित प्रयास आवश्यक है।

- **नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग** – सौर ऊर्जा पवन ऊर्जा और जल विद्युत जैसी नवीकरणीय ऊर्जा के स्त्रोतो को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।
- **वृक्षारोपण एवं वन संरक्षण :–** अधिक से अधिक पेड़ लगाकर और वनों की कटाई को रोड़कर CO_2 के अवशोषण को बढ़ाया जा सकता है।
- **सार्वजनिक परिवहन को बढ़ावा :–** निजी वाहनों का उपयोग कम कर सार्वजनिक परिवहन साधनों का उपयोग करना कार्बन उत्सर्जन कम करने में सहायक होगा।
- **कार्बन टैक्स** – अधिक कार्बन उत्सर्जन करने वाले उद्योगों पर कर लगाकर स्वच्छ तकनीकों का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

जागरूकता और शिक्षा :

- **अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग** – वैश्विक समझौते का पालन करना और विकसित और विकासशील देशों के बीच

सहयोग बढ़ाना महत्वपूर्ण है।

वैश्विक प्रयास और भारत की भूमिका :-

जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किए जा रहे है –

- **पेरिस समझौता (2015) :-** इस ऐतिहासिक समझौते का उद्देश्य वैश्विक तापमान वृद्धि को पूर्व औद्योगिक स्तर से 2^0 सेल्सियस से नीचे और 1.5^0 सेल्सियस तक सीमित करना है।
- **सतत् विकास लक्ष्य :-** संयुक्त राष्ट्र के लक्ष्यों में पर्यावरण संरक्षण और जलवायु कार्यवाही जैसे महत्वपूर्ण पहलु शामिल है।
- **भारत का योगदान :-** भारत भी जलवायु परिवर्तन से निपटने में सक्रिय भूमिका निभा रहा है। भारत ने पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं और नवीकरणीय ऊर्जा जैसे :– सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए बड़े कदम उठाए है भारत ने 2070 तक 'नेट जीरो' उत्सर्जन का लक्ष्य भी निर्धारित किया है।

निष्कर्ष :-

जलवायु परिवर्तन एक गंभीर समस्या है यह एक जटिल और बहुआयामी समस्या है जिसके दूरगामी परिणाम है। इस संकट का समाधान तभी संभव है जब हम सब मिलकर कार्य करे चाहे वह सरकार हो उद्योग हो या आम नागरिक।

हर व्यक्ति/नागरिक को अपनी जीवनशैली में बदलाव लाकर पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ाकर, कार्बन उत्सर्जन को कम करने के प्रयासों को बढ़ाकर इस समस्या को हल करने में अपनी भूमिका निभानी होगी। यदि अभी भी हम इस समस्या को गंभीरता से नहीं लेते हैं तो भविष्य में इसके विनाशकारी परिणाम सम्पूर्ण मानवता के लिए असहनीय होंगे। अभी समय रहते हम जागरूक इंसान बने और अपने ग्रह को बचाने के लिए निर्णायक कदम उठाऐं।

संदर्भ :-

1. पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग (ब्रटलैंड आयोग, हमारा आय भविष्य, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1987)
2. गुलाम, कमीलया, मानव, कैमेन (2012) : जलवायु परिवर्तन में मानवीय गतिविधियों का योगदान। अर्थव्यवस्था और ग्रामीण विकास में रोमानिया के लिए वास्तविकताऐं और परिप्रेक्ष्य।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 61-65

उच्च संगठनात्मक वातावरण व निम्न संगठनात्मक वातावरण वाले सरकारी व निजी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार का अध्ययन

सतपाल, शोधकर्ता
डॉ. संगीता अग्रवाल, शोध निर्देशिका

प्रधानाध्यापक का व्यक्तित्व बर्हिमुखी होना चाहिए उसे सभी के साथ मधुर सम्बन्ध रखने होते हैं जिससे सभी कर्मचारीगण उनका सहयोगकर्ता बने रहते हैं और इसी नीति से विद्यालय का कार्य उन्नति की और अग्रसर होता है। प्रधानाध्यापक को लोकतंत्रात्मक पद्धति को अपनाना होता है अर्थात् विद्यालय की जिम्मेंदारी सभी कर्मचारियों को देने से उसका कार्य भार कम हो जाता है। साथ ही प्रधानात्मक को खुशमिजाज होना चाहिए और मिलनसार होना चाहिए। प्रधानाध्यापक को कुशल नेतृत्व के लिए एक अच्छा वक्ता भी होना चाहिए।

विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास विद्यालय में ही होता है और इनका संचालन शिक्षा प्रशासन से किया जाता है। शिक्षा प्रशासन से तात्पर्य उस व्यवस्था से है जिसके द्वारा नियमबद्ध रूप से संचालन इस प्रकार से हो कि न्यूनतम समय, श्रम एवं आर्थिक व्यय से अधिक से परिणाम प्राप्त हो सकें।

प्रधानाध्यापक की विद्यालय ने नेतृत्व शैली मजबूत है तो वह विद्यालय में अच्छा शैक्षिक प्रबन्ध कर सकता है अर्थात् प्रधानाध्यापक को विद्यालय सम्बन्धी आय–व्यय और धन राशि का समय पर कार्यालय से रिपोर्ट लेनी चाहिए जिससे कार्यालयकर्मी, लिपिक वर्ग अपने काम के प्रति हमेशा जागरुक रहेंगे साथ ही अभिलेखों के रिकॉर्ड को भी देखना चाहिए।

प्रशासनिक व्यवहार :–

प्रशासन से हमारा तात्पर्य अर्थ उस व्यवस्था से है, जिसके द्वारा नियमबद्ध रूप से संचालन इस प्रकार से हो कि न्यूनतम समय श्रम एवं आर्थिक व्यय से अधिक से अधिक अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकें। प्रशासन जहाँ कार्य प्रणाली को सुव्यवस्थित करता है, वहां प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार एवं दायित्व भी निश्चित करता है। इस निश्चयात्मक स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार टकराते नहीं, वरन उसे अपने निर्धारित कर्तव्यों का बोध हेाता है। यह सहज तथ्य है कि किसी भी इकाई में से यदि प्रशासन को उठा लिया जाय तो अव्यवस्था हो जायेगी, चाहे वह छोटा सा घर हो, चाहे बड़ी से बड़ी राष्ट्रीय इकाई हो।

प्रधानाध्यापक विद्यालय की आत्मा है। प्रधानाध्यापक की छाप विद्यालय के तमाम कार्यों पर अंकित होती

है। इसलिए कहा जाता है कि जिस प्रकार का प्रधानाध्यापक होगा, उसी प्रकार का विद्यालय होगा, क्योंकि प्रधानाध्यापक विद्यालय का प्रधान शक्ति केंद्र है। वह अपने अच्छे व्यक्तित्व के प्रभाव से विद्यालय को उन्नति के शिखर पर पहुंचा सकता है और बुरे आचरण से अवनति की ओर अग्रसर भी कर सकता है।

न्यादर्श –

प्रस्तुत शोध कार्य के दत्त संकलन कार्य हेतु शोधकर्ता द्वारा श्रीगंगानगर जिले के 200 सरकारी व 200 निजी माध्यमिक विद्यालय कुल 400 विद्यालयों के 200 प्रधानाध्यापकों का चयन किया गया।

विधि –

इस शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया।

उपकरण –

इस हेतु शोधकर्ता द्वारा उपकरण के रूप में स्वंनिर्मित 'प्रशासनिक व्यवहार मापनी' का प्रयोग किया गया।

सांख्यिकी –

शोध कार्य हेतु शोधकर्ता द्वारा सांख्यिकी के रूप में मध्यमान, मानक विचलन, प्रतिशत एवं टी–टेस्ट का प्रयोग किया गया।

शोध के उद्देश्य –

1. उच्च संगठनात्मक वातावरण व निम्न संगठनात्मक वातावरण वाले सरकारी व निजी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार का अध्ययन करना।

विश्लेषण –

सारणी संख्या–1 (सरकारी विद्यालय)

समूह (प्रधानाध्यापक)	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
पुरूष	50	153.06	21.99	98	1.77	असार्थक
महिला	50	160.88	22.25			

0.01 व 0.05 सार्थकता स्तर

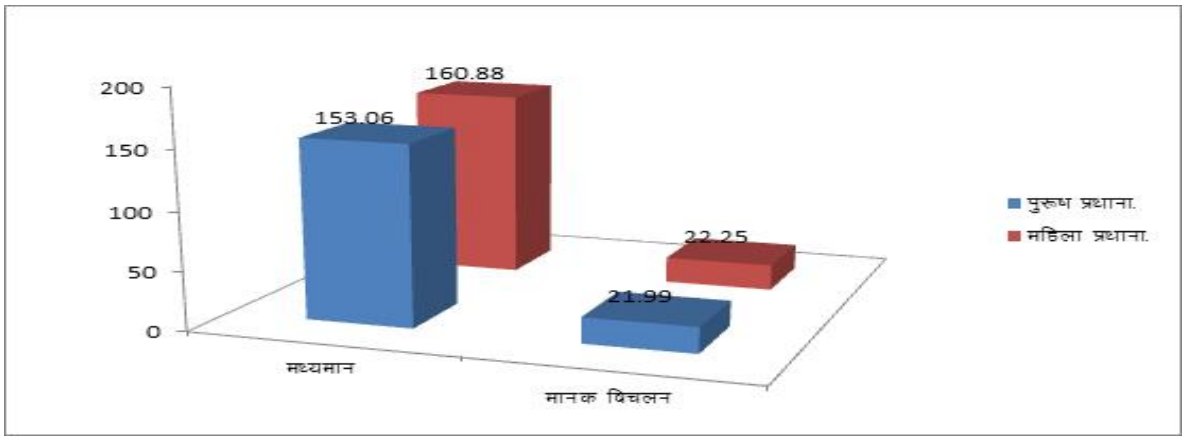

परिणाम एवं व्याख्या –

सारणी संख्या 1 के अनुसार व रेखाचित्र के अनुसार स्पष्ट होता है कि उच्च संगठनात्मक वातावरण व निम्न संगठनात्मक वातावरण वाले सरकारी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार का मध्यमान क्रमशः 153.06 तथा 160.88 है। इन दोनों समूहों का प्रमाप विचलन क्रमशः 21.99 व 22.25 हैं। अतः दोनों के मध्यमानों के अंतर का टी मूल्य 1.77 है। ये मूल्य 98 स्वतंत्रता की कोटि हेतु 0.05 स्तर पर विश्वास मूल्य 1.98 तथा 0.01 के विश्वास मूल्य 2.62 से कम है। अतः दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर नहीं है।

उच्च संगठनात्मक वातावरण व निम्न संगठनात्मक वातावरण वाले सरकारी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार में अंतर प्राप्त नहीं हुआ है।

सारणी संख्या–2 (निजी विद्यालय)

समूह (प्रधानाध्यापक)	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
पुरूष	50	157.78	20.24	98	1.65	असार्थक
महिला	50	164.82	22.46			

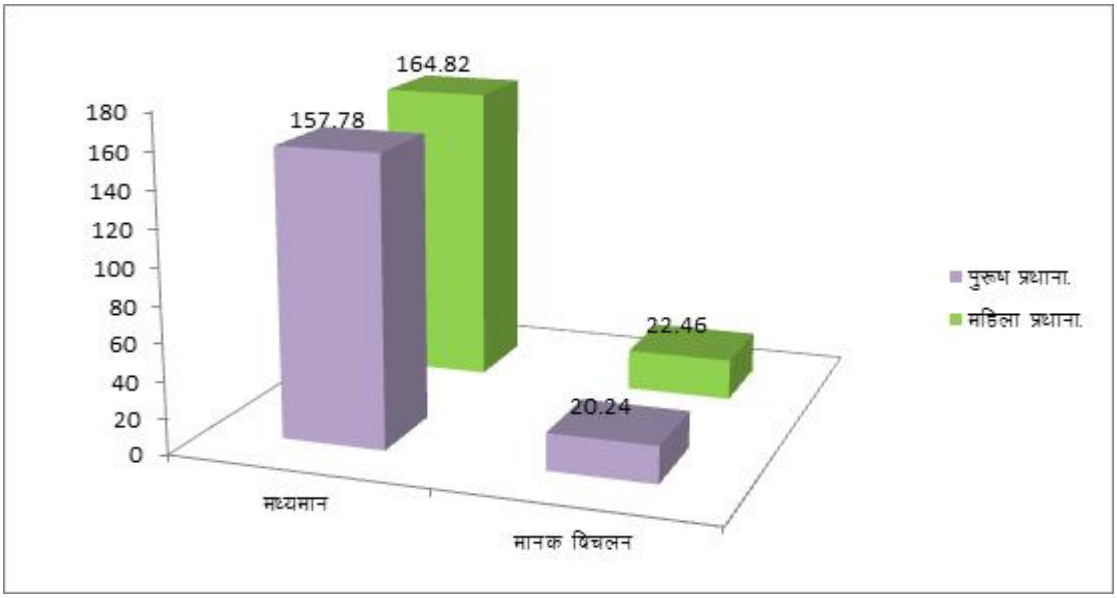

परिणाम एवं व्याख्या –

सारणी संख्या 2 के अनुसार व रेखाचित्र के अनुसार स्पष्ट होता है कि उच्च संगठनात्मक वातावरण व निम्न संगठनात्मक वातावरण वाले निजी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार का मध्यमान क्रमशः 157.78 तथा 164.82 है। इन दोनों समूहों का प्रमाप विचलन क्रमशः 20.24 व 22.46 हैं। अतः दोनों के मध्यमानों के अंतर का टी मूल्य 1.65 है। ये मूल्य 98 स्वतंत्रता की कोटि हेतु 0.05 स्तर पर विश्वास मूल्य 1.98 तथा 0.01 के विश्वास मूल्य 2.62 से कम है। अतः दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर नहीं है।

उच्च संगठनात्मक वातावरण व निम्न संगठनात्मक वातावरण वाले निजी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार में अंतर प्राप्त नहीं हुआ है।

सारांश –

अध्ययन के परिणाम से सरकारी व निजी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार पर प्रकाश डालने में मदद मिलेगी। यह शोध ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के सरकारी व निजी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों के प्रशासनिक व्यवहार का अध्ययन करने में भी मदद करेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. अग्रवाल, जे.सी. (1966), एज्यूकेशनल रिसर्च इन इन्ट्रोडक्शन. नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो।
2. अग्रवाल, वी. वी. (1991), 'आधुनिक भारतीय शिक्षा और समस्याएं', विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
3. अग्रवाल, जे.सी. (1966), एज्यूकेशनल रिसर्च इन इन्ट्रोडक्शन. नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो।
4. आहलूवालिया, एस.पी. (1978), मेनवल फॉर टीचर एटीटयूड इन्वेटरी. आगरा, नेशनल साइकोलॉजी कॉरपोरेशन।
5. एलिस, आर.एस. (1951), एज्युकेशन साइकोलॉजी।
6. एनास्तसी, ए. मनोवैज्ञानिक जॉच : न्यूयार्क, मैकमिलन कम्पनी।
7. कटारिया, डॉ. सुरेन्द्र (2005), प्रशासनिक सिद्धांत एवं 'प्रबन्ध', नेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ पेज–66.
8. कपिल, एच.के. (1978), अनुसंधान परिचय. आगरा, हर प्रसाद भार्गव पब्लिकेशन।
9. कपिल, एच.के. (2007), अनुसंधान विधियाँ, एच. पी. भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
10. कपिल, एच.के. (2010), सांख्यिकी के मूल तत्व, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा–2.
11. गैरिट, ई. हेनरी (1989), शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग, कल्याणी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
12. कोठारी, डी.एस. (1966), शिक्षा आयोग शिक्षा मंत्रालय. नई दिल्ली।
13. जैन, किशनचंद (1999), 'शैक्षिक संगठन, प्रशासन एवं पर्यवेक्षण', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
14. डॉ. अस्थाना, बिपिन, ''मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन'', नवीन संस्करण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
15. डॉ. जायसवाल, सीताराम (1967), ''शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन'' शिक्षा मनोविज्ञान कोश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
16. डॉ. शर्मा, आर.ए. ''शिक्षा अनुसंधान'' आर.लाल बुक डिपो, मेरठ।
17. डॉ. भटनागर, सुरेश, ''शिक्षा मनोविज्ञान'' आर.एल.बुक डिपो, मेरठ।
18. डॉ. दुर्गादास, काशीनाथ संत, कुलकर्णी, डॉ. एस. (1999) शोध विज्ञान कोष, 21–ए, दरियागंज, नई दिल्ली।
19. डॉ. माथुर, एस.एस. 'विद्यालय संगठन एवं स्वस्थ शिक्षा', विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
20. डौंडियाल एस., फाटक ए. (1982), ''शैक्षिक अनुसन्धान का विधिशास्त्र'', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर (संस्करण द्वितीय)

21. बसंत प्रताप सिंह (प्रमुख सचिव), उच्च शिक्षा विभाग, उच्च शिक्षा में गुणवत्ता, प्रबंधन पुस्तक, पृष्ठ–5.
22. बार्ग वाल्टर आर. (1965), एजूकेशन रिसर्च इन इन्ट्रोडक्शन, नई दिल्ली, डेविड सिक्की कम्पनी, नई दिल्ली।
23. भटनागर, डॉ. आर.पी. (2009), शैक्षिक प्रशासन, लायल बुक एवं अग्रवाल विद्या डिपो, मेरठ, पृष्ठ 170.
24. महरोत्रा, डॉ. पी.एन. (2010), भावी शिक्षा एक परिदृश्य, एकलव्य शिक्षण व प्रशिक्षक महाविद्यालय, टोंक, पृष्ठ 249, 254.
25. सिडाना, प्रो. अशोक एवं शर्मा, डॉ. अंजली (2008), शैक्षिक प्रबन्धन एवं विद्यालय संगठन, शिक्षा प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ–67.
26. राय, पारसनाथ (2007). 'शैक्षिक प्रशासन एवं विद्यालय संगठन', लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
27. शर्मा, आर. ए. (2007), अध्यापक शिक्षा, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, पृष्ठ–185.
28. शर्मा, आर. ए. (2007), शिक्षा प्रशासन एवं प्रबन्धन, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, पृष्ठ – 294.
29. शर्मा, आर. ए. (2008), शिक्षा अनुसंधान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, पृष्ठ–100.

Journals and Magazines -

1. भारतीय आधुनिक शिक्षा, अप्रैल–2009, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।
2. राजस्थान बोर्ड शिक्षण पत्रिका, अप्रैल–2011, सितम्बर–2011.
3. राजस्थान बोर्ड शिक्षण पत्रिका, अप्रैल 2012 से सितम्बर 2012.
4. नई शिक्षा, राष्ट्रीय शैक्षिक संवाद की पत्रिका, वर्ष – 62 अंक – 5.
5. प्राथमिक शिक्षक, शैक्षिक संवाद की पत्रिका, अप्रैल–जुलाई 2009.
6. शिक्षक अन्तर्दृश्टि, द्विमासिक पत्रिका, जनवरी–फरवरी 2014, वर्ष–1 अंक–4.

Webliography :-

1. www.rspb.org.uk/webcams/projects
2. www.bbc.co.uk/schools/scienceclips/
3. www.ase.org.uk
4. www.elsevier.com/
5. www.shodhganga.net
6. www.usq.edu.au/users/albino/papers/site99/1345.html
7. http://www.nict.com/rajasthan-project.html
8. www.education.nic.in/ed/50yearshome.htm.
9. www.iel.org
10. www.aca/demon.co.uk
11. www.vedamsbooks.com
12. www.2.gsu.edu
13. www.vedamsbooks.com
14. www.eslteachersboard.com
15. www.aare.edu.au

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 66-70

पंजाबी प्रवासी कहानियों में वृद्ध विमर्श

भक्ति कुमारी
शोधार्थी, हिंदी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

प्रवासी साहित्य ऐसा साहित्य है, जिसका सृजन ऐसे लोगों के द्वारा किया जाता है जो अपने मूल देश को छोड़कर विदेशों में निवास कर रहे हों। इस तरह की लगभग साहित्यिक रचनाएँ अपने मूल देश की भाषा एवं संस्कृति से जुड़कर मातृभाषा में कि जाती हैं। यदि भारत के संदर्भ में बात करें तो कहा जा सकता है कि, भारतीय मूल के वे रचनाकार जो विश्व के अन्यान्य देशों में रहकर अपनी मातृभाषा अर्थात हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं से जुड़कर रचना कर रहे हैं उन्हें प्रवासी लेखक तथा उनके कृतित्व को प्रवासी साहित्य कहा जा सकता है। साहित्य समाज का दर्पण है और साहित्यकार उस दर्पण का निर्माता। युगद्रष्टा साहित्यकार अपने अतीत से प्रेरणा लेते हुए वर्तमान के आइने में भविष्य का निर्माण करता है। साहित्य जन समुदाय की भावनाओं की अभिव्यक्ति है, जन समुदाय की भावनाओं तथा देश, काल एवं वातावरण में परिवर्तन के साथ साहित्य का स्वरूप बदलता चला जाता है।

वर्तमान युग विज्ञान और वैचारिकी का युग है, जीसका प्रभाव साहित्य की लगभग सभी विधाओं पर दिखालाई पड़ता है। विज्ञान और तकनीकी ने नवीन चेतना को जन्म दिया। जिससे हासिए पर पड़ा समाज आपनी सत्ता और इयत्ता को पहचाना, उसके अंदर भी निजत्व की भावना बलवती हुई। जिससे परिणामस्वरूप साहित्य में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, किसान विमर्श, किन्नर विमर्श की अवधारणा नें जन्म ली, इन सब पर खुलकर विचार किया जानें लगा।

वर्तमान आपाधापी भरे जीवन तथा अतिशय महत्वाकांक्षा से घर में पड़े बूढ़े–बुजुर्गों के प्रति उपेक्षा का भाव पनपने लगा। यह भाव सिर्फ भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में दिखाई देता है, जिससे पिछले कुछ वर्षों में हमारे समाज में वृद्ध जीवन से जुड़ी एक नवीन समस्या ने जन्म लिया। जिसे आज का साहित्यकार अपने कृति व्यक्तित्व में महती स्थान दे रहा है। अतः कहा जा सकता है कि वृद्ध विमर्श का अर्थ साहित्य के माध्यम से वृद्ध जीवन की विसंगतियों पर चर्चा–परिचर्चा के साथ वृध्दावस्था से जुड़ी समस्याओं को समझकर समाधान प्रस्तुत करने से है।

वृद्ध जीवन से जुड़ी समस्याएं कमोबेश हर जगह एक सी हैं, चाहे देश हो अथवा विदेश। जिसे प्रवासी पंजाबी कहानियों के माध्यम से समझने का प्रयास किया जाएगा।

वृद्ध जीवन किसी समाज की अमूल्य धरोहर होता है, क्योंकि उनके पास जीवन–जगत से जुड़े अनेक

अनुभव होते हैं जिनसे युवा वर्ग बहुत कुछ सीख सकता है। किन्तु वृद्धावस्था की कुछ समस्याएँ भी हैं – तनाव, अपेक्षा, द्वंद्व, एकाकीपन इत्यादि जिसे वह किसी न किसी के साथ साझा करना चाहता है। लेकिन आज के अतिशय भौतिकतावादी जीवन में सगे–सम्बंधियों के पास इतना समय नहीं होता कि, उनके पास बैठकर कुछ बातें कर सकें। ऐसे में वृद्ध जीवन अलग–थलग पड़ता जा रहा है। जिसको आधार बनाकर पिछले 15 वर्षों में अनेक प्रवासी पंजाबी साहित्यकारों ने कहानियाँ लिखी हैं। इन कहानियों में जहाँ एक तरफ बढ़ती उम्र की चुनौतियाँ मौजूद हैं वहीं दूसरी तरफ शेष जीवन को काटने की मनःस्थिति एवं अपनों से उपेक्षा का दर्द चित्रित है। चूँकि बढ़ती उम्र के साथ अधिकतर लोग किसी न किसी बीमारी से ग्रसित हो जाते हैं। वृद्ध जीवन से जुड़ी समस्याओं के पीछे कहीं न कहीं पारिवारिक विघटन भी जिम्मेदार है, क्योंकि वर्तमान समय में बहुत कम ही सन्तानें माता–पिता को अपने साथ रखना चाहती हैं। प्रसिद्ध स्त्री विमर्शकार 'सिमोन' अपनीं कृति 'द सेकेंड सेक्स' में लिखती हैं वृद्धावस्था की चुनौतियाँ महिला और पुरुष जीवन में अलग–अलग तरह की होती हैं – 'वृद्ध आश्रम के जीवन को महिलाएँ अधिक सफलता से अपना लेती हैं। महिलाएँ आपस में हँस–बोलकर, साफ–सफाई से लेकर खाना पकाने तक के कामों में अपनी दिनचर्या बिता लेती हैं। पुरुषों के लिए ऐसा कोई कार्य नहीं होता है।'

'परवेज संधू' की कहानी बेघर में जहां एक तरफ उपेक्षित और एकाकी वृद्ध जीवन को दर्शाती है वहीं दूसरी तरफ भारतीय एवम विदेशी पृष्ठभूमि में वृद्धों के प्रति संवेदना में क्या अंतर है इसे भी स्पष्ट रूप देखा जा सकता है– 'उस दिन भी आज की तरह खूब बारिश हो रही थी। मुझे वह बुजुर्ग याद आ गए, जिसे मैंने पहली बार स्कूल के पीछे वाले कॉफी शॉप के बरामदे में बैठा देखा था। कोई साठ पैसठ बरस का व्यक्ति, तन पर चिथड़े, हाथों में फटे हुए दस्ताने, एकदम फटे हुए जूत्ते, ऊन की मैली सी टोपी मैल से भी मैला ओवरकोट, बढ़ी हुई दाढ़ी किसी अज्ञात में देखती हुई आंखें, चेहरे पर न खुशी, न गम जैसे भाव और बगल में कसकर थामी हुई गठरी।'[1] वृद्धावस्था में जब अपने लगे–सगे, सम्बन्धियों अर्थात ज्ञात व्यक्तियों के द्वारा मुख मोड़ लिया जाता है तो वृद्ध जीवन शून्य तथा अज्ञात की तरफ देखने के लिए मजबूर हो जाता है। लेखक जब दृश्य को देखता है तो उसे बरबस अपने गाँव का श्बाबा लाहीश की याद आजाती है जो किसी का लगा–सगा न होकर भी पूरे गाँव का अपना था– 'बाबा लाही जो मेरे गाँव मे विभाजन के समय उजड़कर आया था। अकेला, न बेटा न बेटी। चाचा मलकीत के घर के सामने और बीरी के घर के साथ बनी अंधेरी कोठरी में रहता। वह सारे गाँव क न होकर भी सभी का अपना था।.....उस गोर बुजुर्ग को देखते मैं अपने गाँव जा पहुँची थी। बारिश से बचने के लिए बरामदे की दीवार से टेक लिये, उसे ठिठुरते देख मैं कमरे में बैठे हुए भी काँपने लगी।'[2]

उपरोक्त तथ्यों से यह पता चलता है कि वृद्ध जीवन मे एकाकीपन हर जगह विद्यमान है। भारत हो या विदेश। फर्क सिर्फ इतना है कि गाँव में आज भी संवेदना बची हुई है जिससे विस्थापित 'बाबा लाही' में पूरा गाँव अपने बड़े बुजुर्गों का दर्शन करते हुए अपना लेता है। वहीं वैदेशिक पृष्ठभूमि पर संवेदना की कोई स्थान नही है। गोरा बुजुर्ग भारी बारीश में भीगने को मजबूर है। इस पर भी लोगों की दुत्कार उसके वार्धक्य को शापित करने में कोई कोर–कसर नहीं छोड़ता।

समय का परिवर्तन कहिए, जनरेशन गैप या घटती नैतिकता ने भी वृद्ध जीवन के प्रति उदासीनता लायी है। व्यक्ति अपनी सारी जवानी सन्तति की देख–रेख, शिक्षा–दीक्षा तथा परवरिश में खपा देता है। लेकिन जैसे

ही संतान कामयाबी की प्रथम सीढ़ी पर पहुँचता है, वैसे ही माता–पिता के समस्त सँघर्षों को भूलकर मनमानीं करने लगता है ऐसी स्थिति में पाल्य के हिस्से में सिर्फ पश्चाताप ही बचता है– 'क्या सोचा था और क्या हो गया। जिस लड़के को एक 'रोल–मॉडल' बनाने के लिए ऊँची तालीम दी। जिसके भविष्य को अधिक उज्ज्वल करने के लिए बाप ने अधेड़ उम्र में परदेशों में धक्के खाना स्वीकार किया, उसने यह क्या...?'[3] जिन बच्चों की ऊँची तालीम तथा अच्छे जीवन के लिए दर्शन और सुरजीत वतन से बेवतन हुए थे वही बच्चे आज बुढ़ापे की लकड़ी न बनकर उन्हें अपनी स्थिति पर जीने के लिए मजबूर कर देते हैं। इतना ही नही इस दाम्पत्य के बड़े पुत्र हरजीत का पत्र उनके पैरों तले की जमीन खिसका देता है– 'पापा जी! सॉरी आप खामख्वाह दुःखी हो रहे हैं, यह देखकर मैं अपना जीवन उस तरह क्यों जी रहा हूँ, जिस तरह से मैं जीना चाहता हूँ। आपके उस दिन के टेलीफोन पर कहे–अनकहे शब्दों के जवाब में मैं आपको अपनी सोच से परिचित करवा देना ठीक समझता हूँ। आपने कहा, आपने पैदा किया, पाला–पोसा, पढ़ाया–लिखाया वगैरह। पता नहीं मेरा यह लिखना आपको कैसा लगे! हर मॉ–बाप औलाद का पौधा यही सोचकर नहीं लगाते। सच पूछो तो औलाद दो व्यक्तियों के आपसी मौज–मेल की उपज होती है। यदि लड़का पैदा हो जाए तो खुशियाँ मनाई जाती हैं और लड़की होने पर उसे मजबूरी समझकर सहन कर लिया जाता है। पैदा करने के बाद बच्चे को पालना एक अनचाही जिम्मेदारी हो ही जाती है। पढ़ाना चाहे 'प्रस्टिल– इशू' समझ ले या 'इन्वेस्टमेंट'। इतनी सारी शिक्षा ग्रहण करने में मेरी अपनी भी कोई विशेषता शामिल हो सकती है। यदि आप मुझे अमरीका न लाते तो इंजीनियर की डिग्री लेकर मैं खुद ही यहाँ आ सकता था। फिर इसमें एहसान कैसा?'[4]

उपरोक्त पत्र का सम्बंध न सिर्फ दर्शन, सुरजीत, हरजीत से है। बल्कि कमोबेश हर उस परिवार से है जहाँ बुजुर्ग अपने सन्तति के कारण, अपने ही परिवार में उपेक्षा का जीवन जीने के लिए मजबूर हैं। जिस माता–पिता ने अपने बेटे के लिए अपनी क्षमता से ज्यादा किया उसी माता–पिता के लिए बेटे के घर मे तनिक स्थान नही है। 'ज्ञानी करनैल सिंह' द्वारा लिखित यह कहानी 'बे–वतन' एक साथ प्रवासी जीवन की कई समस्याओं को उद्घाटित करती है जिसमें से प्रमुख समस्या वृद्ध जीवन का यथार्थ है। कहानीकार ने दर्शन और सुरजीत के दाम्पत्य जीवन को बड़े ही सुनियोजित ढंग से दर्शाया है। इनकी संतति का इनसे और अपनी संस्कृति से विमुख होना इस कहानी का मार्मिक प्रसंग है।

'रत्तीभर सूरज' कहानी के माध्यम से 'बलबीर कौर संघेड़ा' विदेशी संस्कृति के जद में आकर बिगड़ते प्रवासी बच्चों के वृद्ध माता–पिता के जीवन यथार्थ को प्रस्तुत किया है। उक्त कहानी के चरित्र 'सैम' और 'ऐंजला' अपनी मातृभूमि 'जमैका' को छोड़कर 'कैनेडा' में इसलिए जा बसते हैं कि, अपने दोनों बच्चों को वह सारी सुख–सुविधाएँ मुहैया करा सकें जिससे उनका जीवन बंचित रह गया। बच्चों का भविष्य उज्ज्वल बनाने के लिए दिन रात मेहनत करके घर–बार, बैंक–बैलेंस इकट्ठा करने वाली उक्त दम्पत्ति की एक अच्छी खासी साख थी, दो करोड़ के मलिक थे। किंतु बच्चे बड़े होकर गलत रास्ते पर चल पड़े, जिससे इनकी सारी जायदाद और मरजाद बर्बाद हो जाती है। बचता है तो सिर्फ पश्चाताप और एकाकीपन– 'निःसन्तान व्यक्ति की चाह औलाद के लिए होती है और यदि औलाद हो तो चैन भी नहीं मिलता। सैम और ऐंजला को ही देख लो, कैसे अपना बुढ़ापा ढो रहे हैं। पता ही होगा, इनके दो बच्चे थे। दोनों गलत रास्तों पर चल पड़े। माँ–बाप पैसा कमाने की होड़ में लगे रहे। घर–बैलेंस बनाते रहे। सोचते होंगे, जमैका से यहाँ आए हैं तो बच्चों का भविष्य उज्ज्वल बना

देंगे। जो कुछ हम नहीं देख पाए, भोग नहीं पाए, सब इनकी झोली में डाल दें, परन्तु हुआ इसके उलट, बना बनाया सब कुछ पल भर में खत्म हो गया। इसके लड़के पीटर ने पता नहीं कहाँ से गन ले ली।'[5] आधुनिक शिक्षा तथा घटती नैतिकता ने युवा पीढ़ी में माता–पिता के प्रति अविश्वास को जन्म दिया है। आज की युवा पीढ़ी खुद को ज्यादा समझदार तथा बुद्धिजीवी मानने लगी है, जबकि ऐसा नही है वृद्धजन के पास भोगा हुआ यथार्थ होता है जिससे सीख लेकर हम अपने जीवन को बेहतर बना सकते हैं। मारग्रेट तथा किरन अपने बच्चों को उच्च शिक्षा देकर कामयाब बना देते हैं, किंतु उनके विचारों की उड़ती पतंग तब कटकर नीचे गिर जाती है जब वही उनकी बातों का कद्र न करते हुए मनमानी करने लगते हैं– 'मैनें दोनों लडकों को पढ़ा लिखा दिया था। जॉन फाइनेंस कंपनी में मैनेजर था। छोटा राजा अधिक पढा लिखा नही। था, परन्तु वह साउंड टेक्नोलॉजी का कोर्स करके काम की तलाश कर रहा था। एक दो जगह पर पार्ट टाइम भी कर रहा था। थोड़ा सा सुस्त था, परंतु मुझे मालूम था, वह अपनी जिंदगी जल्द ही सँवार लेगा। मेरी बेटियाँ पढ़ने में होशियार थीं।.....काम पढ़ाई और फ्रेंड्स के अलावा उनके पास वक्त ही नहीं था। विवाह शादी के लिए तैयार नहीं थी। जब भी जब भी मै शादी व्याह की बात छेड़ती या किसी से मिलने के लिए कहती, कभी मान लेती, कभी मना कर देती। सौ–सौ नुक्स निकालती।....बात क्या, वे मुझे बुद्धू बनाए रखतीं।' उक्त कथन आधुनिक समाज में वृद्ध जीवन का यथार्थ अवलोकन है। कमली जब ये सब घटनाएँ देखती है तो उसे मारग्रेट का वह कथन बार–बार याद आती है, जिसमें वह बच्चों से सावधान रहने की बात करता था– 'तुम्हें बच्चों के साथ एक बाउंड्री बनाकर रखनी चाहिए, आदर की, विश्वास की, डिसिप्लिन की। माँ–बाप को अपना अस्तित्व बनाकर रखना चाहिए, वरना बच्चे तुम्हें मिलिटरी जूतों के समान लताड़ते हुए निकल जाएँगे।'[6] सचमुच वर्तमान समय की यही हकीकत है। यदि व्यक्ति स्वयं के व्यक्तित्व को न बचाए रखनें में सफल न हो पाया तो, स्वार्थ और ढोंग की दहलीज पर खड़े रिश्ते मिलिटरी जूतों के समान लताड़ते हुए निकल जाएँगे।

वृद्ध जीवन की सबसे बड़ी चुनौती है एकाकीपन। जिसमें वृद्ध दम्पत्ति की आँखे टकटकी लगाए अपने संतान की राह निहारती रहती हैं। किन्तु उनकी संतान के पास इतना भी समय नही रहता कि उनके पास बैठकर उनकी मनोदशा को जान सकें। 'रत्ती भर सूरज' कहानी में इस समस्या को भी उठाया गया है। यथा– 'उड़ान भरती जिंदगी जब ढलान की ओर चली तो धड़ाम से खाली मैदान में जा गिरी। भरे–भराए घर में कुछ बाकी न रहा।दीवारों के घेरे में तन्हाई की गंध बाकी रह गई। केवल अकेले पन का वास। गूँजती हँसी लुप्त हो गई। और मैं पगली, वह कोने तलाश करने लगी, जहाँ से महकती हवाएँ मुख मोड़कर खिजाओं में बदल गई थीं। वक्त निकल गया। सोचती हूँ, बच्चों की किलकारियाँ कहीं इन कोनों में गूँजते हुए बस गई होंगी। मेरे कान उन्हें सुनने का यत्न करते, परन्तु सभी आवाजें पता नहीं किस कोने में उड़न–छू हो गई थीं। इन सबके बीच मेरा घर सायं–सायं करता सुनाई देता। बीच में मैं खड़ी होती। अपनी खिड़की से आते जाते लोगों को, दुनिया को देखती रहती, जिसमें मैं, खुद को खोया महसूस करती।'[7] माता–पिता जब अपने युवावस्था में होते हैं तो बच्चों की हर जरूरतों को पूरा करने में अपनीं जरूरतों को भूल जाते हैं। किंतु वही बच्चे अपने पैरों पर खड़े होने के बाद महकती हवाओं की तरह वृद्ध माता–पिता से विमुख होकर खिजाओं में बदल जाते हैं। और माता पिता के पास रहजता है, सूना आकाश, कमरे, दीवारें, दीवारों से लगी बचपन की कुछ यादें, किलकारियाँ जसके सहारे वे अपना वार्धक्य जीवनयापन करने के लिए मजबूर हो जाते हैं।

वर्तमान दौर के टूटते पारिवारिक रिश्तों को सम्हालने में भी बुजुर्गों का महती योगदान है। 'रविंद्र रवि' की कहानी 'कम्प्यूटर कल्चर' में युवक का पिता अपने पुत्र से अभी तक के जीवन में कुछ भी नही माँगा था। किन्तु आज जब वह जीवन के अंतिम पड़ाव पर है तो अपने पुत्र से सिर्फ नाराज पत्नी और पुत्र को साथ रखने की माँग करता है– 'एक दिन उन्होंने बहुत बड़ी माँग कर दी। कहने लगे, मैंने आज तक तुझसे कुछ माँगा नहीं। अब मौत किनारे पर है। तुम्हारी पत्नी, तुम्हारे बच्चों का दुःख मुझसे देखा नहीं जाता। तुम्हारी पत्नी इतनी समझदार नहीं, परन्तु वह कुछ समझ गयी है। तुम इन्हें अपने पास बुला लो।'[8] वृद्ध पिता की यह माँग कहीं न कहीं विघटित होते परिवार को बचाने का सराहनीय प्रयास है।

इसी तरह की अन्य पंजाबी प्रवासी कहानीकारों की अन्य कहानियाँ भी हैं जिसमें वृद्ध जीवन की सबल और दुर्बल पक्ष यथार्थ के साथ चित्रित किये गए हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि इन कहानियों में न सिर्फ वृद्ध जीवन से जुड़ी समस्याओं को उकेरा गया है बल्कि समाधान भी प्रस्तुत किया गया है। अतएव हम कह सकते हैं कि पंजाबी प्रवासी कहानीकारों की कहानियाँ वृद्ध जीवन का यथार्थ प्रस्तुत करने में सिद्धस्थ हैं।

सन्दर्भ :

1. सम्पादक, गोपाल अरोड़ा, पंजाबी प्रवासी कहानियाँ, पृ. 21/22
2. वही, पृ. 22
3. वही, पृ. 41
4. वही, पृ. 42
5. वही, पृ. 72
6. वही, पृ. 75
7. वही, पृ. 71
8. वही, पृ. 85

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 71-73

स्वदेश दीपक की रचनाओं में बाजारवाद

श्रीमती लक्ष्मी साहू
शोधार्थी, फीरोज गाँधी कॉलेज, रायबरेली, उ0 प्र0।

प्रस्तावना :

स्वदेश दीपक हिंदी साहित्य के उन महत्वपूर्ण रचनाकारों में अग्रणी हैं, जिन्होंने अपने साहित्य में युग–परिवेश की जटिलताओं, सामाजिक अंतर्विरोधों और बदलते मूल्यों को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। उनका लेखन केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि समय की सच्चाई को पकड़ने का एक सशक्त माध्यम है। 1970 के दशक से 1990 तक का भारत, जहाँ एक ओर आधुनिकता, भूमंडलीकरण और उदारीकरण की ओर बढ़ रहा था, वहीं दूसरी ओर जातिवाद, वर्ग संघर्ष, भ्रष्टाचार, मानसिक असंतुलन और मूल्यहीनता जैसी समस्याओं से भी जूझ रहा था। स्वदेश दीपक ने अपनी कहानियों, नाटकों और आत्मकथात्मक लेखन के माध्यम से इन सभी पक्षों को अत्यंत मार्मिक और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया। उनकी चर्चित रचना 'कोर्ट मार्शल' न केवल सेना जैसे अनुशासित संस्थान की परतें खोलती है, बल्कि जातिवाद जैसे सामाजिक कलंक को भी उजागर करती है। उनकी कहानियाँ जैसे मानसिक तनाव और अवसाद से जूझते व्यक्ति की कहानी कहती हैं, जो उस युग के मानसिक परिवेश को उकेरती हैं। स्वदेश दीपक का साहित्य उस संक्रमण काल का दस्तावेज है, जिसमें भारत परंपरा और आधुनिकता, नैतिकता और अवसरवाद, संवेदना और संवेदनहीनता के बीच झूल रहा था।

बाजारवाद की अवधारणा और उसका सामाजिक प्रभाव :

बाजारवाद एक ऐसी सामाजिक–आर्थिक विचारधारा है, जिसमें उपभोक्तावाद, लाभार्जन और व्यापारिक प्रतिस्पर्धा को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इस व्यवस्था में हर वस्तु, सेवा, विचार और संबंध एक उत्पाद बन जाते हैं, जिन्हें खरीदा–बेचा जा सकता है। आधुनिक युग में अर्थ को जीवन का नियामक मान लिया गया है। डॉ. ओमप्रकाश सारस्वत के अनुसार, "धन का अभाव मानव की समस्त आकांक्षाओं को ध्वस्त कर देता है, परंतु दूसरी ओर धन से जीवन सुखी ही नहीं, समाज में प्रतिष्ठा भी मिलती है।" यह बाजारवादी सोच व्यक्ति को पैसे के मूल्य से तौलती है और मानवीय संबंधों को भी वस्तु में बदल देती है।

स्वदेश दीपक के साहित्य में बाजारवाद के विविध आयाम

1. आर्थिक अभाव और पारिवारिक विघटन :

"काल कोठरी" नाटक के सभी पात्र आर्थिक अभाव की समस्या से ग्रस्त हैं। रंगजीवी कलाकार रजत के घर की आर्थिक स्थिति अत्यंत बुरी है। कला की धुन में रजत कोई दूसरा काम नहीं करना चाहता, जिससे उसके

परिवार को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उसकी पत्नी मीना की व्यथा, "मार दो भूखा हम सबको कला के नाम पर स करते रहो थियेटर स और कुछ नहीं तो एक लम्बी रस्सी ला दो..... हर रोज की भूख से तो लम्बी रस्सी सस्ती भी है और सुखद भी स", बाजारवादी समाज में कला और संवेदना के लिए स्थान न होने की ओर संकेत करती है। रजत के पिताजी और बहन शोभा का नौकरी करना, परिवार की आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए संघर्ष, बाजारवाद के दबाव में पारिवारिक संबंधों के विघटन को दर्शाता है।

2. धर्म और बाजारवाद :

धर्म का सच्चा संबंध आत्मिक और आध्यात्मिक तत्वों से है परंतु आज धर्म में भौतिक तत्वों का अंतर्भाव हो गया है। धर्म का अर्थ तथाकथित धार्मिक कहलाने वाले धर्म के दलालों ने अपनी स्वार्थ प्रवृत्ति से सांप्रदायिक रंग देकर अपने दृष्टिकोण से परिभाषित एवं प्रचारित–प्रसारित किया है। धर्म का संबंध आत्मा से है परंतु धर्म के दलालों ने इसका संबंध, भौतिक आडंबर–कर्मकाण्ड से जोड़ दिया है। अंतः बाजारवाद के कारण धर्म वर्तमान में आत्मिक नहीं बल्कि बाहरी प्रदर्शनीय वस्तु बन गयी है। परिणामतः कर्मकांड एवं बाह्य आडंबरो के चक्कर में उलझ कर निरंतर विकसित एवं शिक्षित सामाज इसकी चपेट में आ रहा है।

अंतः कहना होगा कि धर्म के नाम पर आस्था और श्रद्धा का बाजारीकरण कर धर्म के तथा–कथित ठेकेदार धर्म का नशा पिलाकर समाज को पथभ्रष्ट कर रहे है। नाटककार स्वदेश दीपक ने नाटक "बाल भगवान" द्वारा ग्रामीण परिवेश, की अनपढ़ और श्रमजीवी भोली–भाली जनता को धर्म के प्रति उनके दृष्टिकोण एवं अंधविश्वास का फायदा उठाकर धर्म के नाम पर अपना स्वार्थ सिद्ध करने वाले लोगों की ओर संकेत कर अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को निभाया है। 'मास्टर – पडित जी! पहली बार इतने अमीर आदमी शरण में आए है। सोचो अगर भगवान के बताने से उन लोग का काम बन जाए तो एक ही बारी में आपका मकान पक्का बन जाए। चाढ़ावे के आटे–दाल से तो बना लिया मकान।

3. न्याय व्यवस्था और बाजारवाद :

वर्तमान समाज में सामान्य व्यक्ति को न्याय मिलना मुश्किल हो रहा है। हमारी न्याय व्यवस्था गवाह और सबूतों के अर्ध सत्य को पूर्ण सत्य मानकर न्याय देती है। न्याय व्यवस्था के मिलों लंबे रास्ते होने से न्याय पाने में इतना विलंब हो जाता है कि तदुपरान्त प्राप्त न्याय अन्याय प्रतीत होता है। "कोर्ट मार्शल" नाटक में न्याय व्यवस्था की विसंगतियाँ, बाजारवादी समाज में न्याय के स्थान पर प्रमाण और प्रक्रिया की प्रधानता को दिखाती हैं। रामचंद्र जैसे पात्र का आत्मसम्मान के लिए किया गया संघर्ष, न्याय व्यवस्था की अमानवीयता और संवेदनहीनता पर करारा व्यंग्य है। गरीब और कमजोर वर्ग के लिए न्याय पाना कठिन हो गया है, क्योंकि बाजारवादी व्यवस्था में पैसा और प्रभाव ही निर्णायक बन गए हैं। इसलिए न्याय के नाम पर रामचंदर को सजा ए मौत दी जाती है, तब सभापति जज कर्नल सूरज सिंह यह महसूस करते हैं– "पहली बार मुझे इस दिल दहला देने वाले सत्य का पता चला की जब हम किसी की जान लेते है तो हमारे प्राणों का एक हिस्सा भी मर जाता है, मरने वालों के साथ। "सबसे उदास कविता" में भी न्याय व्यवस्था की असमानता और अमीर–गरीब के बीच न्याय के दोहरे मापदंडों को उजागर किया गया है।

4. सामाजिक विघटन और बाजारवाद :

स्वदेश दीपक के साहित्य में सामाजिक विघटन की प्रवृत्ति, बाजारवाद के कारण पारंपरिक मूल्यों, आपसी

विश्वास और नैतिकता के क्षरण के रूप में सामने आती है। जातिगत भेदभाव, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, गरीबी, और झोपड़पट्टी की समस्या – ये सभी बाजारवादी व्यवस्था के दुष्परिणाम हैं, जिन्हें लेखक ने अपनी रचनाओं में गहराई से उकेरा है। "एक जैसे चेहरे", "तमाशा", "पापी पेट" जैसी कहानियाँ बाजारवाद के कारण उत्पन्न बेरोजगारी, गरीबी और सामाजिक असमानता को उजागर करती हैं।

5. मानवीय संवेदना का ह्रास :

बाजारवाद के प्रभाव से व्यक्ति और समाज के बीच की दूरी बढ़ गई है। संवेदना, सहानुभूति और नैतिकता का स्थान स्वार्थ, प्रतिस्पर्धा और लाभ ने ले लिया है। स्वदेश दीपक के पात्र मानसिक तनाव, असुरक्षा, और अस्तित्व के संकट से जूझते हैं, जो बाजारवादी समाज की देन है।

6. महिलाओं की स्थिति और बाजारवाद :

यद्यपि स्वदेश दीपक का लेखन पुरुष अनुभवों पर अधिक केंद्रित है, फिर भी उनकी रचनाओं में महिला पात्रों की स्थिति, पितृसत्तात्मक समाज और बाजारवादी सोच के कारण उत्पन्न मानसिक द्वंद्व को भी गहराई से चित्रित किया गया है। महिलाओं की अस्मिता, स्वतंत्रता और सम्मान के प्रश्न को लेखक ने कई बार व्यंग्य और आलोचना के माध्यम से उठाया है।

7. प्रतिरोध और सृजनात्मकता :

स्वदेश दीपक के साहित्य में प्रतिरोध की भावना है, लेकिन यह प्रतिरोध हिंसात्मक नहीं, बल्कि सृजनात्मक है। वे अपने पात्रों के माध्यम से समाज के अंतर्विरोधों, अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाते हैं। उनका साहित्य मानवीय गरिमा, न्याय और संवेदना की पुनर्स्थापना की कोशिश करता है।

निष्कर्ष :

स्वदेश दीपक के साहित्य में बाजारवाद केवल एक आर्थिक विचारधारा नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक संकट के रूप में उभरता है। उनके पात्र, कथानक और संवाद बाजारवादी समाज के अंतर्विरोधों, विघटन और पीड़ा को अत्यंत यथार्थता के साथ प्रस्तुत करते हैं। उनका साहित्य हमें यह सोचने के लिए विवश करता है कि बाजारवाद के इस दौर में हम क्या खो रहे हैं– संवेदना, नैतिकता, और मानवीयता। स्वदेश दीपक की रचनाएँ न केवल अपने समय का प्रतिबिंब हैं, बल्कि आने वाले समय के लिए चेतावनी और मार्गदर्शन भी हैं।

संदर्भ :

1. दीपक, स्वदेश. कोर्ट मार्शल. राजकमल प्रकाशन, 1991
2. दीपक, स्वदेश. मैंने मांडू नहीं देखा. वाणी प्रकाशन, 2003
3. सिंह, रेखा. स्वदेश दीपक की कहानियों में स्त्री विमर्श व आलोचना, 2010
4. यादव, रामनिवास. हाशिए के लोग स्वदेश दीपक का साहित्य व समकालीन भारतीय साहित्य, 2015
5. दीपक, स्वदेश. काल कोठरी. वाणी प्रकाशन, 1999
6. दीपक, स्वदेश जी की अन्य रचनाएं और लेख।
7. स्वदेश दीपक का साहित्य, विविध आयाम, डॉ सुरेश कुमार, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. नाटककार स्वदेश दीपक, श्वेता कुमारी, अमन प्रकाशन, कानपुर।
9. अन्य पत्र एवं पत्रिकायें।

मो0 9793300339, ईमेल : laxmisahu979@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 74–79

भरतपुर जिले के माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापनरत शिक्षकों के शैक्षिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

प्रियंका कुमारी, शोधार्थी,
डॉ. प्रभा कुमारी, एसोसिएट प्रोफेसर
चौ. जगनसिंह एजूकेशनल इंस्टीट्यूट, तुहिया, भरतपुर, राजस्थान।

सारांश :

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास के साथ मूल्यों का विकास करना भी है। परन्तु यह तभी संभव है जब शिक्षक स्वयं मूल्यों का पालन करता हो। अतः इस शोध में माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में अध्यापनरत शिक्षकों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन भरतपुर जिले के ग्रामीण व शहरी महिला व पुरूष अध्यापकों के सन्दर्भ में किया गया है। शैक्षिक मूल्यों के अध्ययन हेतु डॉ. हरभजन एल सिंह एवं डॉ. एस. पी. आहलूवालिया द्वारा निर्मित शिक्षक मूल्य सूची का प्रयोग किया है। जिसमें मूल्यों के 6 आयामों सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्यपरक, सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक पर विवेचना की गई है। निष्कर्ष रूप में दोनों क्षेत्रों के महिला व पुरूष शिक्षकों के मूल्यों में सांख्यिकी आधार पर कोई अंतर प्राप्त नहीं हुआ परन्तु मध्यमानों के आधार पर शहरी क्षेत्र की महिला शिक्षकों में सैद्धान्तिक, आर्थिक व राजनीतिक मूल्य उच्च पाये गये तथा पुरूष शिक्षकों में सौन्दर्यात्मक व सामाजिक मूल्य उच्च पाये गये। ग्रामीण महिला शिक्षकों ने धार्मिक व राजनीतिक आयाम पर उच्च मान प्राप्त किये तथा पुरूष शिक्षकों ने सामाजिक, सौन्दर्यात्मक तथा सैद्धान्तिक आयाम पर उच्च मान प्राप्त किये।

1. प्रस्तावना –

शिक्षा केवल ज्ञान प्रदान करने का साधन नहीं है, बल्कि मानवीय मूल्यों का संवाहक भी है। शिक्षा के माध्यम से ही व्यक्ति के चरित्र, व्यक्तित्व एवं सामाजिक उत्तरदायित्व का विकास होता है। इस प्रकार शिक्षा का मूल उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन तक सीमित न होकर जीवनोपयोगी एवं मानवीय मूल्यों का विकास करना है। शिक्षक इस प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण घटक है। विद्यार्थी अपने शिक्षक से केवल विषयगत ज्ञान ही नहीं सीखते, बल्कि उसके व्यवहार, आचरण और दृष्टिकोण से जीवनोपयोगी आदर्श ग्रहण करते है। इसलिए शिक्षक के भीतर निहित मूल्य ही उसके वास्तविक व्यक्तित्व की पहचान होते है।

शिक्षक के शैक्षिक मूल्य ही अध्यापन, आचरण एवं व्यक्तित्व निर्माण में परिलक्षित होते है। शिक्षक मूल्य

वे आदर्श, सिद्धांत और आचार व्यवहार है जो शिक्षक के व्यक्तित्व में निहित रहते है और जो उसके अध्यापन तथा विद्यार्थियों के जीवन निर्माण में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से परिलक्षित होते है।

शैक्षिक मूल्यों को कई प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है। इनमें सबसे पहले नैतिक मूल्य आते है जिनमें ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, अनुशासन और न्यायप्रियता सम्मिलित है। इसके बाद सामाजिक मूल्यों में सहयोग, समानता, सहिष्णुता और सेवा भाव आदि सम्मिलित होते है। मानवीय मूल्य भी महत्वपूर्ण हैं जिनमें दया, करूणा, सहानुभूति और परोपकार जैसी भावना सम्मिलित हैं। इसी प्रकार व्यावसायिक मूल्य शिक्षक के कार्य के प्रति निष्ठा, समयपालन, उत्तरदायित्व और पेशे के प्रति समर्पण को दर्शाते है। सांस्कृतिक मूल्यों के अन्तर्गत परम्पराओं का सम्मान, राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक जागरूकता और सामाजिक सद्भावना का विकास शामिल है। इस प्रकार शिक्षक मूल्यों की विविधता ही उसे आदर्श शिक्षक बनाती है और विद्यार्थियों के जीवन में सकारात्मक प्रभाव डालती है।

2. समस्या का औचित्य –

किसी राष्ट्र की पहचान उसके सम्पन्नता से न होकर उसके नागरिकों के व्यक्तित्व एवं जीवन मूल्यों के आधार पर होती है। व्यक्ति की गुणात्मकता उसके विचारों, भावनाओं एवं कार्यो पर निर्भर करती है और व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास इन सबके विकास पर निर्भर करता है। सम्पूर्ण एवं सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास का दायित्व शिक्षा पर ही है। शिक्षा मनुष्य में उचित आदतों, प्रवृतियों एवं व्यावहारिक दक्षताओं का विकास करती है। ये सब मूल्य बालक अपने घर एवं विद्यालय से विकसित करता है। शैक्षिक मूल्य के महत्व का अनुभव एक सर्वसम्मत मांग है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में मूल्य आधारित शिक्षा, नैतिकता, मानवता और समावेशिता को अत्यन्त महत्व दिया गया है। शैक्षिक मूल्यों को जानने से शिक्षा के स्तर में सुधार के उपाय निर्धारित किये जा सकते है। यह शोध शिक्षा गुणवता में सुधार, अध्यापक प्रशिक्षण नीतियों का निर्धारण, शहरी–ग्रामीण असमानताओं के समाधान, मूल्य आधारित शिक्षा को सुदृढ करने, समाज निर्माण में शिक्षक भूमिका को परखने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मूल्यवान अध्यापक ही श्रेष्ठ नागरिक, नैतिक व सामाजिक व्यक्ति, कर्तव्यनिष्ठ छात्र का निर्माण कर सकते है।

3. शोध उद्देश्य –

1. भरतपुर जिले के शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों का अध्ययन करना।
2. भरतपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों का अध्ययन करना।

4. शोध परिकल्पना –

1. भरतपुर जिले के शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।
2. भरतपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

5. शोध विधि –

शोधकर्ता ने विषय की समस्याओं को भली प्रकार समझकर व अध्ययन संबंधी साहित्य का अवलोकन करके परिकल्पनाओं को ध्यान में रखते हुए शोध हेतु निष्कर्ष निकालने एवं उनकी व्याख्या करने के लिए सर्वेक्षण शोध विधि का चयन किया है ताकि सही परिणाम प्राप्त हो सके।

प्रस्तुत अध्ययन में राजस्थान राज्य के भरतपुर जिले के माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापनरत शिक्षकों को अध्ययन की जनसंख्या माना गया है। इस शोध में उद्देश्य परक न्यादर्श विधि को अपनाते हुए राजस्थान राज्य के भरतपुर जिले के माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापनरत 100 शिक्षकों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया है।

6. शोध उपकरण –

प्रस्तुत शोध में डॉ हरभजन एल सिंह एवं डॉ. एस. पी. आहलूवालिया द्वारा निर्मित शिक्षक मूल्य सूची का प्रयोग किया है। यह सूची भारत के शिक्षकों के उपयोग के लिए डिजाइन की गई है। यह शिक्षकों के 6 मूल्यों सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्यपरक, सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक मूल्यों का आंकलन करने का एक उपकरण है। यह सूची उच्च विश्वसनीयता रखती है जो निम्न तालिका में प्रदर्शित है।

मूल्यों के क्षेत्र	विश्वसनीयता सहसंबंध गुणांक	वैधता सहसंबंध गुणांक
सैद्धांतिक	.74	.48
आर्थिक	.81	.55
सौन्दर्यपरक	.87	.61
सामाजिक	.79	.47
राजनीतिक	.77	.59
धार्मिक	.87	.36

7. विश्लेषण एवं व्याख्या –

अनुसंधान के आंकड़ो के संकलन, सारणीयन तथा सांख्यिकीय विधियों के प्रयोगों के पश्चात् प्राप्त निष्कर्षो का विश्लेषण एवं उनकी व्याख्या की जाती है। इस प्रक्रिया में प्राप्त आंकडो को इस प्रकार व्यवस्थित करते हैं कि वह समस्या के सम्बन्ध में वांछित परिणाम को प्रस्तुत कर सकें।

1. भरतपुर जिले के शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

भरतपुर जिले के शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

तालिका 1.1

क्र. स.	क्षेत्र	महिला शिक्षक (N=25)		पुरूष शिक्षक (N=25)		टी मान	सार्थकता स्तर 0.05 स्तर
		मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन		
	समग्र क्षेत्र	525.5	21.97	530.32	20.31	0.81	असार्थक
1	सैद्धांतिक	95.29	16.44	91.22	15.56	0.90	असार्थक
2	आर्थिक मूल्य	80.54	19.32	77.62	15.89	0.58	असार्थक
3	सौंदर्य संबंधी	78.55	19.25	88.32	16.55	1.92	असार्थक
4.	सामाजिक	103.22	16.80	106.22	14.88	0.67	असार्थक
5	राजनीतिक	80.33	16.55	75.66	13.4	1.10	असार्थक
6	धार्मिक	86.02	23.22	86.23	19.7	0.03	असार्थक

स्वतंत्रता के अंश (df) 48 के लिए सार्थकता स्तर

0.05/0.01 पर तालिका मान = 2.01/2.68

तालिका से स्पष्ट है कि प्रदत्तों की गणना से प्राप्त किया गया 'टी' मान 0.81 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर आवश्यक तालिका मान 2.01 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है कि भरतपुर जिले के शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं है। मध्यमान के आधार पर शहरी क्षेत्र के पुरूष शिक्षकों में महिला शिक्षकों की अपेक्षा शैक्षिक मूल्य उच्च पाये गये।

आंकड़ों के विस्तृत विश्लेषण से यह भी ज्ञात होता है कि भरतपुर जिले के शहरी क्षेत्र की महिला शिक्षक अपने प्रतिपक्ष से सैद्धान्तिक मूल्यों, आर्थिक मूल्यों तथा राजनीतिक मूल्यों में उच्च मान रखती है जबकि सौन्दर्यात्मक तथा सामाजिक मूल्यों में पुरूष शिक्षकों ने उच्च मान प्राप्त किये हैं। धार्मिक मूल्यों में दोनों पक्षों द्वारा प्राप्त मान लगभग समान है। अतः कह सकते है कि महिला शिक्षक आर्थिक व राजनीति के साथ जीवन सिद्धांतों का अधिक अनुपालन करती हैं।

2. भरतपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

भरतपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों

तालिका 1.2

क्र. स.	क्षेत्र	महिला शिक्षक (N=25)		पुरूष शिक्षक (N=25)		टी मान	सार्थकता स्तर 0.05 स्तर
		मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन		
	समग्र क्षेत्र	525.66	20.97	529.32	17.12	0.68	असार्थक
1	सैद्धांतिक	95.66	16.88	97.33	15.98	0.29	असार्थक
2	आर्थिक मूल्य	80.58	18.32	79.99	16.88	0.12	असार्थक
3	सौंदर्य संबंधी	78.15	18.25	88.32	18.55	1.95	असार्थक
4.	समाजिक	102.22	16.8	107.22	13.88	1.15	असार्थक
5	रानीतिक	81.33	16.55	74.66	11.4	1.66	असार्थक
6	धार्मिक	87.55	20.22	84.23	10.7	0.73	असार्थक

स्वतंत्रता के अंश (df) 48 के लिए सार्थकता स्तर

0.05 / 0.01 पर तालिका मान = 2.01 / 2.68

तालिका से स्पष्ट है कि प्रदत्तों की गणना से प्राप्त किया गया 'टी' मान 0.68 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर आवश्यक तालिका मान 2.01 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है कि भरतपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं है। मध्यमान के आधार पर ग्रामीण क्षेत्र के पुरूष शिक्षकों में महिला शिक्षकों की अपेक्षा शैक्षिक मूल्य उच्च पाये गये।

मध्यमान के आंकड़ों से परिलक्षित होता है कि भरतपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र की महिला शिक्षक राजनीति व धार्मिक मूल्यों के उच्च मान प्राप्त करती हैं जबकि सैद्धान्तिक, सौन्दर्यात्मक व सामाजिक मूल्यों में पुरूष शिक्षकों ने उच्च मान प्राप्त किये हैं। आर्थिक मूल्यों में दोनों पक्ष लगभग समान हैं। अतः कह सकते है कि ग्रामीण क्षेत्र के पुरूष शिक्षक अधिक सौन्दर्य पारखी, सामाजिक संबंधों का निर्वहन करने वाले तथा जीवन के उच्च सिद्धांतों का अनुपालन करने वाले हैं। महिला शिक्षक राजनीतिक व धार्मिक क्षेत्रों में अधिक रूचि रखती हैं।

8. निष्कर्ष –

प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्यों के संदर्भ मे शोध आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण एवं विस्तृत व्याख्या के पश्चात मूल्यों से सन्दर्भित कई नवीन तथ्य प्रकाश में आये। इन नवीन तथ्यों पर आधारित प्राप्त परिणामों को

प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्यों के अनुरूप शोधकर्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया। किसी शोध को तब तक पूर्ण नहीं कह सकते जब तक कि वह किसी निष्कर्ष पर न पहुंचे। निष्कर्ष उन सम्पूर्ण तथ्यों का सार है जिनको अनुसंधानकर्ता ने विभिन्न अध्ययनों के अंतर्गत किया। एक श्रेष्ठ शोध की मुख्य विशेषता यह है कि उसके निष्कर्ष वस्तुनिष्ठ तथा वैज्ञानिक विधियों द्वारा संग्रहित प्रदत्तों पर आधारित हों। उन पर शोधकर्त्ता की व्यक्तिगत धारणाएं एवं अनुमानों का किंचित मात्र भी प्रभाव नहीं पड़ता है। प्रस्तुत अध्याय मे शिक्षकों के मूल्यों के अध्ययन के संदर्भ में प्रयुक्त शोध उपकरण शिक्षक मूल्य अनुसूची से प्राप्त शोध आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण, व्याख्या एवं निष्कर्षों से प्राप्त विवरणों को क्रमबद्ध एवं संगठित करके परिकल्पना अनुसार निम्न रूप में प्रस्तुत किया गया है–

परिकल्पना– 1. भरतपुर जिले के शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

उपरोक्त परिकल्पना प्राप्त आँकड़ों व उनके विश्लेषण के आधार पर स्वीकृत की गई क्योंकि टी मान के द्वारा ज्ञात हुआ कि माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

परिकल्पना– 2. भरतपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

इस परिकल्पना को स्वीकृत किया गया क्योंकि टी मान के द्वारा ज्ञात हुआ कि माध्यमिक विद्यालयों की महिला एवं पुरूष अध्यापकों के शैक्षिक मूल्यों में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

सन्दर्भ सूची :

1. आस्थाना, विष्णु (1997), मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
2. अरोडा, रीटा एवं मारवाह सुदेश : शिक्षा मनोविज्ञान एवं सांख्यिकी 23 भगवानदास मार्केट चौडा रास्ता, जयपुर।
3. अल्तेकर, अनंत सदाशिव (2014) : प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति, अनुराग प्रकाशन वाराणासी।
4. गुप्ता एस.पी. (2011) : अनुसंधान संदर्शिका, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
5. गेरी, एन. के. (1983) : ''ए स्टेडी ऑफ टीचर्स प्रोफेशनल रिसपोंसिबिलिटी इन रिलेशन टू एडमिनिस्ट्रेटिव स्टाईल्स'' मीली।
6. कपिल एच के. (1979) : अनुसंधान विधियाँ विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
7. मुकर्जी, एस. एन. (1968) : एज्युकेशन ऑफ टीचर्स इन इण्डिया वोल्यूम–1 एस. चन्द एण्ड कम्पनी, न्यू देहली।
8. राय, पारसनाथ राय, सी.पी. (1973) : अनुसंधान परिचय, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
http://shodhganga.inflibnet.ac.in.

Address- Priyanka Kumari Maruti Nandan TT College Nagla Chandwari Road Near Pushpvatika Colony Bharatpur Rajasthan 321001, Priyankafaujdar88@gmail.com, M.8058338338

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 80-84

Ethics, Governance, Bias and Regulation of Artificial Intelligence

Dr. S. Swarnalatha
Associate Professor, Department of Hindi
Sri Ramakrishna College of Arts & Science, Coimbatore-641006, Tamilnadu, India
Dr. K. P. Mangani
Assistant Professor, Department of Computer Science
Kongunadu Arts and Science College, Coimbatore 641 029, Tamilnadu, India

Abstract :

The rapid evolution of Artificial Intelligence (AI) has generated unprecedented opportunities for innovation, productivity, and global development. However, it also raises profound ethical, governance, and regulatory challenges. Issues such as algorithmic bias, lack of transparency, data privacy, accountability, and the potential for misuse necessitate robust frameworks to ensure responsible AI deployment. This paper examines the ethical foundations of AI, explores the sources and consequences of algorithmic bias, and evaluates existing and emerging governance and regulatory frameworks. Drawing upon global case studies and current policy developments, the paper argues for a multi-stakeholder, principle-based approach to AI governance that balances innovation with social justice, human rights, and global equity.

1. Introduction :

Artificial Intelligence (AI) has become a transformative force across all sectors—healthcare, finance, education, transportation, and public administration. The integration of AI technologies into daily life raises complex ethical and governance challenges that extend beyond technical considerations. While AI offers remarkable benefits in efficiency and decision-making, it also introduces risks of discrimination, surveillance, loss of privacy, and erosion of human autonomy (Floridi & Cowls, 2019). The ethical and regulatory questions surrounding AI have moved from academic discussions to policy imperatives. Governments, corporations, and international organizations are developing frameworks to govern AI responsibly. This paper seeks to analyze the interconnected themes of ethics, governance,

bias, and regulation of AI, highlighting both the theoretical underpinnings and practical pathways toward equitable AI systems.

2. Ethical Dimensions of Artificial Intelligence :

AI ethics refers to the application of moral principles to the design, development, deployment, and use of intelligent systems. Central ethical principles in AI include **beneficence**, **non-maleficence**, **autonomy**, **justice**, and **explicability** (Floridi et al., 2018).

2.1 Autonomy and Human Agency :

AI systems can augment human capabilities but may also diminish human control. Autonomous decision-making systems in healthcare or autonomous vehicles, for example, challenge traditional notions of accountability and moral responsibility. Ensuring that human oversight remains integral to AI systems is a key ethical mandate.

2.2 Transparency and Explainability :

The "black box" problem—wherein AI algorithms produce outcomes that are not easily interpretable—undermines trust and accountability. Ethical AI requires explainable models that provide insight into how decisions are made, particularly in critical applications such as law enforcement or credit scoring.

2.3 Data Privacy and Surveillance :

AI systems rely heavily on vast datasets, often including personal and sensitive information. Without robust data governance, AI can facilitate intrusive surveillance and manipulation. Privacy-preserving technologies, such as federated learning and differential privacy, are increasingly essential to uphold ethical standards.

3. Algorithmic Bias and Fairness :

Algorithmic bias refers to systematic and unfair discrimination embedded within AI systems, often reflecting historical inequities or biased training data (O'Neil, 2016). Bias can manifest in various forms—racial, gender-based, socioeconomic, or cultural.

3.1 Sources of Bias :

Bias arises from multiple sources :

- **Data bias** : Unrepresentative or skewed datasets.
- **Algorithmic bias** : Design choices that amplify disparities.
- **Societal bias** : Existing inequalities reflected in data collection and labeling.

3.2 Consequences of Bias :

Biased AI can perpetuate and exacerbate social injustices. For instance, facial recognition systems have demonstrated lower accuracy for darker-skinned individuals and women (Buolamwini

& Gebru, 2018). Similarly, predictive policing algorithms have been criticized for reinforcing racial profiling.

3.3 Mitigating Bias :

Mitigation requires a multi-pronged approach :

- Inclusive dataset curation.
- Regular algorithmic audits.
- Ethical AI design education.
- Transparency in model development.
- AI fairness should be viewed as both a technical and socio-political problem requiring cross-disciplinary collaboration.

4. Governance of Artificial Intelligence :

AI governance refers to the structures, policies, and processes designed to guide the responsible development and deployment of AI technologies. Effective governance must balance innovation with ethical and societal safeguards.

4.1 Corporate Governance and Self-Regulation :

Tech companies have increasingly established internal AI ethics boards and guidelines (e.g., Google's AI Principles, Microsoft's Responsible AI). However, self-regulation often lacks enforceability and can be undermined by commercial pressures.

4.2 Multi-Stakeholder Governance :

AI governance should involve governments, civil society, academia, and industry. Organizations such as the OECD, UNESCO, and the World Economic Forum have proposed frameworks emphasizing inclusivity, accountability, and transparency.

4.3 Global Governance Challenges :

AI is a transnational technology, but governance mechanisms are often national or regional. Divergent standards—such as between the European Union's GDPR and the United States' sectoral approach—create regulatory fragmentation. Global cooperation is essential to prevent "AI nationalism" and ensure equitable technological benefits.

5. Regulation of Artificial Intelligence :

Regulation provides the legal backbone for ensuring AI's ethical deployment. Emerging regulatory frameworks reflect differing philosophical and political priorities.

5.1 The European Union : AI Act :

The EU's Artificial Intelligence Act (2024) represents the most comprehensive AI regulation globally. It adopts a **risk-based approach**, classifying AI systems as unacceptable, high-risk, limited-

risk, or minimal-risk. The Act mandates transparency, data governance, and human oversight for high-risk applications.

5.2 The United States : Sectoral and Voluntary Frameworks :

The U.S. approach remains decentralized, emphasizing innovation and voluntary compliance. The **NIST AI Risk Management Framework (2023)** offers non-binding guidelines for trustworthy AI but lacks enforceable obligations.

5.3 Asia-Pacific and Global South :

Countries like Singapore, Japan, and India are developing context-specific AI governance strategies. However, the Global South faces challenges including limited regulatory capacity, data colonialism, and unequal access to AI benefits.

5.4 Emerging Issues: Liability and Enforcement :

Determining liability in AI-related harms remains complex. Questions arise about whether responsibility lies with developers, deployers, or end-users. Regulatory regimes must adapt to address these grey areas through adaptive and anticipatory governance.

6. Towards Responsible and Inclusive Artificial Intelligence :

The future of AI governance lies in creating **responsible, transparent, and inclusive ecosystems**. This requires :

- Embedding ethics from design through deployment ("ethics by design").
- Strengthening interdisciplinary research on AI fairness and accountability.
- Establishing international coordination mechanisms akin to climate governance.
- Encouraging public participation in shaping AI policies.

Ethical AI must not only prevent harm but also actively promote social good—reducing inequality, enhancing accessibility, and supporting sustainability.

7. Conclusion :

The ethics, governance, bias, and regulation of AI represent interconnected dimensions of a single global challenge: how to ensure that intelligent technologies serve humanity rather than undermine it. Addressing these concerns demands collaboration across disciplines, sectors, and borders. Robust ethical principles, inclusive governance, and adaptive regulation must evolve alongside technological progress. As AI becomes increasingly embedded in decision-making and infrastructure, ensuring its alignment with human values and rights will determine not only its legitimacy but also its long-term sustainability.

References :

1. (Sample references — expand based on your preferred citation style)

2. Buolamwini, J., & Gebru, T. (2018). "Gender Shades: Intersectional Accuracy Disparities in Commercial Gender Classification." *Proceedings of Machine Learning Research*, 81, 1–15.
3. Floridi, L., & Cowls, J. (2019). "A Unified Framework of Five Principles for AI in Society." *Harvard Data Science Review*, 1(1).
4. O'Neil, C. (2016). *Weapons of Math Destruction: How Big Data Increases Inequality and Threatens Democracy.* Crown.
5. OECD. (2021). *OECD Principles on Artificial Intelligence.* Paris: OECD Publishing.
6. European Commission. (2024). *Artificial Intelligence Act.* Brussels: EU Publications.
7. NIST. (2023). *AI Risk Management Framework (AI RMF 1.0).* National Institute of Standards and Technology.

swarnalathar023@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 85–94

Balancing Copyright Protection and User Freedom : Rethinking Anti-Piracy Laws in the Digital Age

Rishi Kumar Mishra
Research Scholar,
Shibli National P.G. College, Azamgarh, Uttar Pradesh

Abstract

The Unfinished War on Online Piracy explores the ongoing challenge of unauthorized sharing and downloading of digital content. What started with the simple file-sharing networks in the early 2000s has now evolved much into streaming platforms, torrent sites, and even hidden corners of the internet and social media. This constant evolution makes it difficult for laws and legislation to keep up. Piracy clearly affects creative industries, costing billions, but it also raises bigger questions about access, affordability, legality, and fairness in the digital age.

Countries and international organizations have attempted to address the issue of Online Piracy. Treaties like TRIPS (1994) and the WIPO Internet Treaties (1996), alongside national laws such as the Indian Copyright Act (1957, amended 2012), and many more, show how the judiciary has tried to respond to new digital challenges. Reports from the events and the Motion Picture Association highlight the significant financial impact of piracy internationally.

This research argues that the fight against piracy is still far from being over. The problem isn't just about breaking the law, but it's about how people access content and whether legal options are easy and affordable. To truly make a difference, countries need better international cooperation, smarter technology, public awareness campaigns, and more accessible legal content to find the solutions that the nations are lacking.

Keywords- Copyright, Anti-Piracy Laws, Digital Age, Online Piracy, Intellectual property.

Introduction

Online piracy, the unauthorized copying, distribution, or consumption of copyrighted digital content, has become a major challenge in the 20-21st century. What began a simple manner

that, file sharing in the early 2000s has now evolved into sophisticated streaming platforms, torrent sites, and darknet operations, making enforcement harder to take a safer place in society.[1] Piracy is affecting industries such as music, film, software, and publishing,[2] which cause billions of dollars in economic losses globally while also raising wider concerns or questions about access, affordability, and the fairness of intellectual property laws and further.[3]

The legal response to online piracy exists at both national and intentional levels. International agreements such as the TRIPS Agreement (1994) and the WIPO Internet Treaties (1996) set standards for copyright protection, while national legislations, including the Indian Copyright Act, 1957 (amended 2012), the U.S. Digital Millennium Copyright Act, 1998, and the EU InfoSec Directive (2001/29/EC), provide mechanisms for enforcement.[4] Landmark judicial decisions, including A&M Records v. Napster (U.S., 2001)[5], Capitol Records v. ReDigi (U.S., 2018)[6], and UTV Software Communication Ltd. v. 1337x.to (India, 2019)[7], illustrate the evolving challenges courts face in keeping pace with digital innovation. Apart from these measures, piracy continues to grow or develop vigorously, due to technological advancements, cross-border jurisdictional issues, and limited access to affordable lawful content.[8] The study stated that preventing online piracy requires many different approaches, which include combining legal and social enforcement, technological enhancement, public awareness / social awareness, and more reachable lawful ways. By examining piracy at worldwide levels, the research stated to provide a complete understanding of its causes, impacts, outcomes, and possible solutions.

Research Problem

- What are the primary challenges in combating online piracy, and how do national and international laws attempt to address them?
- How do national laws, like the U.S. Digital Millennium Copyright Act and the Indian Copyright Act, address online piracy, and what are their limitations?
- What are the shortcomings of global agreements, such as the TRIPS Agreement and the WIPO Internet Treaties, in preventing cross-border piracy?
- Why is online piracy considered a socio-economic issue in addition to a legal one?

---

[1] Witt, S. (2015). *How Music Got Free*. Penguin.
[2] IFPI. (2023). *Global Music Report*. https://ifpi.org/what-we-do/global-music-report/
[3] IFPI. (2023). *Global Music Report*. https://ifpi.org/what-we-do/global-music-report/
[4] WIPO. (2020). *Copyright and the Digital Economy*. https://www.wipo.int/copyright/en/
[5] *A&M Records v. Napster*, 239 F.3d 1004 (9th Cir. 2001).
[6] *Capitol Records v. ReDigi*, 910 F.3d 649 (2d Cir. 2018).
[7] *UTV Software Communication Ltd. v. 1337x.to*, Delhi High Court, 2019.
[8] Danaher, B., Smith, M., & Telang, R. (2013). *Piracy and Copyright Enforcement Mechanisms*. NBER Working Paper No. 19150.

Objectives of the Study

- The ultimate objective of this research paper is to provide a complete understanding of online piracy, its kinds, impact, and legal responses towards the socio-economic measures.
- The study primarily focuses on defining and clarifying the numerous kinds or forms of online piracy, including decentralized networking (Peer to Peer) file sharing, torrenting (a decentralized networking that does not contain any central server directly), streaming platforms, and darknet (networks that can only be accessed with special software) operations[9].
- Understanding these kinds and forms is important for calculating the effectiveness of existing lawful and technological measures. Another objective is to analyse the economic, social, and cultural impact of piracy at both national and global levels, with concern to losses in creative industries such as music, film, publishing, and software, across technological points[10].
- This includes sudden changes in consumer behaviours, industry revenues and expenses, and the broader suggestion of piracy on cultural and economic accessibility.
- The study also finds to critically examine existing legal provisions governing online piracy. Which includes national laws such as the Indian Copyright Act, 1957 (amended 2012)[11], the U.S. Digital Millennium Copyright Act, 1998[12], and the EU InfoSec Directive (2001/29/EC)[13], as well as international treaties like TRIPS, 1994[14] and the WIPO Internet Treaties, 1996[15]. Approaching judicial aspects and key points is also an objective. Landmark cases such as India's "John Doe" orders in UTV Software Communication Ltd. v. 1337x.to (Delhi HC, 2019)[16] and U.S. precedents like Capitol Records v. ReDigi (910 F.3d 649, 2d Cir. 2018)[17] stated that the court addressed the technological and internet challenges.
- Finally, the study focus to show the balanced reforms and provisions, giving more importance strategies that add laws and enforcement with public access, digital and technological solutions, and affordable legal ways[18]. These objectives together provide a structured path for understanding and addressing the major problem of online piracy.

[9] Cory Doctorow, *Information Doesn't Want to Be Free* (McSweeney's, 2014).
[10] IFPI. (2023). *Global Music Report*. https://ifpi.org/what-we-do/global-music-report/
[11] Indian Copyright Act, 1957 (as amended 2012).
[12] U.S. Digital Millennium Copyright Act, 1998.
[13] EU Directive 2001/29/EC (InfoSec Directive).
[14] RIPS Agreement, 1994. https://www.wto.org/english/docs_e/legal_e/27-trips_01_e.htm
[15] WIPO Internet Treaties, 1996. https://www.wipo.int/copyright/en/activities/internet_treaties/
[16] *UTV Software Communication Ltd. v. 1337x.to*, Delhi High Court, 2019.
[17] *Capitol Records v. ReDigi*, 910 F.3d 649 (2d Cir. 2018).
[18] Doctorow, Cory. (2014). *Information Doesn't Want to Be Free*. McSweeney's.

Hypothesis

- The issues of online piracy are not primarily a result of the absence of copyright laws in nation, but rather due to ineffective and no implementation enforcement mechanisms are useless, digital inequality, and jurisdictional gaps that prevent coordinated action across nation to nation[19]. Even though statutes like the Indian Copyright Act (1957), the U.S. DMCA (1998), and the EU Directive 2001/29/EC provide strong legal protection for intellectual property, their enforcement has failed to deter large-scale piracy networks.
- This is because piracy thrives in an ecosystem where affordability, accessibility, and consumer demand outweigh the deterrent effect of punitive measures, people need an alternative that will not harm their daily life expenses or basic expenses so they look out to some decentralised measure where they can access the entertainment so utmost issue make is make it reachable and affordable.[20]
- Studies suggest that international cooperation and ensuring affordable legal access to digital content may be more effective in abjuring piracy than the imposition of stricter criminal penalties[21]. The Hudson Institute (2023) emphasizes that online piracy is a global policy challenge, and impulsive national enforcement creates opportunities for cross-border or nation to nation piracy networks weaken the judiciary[22]. Therefore, the hypothesis of this research is that combating piracy requires a balanced approach of enforcement, access, and global cooperation, rather than relying solely on non-impactable frameworks.

Scope and Limitations

- The scope of this research is limited or restricted to digital piracy, specifically the piracy of music, films, software, and e-books, while excluding physical counterfeiting and offline piracy markets[23] The focus is on post-2000s internet piracy, which coincides with the growth of broadband internet, torrenting platforms, and illegal streaming websites[24].
- By limiting the scope to digital platforms, the study ensures a focused inquiry into the evolving challenges posed by online piracy in the globalized digital economy.

[19] octorow, C. (2014). *Information Doesn't Want to Be Free*.

[20] Hudson Inst., *What the Online Piracy Data Tells Us About Copyright Policymaking* (2023).

[21] Brett Danaher, Michael D. Smith & Rahul Telang, *The Impact of Digital Piracy on Content Markets*, Nat'l Bureau of Econ. Research, Working Paper No. 19191 (2013).

[22] CORY DOCTOROW, *INFORMATION DOESN'T WANT TO BE FREE: LAWS FOR THE INTERNET AGE* (McSweeney's 2014).

[23] IFPI. (2023). *Global Music Report*.

[24] Motion Picture Association. (2022). *Piracy Trends Report.*

Geographically, the research draws from three regions India, the United States, and the European Union to highlight comparative approaches and case studies. For instance, India's experience with John Doe orders and challenges in DRM enforcement (Looney Tunes Study, Arxiv, 2021) provides insight into developing country perspectives, while the U.S. and EU illustrate how advanced economies tackle piracy through judicial and regulatory frameworks[25].

- However, the study is limited by the dynamic nature of technology. Piracy platforms evolve rapidly, and legal responses often lag behind. Moreover, the research does not provide a quantitative econometric analysis of piracy losses but relies on secondary studies and industry estimates.

Significance of the Study

- The study is important in manner of academic, policy, and practical, the three levels. From an academic perspective, it contributes to intellectual property law and digital rights scholarship, building on works such as Witt's How Music Got Free (2015) and Yu's writings on cross-border enforcement[26].
- It situates piracy not only as a legal issue but also as a socio-economic and cultural phenomenon. At the policy level, the research highlights the enforcement gaps in national and international frameworks, calling for reforms that balance enforcement with access. Organizations like WIPO (2020) and WTO debates on TRIPS highlight the urgent need for stronger cooperation mechanisms[27].
- The study's comparative approach offers lessons for Indian policymakers by contextualizing its challenges within global debates. Practically, the study is relevant for creative industries, including music, film, publishing, and software, which collectively lose billions due to piracy. Reports from IFPI (2023) and the Motion Picture Association underline how piracy affects revenue, employment, and innovation in these industries[28]. By proposing consumer-focused and technologically adaptive solutions, the research provides strategies for industries and regulators to tackle piracy effectively.

Socio-Economic Impact

The socio-economic outcomes of online piracy are one of its most well-known effects. Piracy causes direct financial losses to industries and the entire digital and internet economy, diminishes the motivation for innovation or upstanding, and hinders

[25] Arxiv (2021). *Looney Tunes Study: DRM Vulnerabilities in India*.
[26] Bohannon, J. (2016). "Who's Downloading Pirated Papers? Everyone." *Science Magazine.*
[27] WIPO. (2020). *Copyright and the Digital Economy*.
[28] IFPI & MPA Reports (2023).

its effectiveness in sustaining or creating creative sectors. According to the Motion Picture Association (MPA), nationwide or Worldwide piracy of films, internet content, and television leads to whole year annual losses exceeding $40 billion[29]. This figure includes abating the box-office returns as in profits, subsidizing the subscription revenues for streaming and presenting platforms, and reducing licensing fees or payments. The major concern of illegal streaming websites such as 1337x, put locker, and Popcorn Time highlights how piracy has suddenly taken all the attention of consumers' demand for content and technology. The music industry faces a similar challenge as aforesaid. In spite of licensed platforms like Spotify, Apple Music, and Amazon Music that have accessible music consumption by consumers, piracy still continues to follow the decentralized manner of acknowledging the networking and sharing market, which includes P2P peer-to-peer sharing networks. The IFPI Global Music Report (2023) highlights that nearly 30% of internet users still access music illegally, which shows a continued threat or concern to industry revenues[30]. Software piracy has for a very long become a major tension for both corporations and government, both private and public. The Business Software Alliance (BSA) reports that nearly 57% of software installations that became a part of the economy are illegal or decentralized[31]. This not only results in financial losses and lost revenue but also removes the curtains of the people using heightened cybersecurity risks, including malware, ransomware, and data theft. For example, duped versions of productivity software or video games often contain harmful code designed to gather personal and financial information.

Piracy also has cultural and developmental stages. While piracy puts the legitimate industries as of now down to earth, it continuously shows consumer demand for budget-friendly access. In contemporary countries, high subscription costs, limited and restricted payment infrastructure, and delayed releases often drive people toward illegal platforms[32]. Scholars like Yu argue that piracy, though unlawful, can sometimes act as a "shadow distribution system", giving consumers access to content otherwise unavailable due to pricing or geographic restrictions[33]. Thus, the socio-economic impact of piracy is not one-sided. While it undoubtedly causes financial losses and disincentivizes creativity, it also highlights gaps in content accessibility, pricing strategies, and global digital inclusion.

[29] Motion Picture Ass'n, *Piracy Trends Report* (2023).
[30] IFPI, *Global Music Report* (2023).
[31] Business Software Alliance, *Global Software Survey* (2018).
[32] https://en.wikipedia.org/wiki/Online_piracy
[33] Yu, P. K. (2018). "The Quest for a Global Response to Online Piracy." *Fordham IPLJ*, 28(1).

Legal Framework on Piracy

The method to combating online infringement and digital piracy is comprehensive, encompassing legal, technological, and instructional initiatives. With the help of international cooperation, legislative efforts are concentrated on enacting anti-piracy measures and modernizing copyright laws, combining lower-level legislation, regional directives, and international treaties. So, the effectiveness of these provisions depends heavily on advancement. In India, the Copyright Act, 1957 (amended in 2012) criminalizes copyright infringement, including digital piracy, and empowers courts to issue an order to block such infringing and illegal sites[34].

The amendments also introduced provisions for technological protection measures (TPMs) and cleared the liability of technological compulsion. India has increasingly relied on John Doe (Ashok Kumar) orders to pre emotively restrain infringers from distributing pirated content during film releases. John Doe injunctions, known as 'Ashok Kumar orders' in India, were meant to stop piracy, but are now being weaponised to silence journalists, publishers, and activists. John Doe injunctions are increasingly being used by powerful actors in India to censor the media. The goal is to communicate clearly and directly so that the reader or listener can easily understand the message the first time they encounter it. It means avoiding complicated words, long sentences, and unnecessary technical jargon. Clear and concise: It gets straight to the point without adding extra words or complex phrasing. Accessible to all: It is not about "dumbing down" the information but about making it accessible to a wider audience, including those with less expertise on a topic or lower reading skills. Uses everyday words: It Favors common, familiar words over complex or technical ones. If a technical term must be used, it is explained simply.[35] 7 Focuses on the audience: The writer always considers who they are talking to and tailors the message to that person's level of understanding. Active voice: It uses an active voice, which makes sentences more direct and easier to follow. For example, instead of "The report was written by me," a simple language approach would be "I wrote the report".

In the European Union, the InfoSec Directive (2001/29/EC) harmonized copyright protections by addressing the reproduction, communication, and distribution rights of authors[36]. More recently, the Digital Single Market (DSM) Directive (2019) introduced stronger obligations for online platforms, requiring them to obtain licenses or prevent infringing uploads proactively.

---

[34] The Copyright Act, 1957 (India), as amended in 2012.

[35] Digital Millennium Copyright Act (DMCA), 1998 (U.S.).

[36] EU Directive 2001/29/EC (InfoSec Directive).

At the international level, the TRIPS Agreement (1994) set minimum standards of copyright protection for all WTO members[37]. Similarly, the WIPO Internet Treaties (1996) extended copyright protections to the digital environment, recognizing rights for online distribution and communication[38]. However, critics argue that these treaties lack robust enforcement mechanisms, leaving compliance to national governments[39]. This patchwork of laws creates fragmentation. For example, while the DMCA's safe harbour provisions allow YouTube to operate under notice-and-takedown, the EU's DSM Directive imposes proactive filtering obligations on similar platforms. Such divergence complicates global enforcement and creates loopholes for piracy to flourish.

Judicial Response and Case Studies

Courts have often acted as first responders to the challenges posed by online piracy, filling gaps left by legislation.

In the United States, the landmark case A&M Records v. Napster (2001) found Napster liable for contributory and vicarious copyright infringement, effectively shutting down one of the first large-scale file-sharing networks[40]. This case set the precedent that platforms enabling mass copyright infringement could be held accountable. Later, in Capitol Records v. ReDigi (2018), the Second Circuit ruled that digital resale of copyrighted music was unlawful, reinforcing that the "first-sale doctrine" did not apply in the digital context[41]. Indian courts have shown remarkable adaptability. In UTV Software Communication Ltd. v. 1337x.to (Delhi HC, 2019), the court issued dynamic injunctions to block infringing websites and their mirror sites, empowering plaintiffs to take action without returning to court for every new domain[42]. These "dynamic John Doe orders" have become a key tool in combating piracy during film releases. Similarly, the U.K. courts in Twentieth Century Fox Film Corp. v. British Telecommunications (2011) ordered ISPs to block access to the Newzbin2 file-sharing site, setting a precedent for site-blocking injunctions in Europe[43]. Despite these interventions, judicial remedies face criticism. While effective in curbing piracy, they sometimes risk over blocking legitimate websites, restricting

[37] TRIPS Agreement, 1994.
[38] WIPO Internet Treaties, 1996.
[39] Frosio, G. (2020). *Oxford Handbook of Online Intermediary Liability*. Oxford University Press.
[40] *A&M Records, Inc. v. Napster, Inc.*, 239 F.3d 1004 (9th Cir. 2001).
[41] *Capitol Records, LLC v. ReDigi Inc.*, 910 F.3d 649 (2d Cir. 2018)
[42] *UTV Software Communication Ltd. v. 1337x.to*, Delhi High Court, 2019.
[43] *Twentieth Century Fox Film Corp. v. British Telecommunications plc*, [2011] EWHC 1981 (Ch).

free speech, and raising concerns over due process[44]. For instance, overly broad site-blocking orders have occasionally led to collateral damage, affecting websites that host both infringing and legitimate content.

Technology, Enforcement, and Challenges

- Technological measures form the frontline defence against piracy. Digital Rights Management (DRM) systems use encryption, license verification, and access controls to restrict unauthorized copying. Platforms like Netflix and Amazon Prime deploy DRM to ensure that only authorized users can access their content[45]. Similarly, YouTube's Content ID system scans billions of uploads, automatically detecting copyrighted material and either blocking it or monetizing it for rights-holders. Newer solutions include blockchain-based copyright registries, which create immutable records of ownership, and AI-powered recognition tools, which enhance detection accuracy[46].
- However, pirates often respond with countermeasures such as VPNs, proxy servers, and mirror sites, making enforcement a cat-and-mouse game. A major challenge lies in ISP liability. The U.S. system relies on notice-and-takedown, which critics say is reactive and easily circumvented. By contrast, the EU DSM Directive imposes proactive obligations on platforms, leading to concerns about over-censorship[47]. cross-border enforcement is another major hurdle. Many piracy websites are hosted in countries with weak copyright laws or limited enforcement capacity, making it difficult for rights-holders to take action. Even when courts issue injunctions, infringers often shift operations to new domains, creating an endless cycle[48].

Policy Recommendations and the Way Forward

- Given the overview of online piracy, policymakers and industry leaders must adopt compulsive approach. Primarily, legal provisions shall be more focused to harmonise the world wise or international copyright standard. Prioritising enforcement under TRIPS and WIPO might help to address the outside nation challenges[49].

---

[44] Yu, P. K. (2021). *Intellectual Property and Human Rights*. Cambridge University Press.
[45] Doctorow, C. (2014). *Information Doesn't Want to Be Free*. McSweeney's.
[46] Tapscott, D., & Tapscott, A. (2018). *Blockchain Revolution*. Penguin.
[47] European Commission. (2020). *Guidance on Article 17 of the DSM Directive*.
[48] Sandvine. (2022). *Global Internet Phenomena Report*.
[49] Abbott, F. M. (2017). "Strengthening Multilateral Enforcement of Intellectual Property." *Journal of World Trade*, 51(3).

- Establishing specialized international bodies or arbitration aspects for piracy conflicts may provide more consistent outcomes. Secondly, technological aspects should have evolved in a continuous manner to prevent outcomes. Blockchain can enhance transparency in ownership, with the points AI can review certain changes to centralized the mechanisms.
- However, safeguards must ensure that technological enforcement does not compromise digital rights or new innovations by government. Third, consumer awareness campaigns are critical to enlighten the points and concerns that should be raised at the right time in a right way. Many users engage in piracy without understanding its economic and cultural impact to their life.
- Public education combined with budget friendly legal alternatives can reduce demand for decentralized content[50]. The success of platforms like Netflix and Spotify demonstrates that when content is budget friendly and reasonably priced, piracy rates decline significantly. Finally, international cooperation remains indispensable.
- Piracy is a borderless or not indulged with international crime, and it is not a matter that affects only one side such measures are insufficient. Forums such as WIPO and WTO should prioritize building cooperative frameworks, enabling shared enforcement protocols and joint investigations[51].
- Ultimately, the battle against piracy cannot be won solely through small measures. A sustainable solution lies in balancing enforcement with digital inclusion, ensuring that copyright law supports both innovation and accessibility[52].

[50] Hilty, R., & Liu, K. (2021). *Artificial Intelligence and Intellectual Property*. Springer.
[51] IFPI. (2021). *Music Consumer Insight Report*.
[52] WIPO. (2021). *Intellectual Property and Global Challenges*.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 95-106

हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना

डॉ. समणी मंजुलप्रभा
गौत्तम ज्ञानशाला, लाडनूं।

राष्ट्रीयता मानव की एक मूलभूत आन्तरिक चेतना है, एक प्रकार की साहचर्य-भावना है जिसका विकास एकानुभूति रखने वाले जनसमुदाय में होता रहता है। राष्ट्रीय विकास की यह धारा राष्ट्र के जीवन में किसी न किसी रूप में गतिशील रहती है। इसका प्रवाह कभी तो वर्षाऋतु की पर्वतीय नदी के समान उग्र रूप धारण कर लेता है और कभी सरस्वती के समान अन्तर्मुख होकर मन्द-मन्द गति से अपना मार्ग प्रशस्त कर बहता रहता है। राष्ट्रीयता अधिकांशतः राजनीतिशास्त्र से अनुस्यूत है, इसीलिए इसका अध्ययन एवं विश्लेषण आज तक मुख्यतः राजनैतिक मापदण्डों के आधार पर ही हुआ है लेकिन राष्ट्र वह समुदाय है जो ऐतिहासिक दृष्टि से विकसित और स्थायी होने के साथ सर्वमान्य भाषा, भूभाग, आर्थिक जीवन और संस्कृति में परिलक्षित होने वाली विशेष मनोरचना से युक्त है[1] और भारत का आकार और क्षेत्रफल भी विशाल है परन्तु इसकी भौगोलिक स्थिति की विषमता इसके विस्तार से कहीं अधिक है। एक ओर हिमाच्छादित गगनचुम्बी गिरि शिखर है तो दूसरी ओर सपाट निचले मैदान हैं। एक ओर मानव रहित राजस्थान का शुष्क-मरुस्थल है तो दूसरी ओर नदियों की उर्वरा घाटियाँ जो घनी आबादी के क्षेत्र हैं।[2]

"उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्,
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः।"[3]

अर्थात् समुद्र के उत्तर में, हिमालय के दक्षिण में जो देश है, वह भारत नाम का खण्ड कहलाता है और जहाँ के लोग भारत की सन्तान कहलाती हैं। प्रजाति की दृष्टि से भारत में विविधता है इस देश में आदिम जंगली जातियाँ भी हैं। इसी प्रकार धर्म में भी विभिन्नता है। हिन्दु धर्म के अगणित रूपों और सम्प्रदायों के अतिरिक्त देश में बौद्ध, जैन, सिक्ख, इस्लाम, ईसाई, यहूदी आदि धर्मावलम्बी भी हैं। यहां के निवासियों में भाषा की भी विविधता है। विभिन्न जातियों और प्रान्तों के लोग भिन्न-भिन्न भाषायें और बोलियाँ बोलते हैं। लगभग यहाँ 150 बोलियाँ प्रचलित हैं।[4]

1. Stalin, J., Marxism and the question of Nationalities, P. 6.
2. प्राचीन भारत विवेचनात्मक अध्ययन, पृ. 8
3. विष्णु पुराण, 3–1
4. प्राचीन भारत विवेचनात्मक अध्ययन, पृ.–9

राष्ट्रीयता का प्रतिपादन

राष्ट्रीयता का स्वरूप शब्दों के बंधन में बांधना कुछ कठिन तथा अस्वाभाविक है। राष्ट्रीयता एक ऐसी भावना है जिसका संबंध मानव की अन्तश्चेतना से है, जो अनिर्वचनीय होने के कारण केवल अनुभूति का विषय हैं।[1] यह मनुष्य की स्वाभाविक वृत्तियों में से एक है, जिसके कारण वह अपने राष्ट्र से एक विशेष प्रकार का लगाव रखता है और उसे सदा उन्नत तथा समृद्धिशाली देखने को उत्सुक रहता है। इसी भावना के आवेग से उन्मुक्त व्यक्ति अपने राष्ट्र के कल्याण के लिए अपना सर्वस्व निछावर करने में तथा सहर्ष अपना जीवन तक अर्पण कर देने में अपना गौरव समझता है। जिस राष्ट्र में राष्ट्रीयता की यह चेतना जितनी अधिक बलवती होगी उतना ही वह शक्तिशाली तथा समृद्ध माना जायेगा।[2]

राष्ट्रीयता वास्तव में मन की एक अवस्था मात्र है। वह व्यक्ति को राष्ट्रीयता के सूत्र में तभी बाँधती है जब उसका ऐसे जनसमूह से एकत्व हो जाता है जिसका रहन-सहन, रीति-रिवाज, संस्कार तथा अन्य जीवन की समस्याएँ तथा बन्धन उसी के समान हों। वह अपने समाज से नाता तोड़कर जीवन व्यतीत नहीं कर सकता। राष्ट्रीयता मुख्य रूप में वह मनोवैज्ञानिक भावना है जो उन लोगों में ही उत्पन्न होती है, जिनके सामान्य गौरव तथा विपत्तियाँ हों, जिनकी सामान्य परम्पराएँ हों तथा पैतृक सम्पत्तियाँ एक ही हो।[3]

राष्ट्रीयता के प्राण तत्त्व

राष्ट्रीय एकता के निर्माण के लिए राजनीति-शास्त्र के विद्वानों ने कुछ तत्त्वों का होना आवश्यक बताया है। वे तत्त्व हैं—भौगोलिक एकता, जातीय एकता, संस्कृति की एकता, इतिहास परम्परा की एकता, भाषा की एकता, आर्थिक एकता, धर्म की एकता, राजनैतिक आकांक्षा की एकता।

भौगोलिक एकता

भारतवर्ष एक विशालकाय एवं प्राचीन देश है, जिसको प्रकृति ने सर्वथा सम्पन्न बनाया है। यहां सब प्रकार की जलवायु मिलती है और प्रकृति भिन्न-भिन्न रूपों में अपना वैभव प्रदर्शित करती रहती है। मैक्स मूलर इसकी अपार प्राकृतिक सुषमा की सराहना करते हुए इसे **'धरती का स्वर्ग'** कहकर पुकारते हैं।[4]

---

1. J. Holland Rose : Nationality in History, P. 147
2. Freerick Hertz : Nationality in History and Politics, P. 17.
3. Gettel, R.G. : Political science, P. 54
4. Max Mueller] India-What Can It Teach Us, P. 8

कहा जा सकता है कि किसी निश्चित भौगोलिक इकाई पर बसा हुआ जनसमुदाय जिसकी अपनी ही सभ्यता तथा संस्कृति हो, अपनी ही भाषा तथा धर्म हो एवं अपनी ही विधिनिषेध की परम्परा हो, वह राष्ट्र है, इसके विपरीत जिन, लोगों के अचार-विचार, रहन-सहन, खान-पान तथा अन्य जीवन-मरण के बंधन समान न हों वह राष्ट्र नहीं कहलाता है। एकरूपता की भावना से युक्त राष्ट्र सच्चे अर्थों में राष्ट्र हो सकता है। आप्टे जी इस विषय में विचार प्रकट करते हुए लिखते हैं–''उस देश को अपना कहने वाले, उस पर परायों की ओर से आक्रमण होने पर, परम्परागत आदर्शों का अखण्ड परिपालन करने हेतु अपनी सम्पूर्ण शक्ति को जुटाकर प्रयत्न करने वाले, अपनी संस्कृति एवं परम्परा का अभिमान रखने वाले तथा इस प्रकार एकात्मकता की प्रेमरज्जु से आबद्ध होने के कारण, एक दूसरे के उत्कर्ष एवं सुख के हेतु सहकार्य की भावना से कार्यप्रवृत्त होने वाले लोगों का समुदाय ही तो राष्ट्र हैं।[1]

इसलिए अपनी भूमि को हम जनसमुदाय का शरीर कह सकते हैं। जिस प्रकार हम अपने शरीर को अपना जानकर इसकी रक्षा एवं पुष्टि करते हैं और इसे सब प्रकार से स्वस्थ रखने का प्रयत्न करते हैं, उसी प्रकार एक राष्ट्र के सभी घटक अपनी भूमि के प्रति ममत्व की भावना रखते हैं और इसे सदा सम्पन्न एवं समृद्धिशाली बनाने का प्रयास करते रहते हैं। जिस प्रकार एक पुत्र माता के प्रति आदर के भाव रखता है उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपनी जननी के समान राष्ट्र-भूमि को सम्मान की दृष्टि से देखता है। इसलिए अपनी भूमि को 'मातृभूमि' की संज्ञा दी गई है। **'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'** अर्थात् भूमि माता है और हम उस पर बसने वाले उसके पुत्र है।[2]

इस दृष्टि से प्रत्येक देशवासी का अपनी भूमि के प्रति वही कर्त्तव्य हो जाता है जो एक पुत्र का माता के प्रति होता है। वह देश के कण-कण से अपने को संबंधित पाता है, इससे गहन अनुराग रखता है और देश की धूलि को कोटि चन्दन के लेप से भी अधिक शीतल तथा सुखदायक अनुभव करता है। स्वदेश के विपुल अनुराग के कारण ही श्रीराम को स्वर्णिम लंका का प्रलोभन विचलित नहीं कर सका। देश के प्रति असीम भक्ति रखने के कारण ही देशभक्त विट्ठलभाई पटेल ने यही अन्तिम अभिलाषा प्रकट की, कि उनका शव मातृभूमि भारतवर्ष में ही लाया जाए।[3] अतः माता के समान ही बल–पौरूष के देने वाली जन्मभूमि को विनीतभाव से पुकारते हुए–''भूमे मातर्नि मा भद्रया सुप्रतिष्ठतम्'' ''हे पृथ्वी माता! तू कृपा करके मुझे भलि प्रकार प्रतिष्ठित कर दे।''[4]

इस प्रकार माता तथा पुत्र का संबंध स्थापित कर समस्त देशवासी एकसूत्रता का निर्माण कर सकने में सफल हुए हैं जो उन्हें युगों से राष्ट्रिय एकता में बाँधे हुए हैं। अपनी भूमि के

1. हमारे राष्ट्र जीवन की परम्परा, पृ. 3–4
2. अथर्ववेदः भूमि सूक्त
3. हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना, पृ. 11
4. अथर्ववेद काण्ड 12, सूक्त 1/12/52

प्रति प्रेम प्रकट करना केवल वैदिक साहित्य की ही विशेषता नहीं वरन् इसके बाद के संस्कृत साहित्य में भी यह भावना अनेक स्थानों पर व्यक्त की गई है। पुराणों में अपनी भूमि को सर्वश्रेष्ठ तथा देवों से निर्मित मानते हुए इसे देवभूमि, स्वर्गभूमि इत्यादि कई नामों से सम्बोधित किया गया है। इसकी रमणीयता से विमुग्ध होकर देवता भी इस भूमि पर आने के लिए तरसते हैं और अपना सौभाग्य समझते हैं–

गायंति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे।
स्वर्गापवर्गास्पदमार्गभूते भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्ः॥

अर्थात् जो लोग भारतभूमि में जन्म ग्रहण करते हैं वे धन्य हैं। देवता लोग भी उनका कीर्ति गान करते हैं क्योंकि भारतवर्ष ही ऐसी भूमि है जहां जन्म ग्रहण करके ही स्वर्ग या अपवर्ग प्राप्त किया जाता है। देवताओं को भी अपवर्ग प्राप्त करने के लिए इस भारत में ही आना पड़ेगा। अतएव भारतवासी स्वर्ग के देवताओं से भी अधिक भाग्यशाली हैं।[1] श्रीमद्भागवत में भी यही कहा है–

अहो! अमीषां किमकारि शोभनं प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः।
यैर्जन्म लब्धं नृप भारताजिरे मुकुन्दसेवोपयिकं स्पृहा हि नः॥

अर्थात् देवता भारतीय मनुष्यों के सौभाग्य पर ईर्ष्या करते हुए कहते हैं–अहा! इन लोगों ने न जाने ऐसे कौनसे शुभ कार्य किये थे, जिनके फलस्वरूप इन्हें भारत भूमि के प्रांगण में मानव जन्म सुलभ हुआ है। लगता है, भगवान् स्वयं इन पर प्रसन्न हो गये थे। भगवान् की सेवा के योग्य ऐसा जन्म पाने की इच्छा तो हमारी भी होती है।[2] राधाकृष्ण गोस्वामी अपने देश की भौगोलिक सुन्दरता को व्यक्त करते हुए उसको अर्चना के पुष्प अर्पित करते हैं–

हमारो उत्तम भारत देस।
जाके तीन ओर सागर हैं उत हिमगिरी अतिवेश॥
श्री गंगा यमुनादि नदि हैं विंध्यादिक पर वेश।
राधाचरण नित्यप्रति बाढ़ों जब लो रवि-राकेश॥ [3]

अपनी मातृभूमि की प्रशंसा बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' मुक्तकण्ठ से करते हैं। उन्हें अपने स्वर्ग समान देश पर गर्व है। वे रत्नों के भण्डार, शोभा के पुंज, सरस सुहावने देश का विजय गान करते हैं और इसकी अलौकिक विभूतियों की पुण्य-स्मृति करते हुए लिखते हैं–

1. विष्णुपुराण, अं. 2, अं. 3, श्लोक 24
2. श्रीमद्भागवत, 5/19/21
3. आधुनिक काव्यधारा, पृ. 67

''जय-जय भारतभूमि भवानी।
जाकी सुयश पताका जग के दसहुँ दिसी फहरानी।
सब सुख सामग्री पूरित ऋतु सकल समान सोहानी।
जा श्री सोभा लखि अलका अरु अमरावती खिसानी।
धर्म सूर उयो नीति जहं गई प्रथम पहिचानी।''[1]

इतना ही नहीं इस युग की कविताओं में जन्मभूमि के प्रति अनुराग भी झलकता है। बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' को अपनी जन्मभूमि के समान विश्वभर में कोई भी स्थान सुन्दर एवं सुखकर दिखाई नहीं देता। निम्न पंक्तियों में राष्ट्रीय भावना की मार्मिक अभिव्यंजना हुई है–

''वह मनुष्य कहिबे के योग न कबहुँ नीच नर।
जन्म भूमि निज नेह नाहि जाके उर अन्तर।
यद्यपि बस्यो संसार सुखद थल विविध लखाहीं।
जन्मभूमि की पै छबि मन ते बिसरत नाहीं॥ ''[2]

भारतीय संस्कृति में राष्ट्रीयता की झलक

भारतीय संस्कृति की मुख्य विशेषता है कि इसके मूल में स्थित धार्मिक भावना है। पारलौकिक क्षेत्र में तो निःसंदेह यह विश्वभर में सर्वश्रेष्ठ है, लेकिन व्यावहारिक रूप से भी यह अग्रगण्य है। राष्ट्रीय जीवन को सुदृढ़ बनाने के लिए यह सदा ही विकासोन्मुख रही है। 'चरैवेति चरैवेति' अर्थात् 'आगे बढ़ो, आगे बढ़ो' ही इसका मूल मंत्र था। प्रगतिशीलता तो निरन्तर आजतक अक्षुण्ण रूप में भारतीय संस्कृति का प्राण रही है। **''उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।''** अर्थात् ''उठो, जागो और अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सदा संघर्षशील रहो।'' कठोपनिषद् का यह क्रान्तिकारी संदेश जातीय जीवन के उत्थान के लिए किसी भी युग, किसी भी रूप में विस्मृत नहीं हो सकता।[3]

इस संस्कृति के विशाल उदर में सभी कुछ जाकर हजम हो जाता रहा है। भारतीय संस्कृति महासमुद्र के समान सभी को अपने क्रोड़ में स्थान देती रही। इस ग्रहणशीलता के कारण ही हमारी संस्कृति युगयुगान्तर से जीवित तथा गतिशील चली आ रही है। इसने अपनी अपार सहिष्णुता तथा उदारभावना को कभी तिलांजलि नहीं दी वरन् सदा परिस्थितियों के अनुसार अपने आपको ढालती चली आ रही है। भिन्न-भिन्न जातियों का एकीकरण कर तथा

1. भारतवन्दना, प्रथमभाग, पृ. 629
2. हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना, पृ. 227
3. कठोपनिषद्, अध्याय पहला, वल्ली 3/14

भिन्न-भिन्न जातियों की संस्कृतियों को आत्मसात् कर आर्य संस्कृति ने अपने स्वरूप को विराट् बना लिया है।

आज के समान प्राचीन काल में भारत में विभिन्न जातियाँ विद्यमान थीं, जिनकी अलग-अलग भाषाएं थीं, अलग-अलग संस्कृतियाँ और धर्म थे, अलग-अलग रस्म-रिवाज और सोचने के ढंग थे। किंतु इन सारी विभिन्नताओं को भारत ने एक ही खरल में घोट दिया और एक ऐसा रस तैयार कर दिया, जिसमें सभी औषधियों का स्वाद तो है किंतु वह सबसे भिन्न भी है। समन्वय की यह प्रतिक्रिया इतनी सम्पन्न रही कि जातिगत गणना के लिए यहाँ कोई अवकाश ही नहीं रह गया। विविधता में एकता ही तो भारतीय संस्कृति का सौन्दर्य है।[1] इसीलिए प्रगतिशील संस्कृति के कारण ही इस देश का महत्त्व आज तक बना हुआ है, नहीं तो जिन देशों की संस्कृतियाँ विनष्ट हो गई, वे आज कहाँ है? मोहम्मद इकबाल ने संभवतः इसी को लक्ष्य करके निम्नलिखित उद्‌गार प्रकट किए हैं–

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहाँ हमारा।
यूनान मिश्र रोमा सब मिट गए जहाँ से,
बाकी मगर है अब तक नामोनिशां हमारा॥ [2]

यह संस्कृति अनंतकाल से विश्वभर के लिए शांति तथा मानवता का पावन संदेश देती आई है। जो अंतर्राष्ट्रीयता की भावना बड़े-बड़े राष्ट्र आज प्रयत्नों से निर्माण करना चाहते हैं, वह इस देश में आरंभ से ही स्वाभाविक रूप में विद्यमान थी। वेद की वह पुरातन ध्वनि आज भी वैसी ही सुन्दर एवं उदार है जिसका लक्ष्य था–**''कृण्वन्तो विश्व भार्यम्''** अर्थात् सारा विश्व ही उसकी दृष्टि में अपना है जिसकी सीमा का विस्तार अनन्त है।[3]

इस भारतीय संस्कृति की सम्भवतः सबसे बड़ी विशेषता है–'अपने ही देश में इसकी निरन्तरता' भारत की प्राचीन सभ्यता मिस्र, मेसोपोटामिया तथा यूनान की सभ्यता से इस दृष्टि में भिन्न है कि उसकी परम्परायें आज तक अविच्छिन्न रूप से सुरक्षित रखी गयी हैं। पुरातत्त्ववेताओं की खोज से पूर्व मिस्र अथवा इराक के किसान को अपने पूर्वजों की संस्कृति का कोई ज्ञान नहीं था, यूनानियों को 'पेराक्लियन एथेंस' के वैभव का सम्भवतः धूमिल मात्र भी ज्ञान नहीं था। इन सब देशों में अतीत से पूर्ण विच्छेद रहा था। दूसरी ओर भारत में सर्वप्रथम आने वाले यूरोपीय यात्रियों ने यहाँ एक ऐसी संस्कृति पायी जिसे अपनी प्राचीनता का पूर्ण ज्ञान था–'एक ऐसी संस्कृति जो वस्तुतः अपने अतीत के गौरव को बढ़ा-चढ़ाकर कहती थी। तथा यह दावा करती थी कि उसमें हजारों वर्षों से कोइ सैद्धान्तिक परिवर्तन नहीं हुआ। आज

1. संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 22
2. वतन के गीत, पृ. 52
3. ऋग्वेद, 9/63/5

भी जो पौराणिक गाथायें सामान्य से सामान्य भारतीय को ज्ञात हैं, उन विस्मृत नायकों का स्मरण कराती हैं जो ईसा से हजारों वर्ष पूर्व रहे थे और कट्टरपंथी ब्राह्मण अपने दैनिक पूजा पाठ में उन मंत्रों को दोहराता है जो इससे भी पहले रचे गये थे, वस्तुतः भारतीय संस्कृति की यह मूलभूत विशेषता थी कि उसने अपने को अक्षुण्ण और अटूट बनाये रखा।[1]

राष्ट्रीय भावना और समाज सुधार का स्वर

देश में स्वतंत्रता आन्दोलन एवं राष्ट्रीय भावना का उदय वैचारिक आन्दोलन के प्रचार में हुआ। स्वतंत्रता आन्दोलन को आगे चलकर महात्मा गांधी का नेतृत्व प्राप्त हुआ। गांधीजी ने इस आन्दोलन को नये आयाम प्रदान किये, इसे व्यापक जन-जागरण, समाज-सुधार, आर्थिक स्वावलम्बन एवं नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों से जोड़ा। अतः अहिंसा, सत्याग्रह, मानवीय समानता और चर्खा–आंदोलन उनके विचार दर्शन के प्रमुख आयाम बने। मैथिलीशरण गुप्त को हमने नवजागरण की विचारधारा का प्रतिनिधि कवि कहा है। नवजागरण स्वतंत्रता आन्दोलन और गांधीवाद के वे प्रतिनिधि कवि हैं। उन्होंने गांधीवादी विचारों को स्वर दिया। स्वदेश की महिमा मैथिलीषरण गुप्तजी ने अपनी रचनाओं के अनेक प्रसंगों में गाई। ''गुरुकुल'' नामक से ली गयी है। गुरु गोविन्द सिंह के मुख से देश के गौरव का गान इस तरह से किया है–

जिसके तीन अर्णव हैं
चौथी ओर हिमालय पीन
ऐसा देश दुर्ग पाकर भी
रह न सके हा! हम स्वाधीन।[2]

प्राचीनकाल के कथानकों में गुप्तजी ने स्वदेश प्रेम और राष्ट्रीय भावना को इस कौशल से अभिव्यक्त किया है कि वह उन प्रसंगों में अपनी सार्थकता रखते हुए आज के युग की भावनाओं को भी वाणी देने में समर्थ हैं। विदेशी शक्ति से देश की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए ''साकेत'' के राम कृतसंकल्प हैं–

पुण्यभूमि पर पाप कभी हम सह न सकेंगे,
पीडक पापी यहाँ और अब रह न सकेंगे॥

ये पंक्तियां साकेत के नवम सर्ग से ली गयी हैं। इसी प्रकार ऐतिहासिक प्रसंगों पर आधारित रचनाओं में गुप्तजी ने अनेक पात्रों के द्वारा स्वदेश के लिए बलिदान की भावना व्यक्त की है। गुप्तजी की ऐतिहासिक कथानकों पर आधारित अनेक रचनाओं में स्वदेश के लिए

1. प्राचीन भारत विवेचनात्मक अध्ययन, पृ. 1–2
2. हिन्दी साहित्य एवं साहित्यकार, पृ. 148

प्राणार्पण की भावना व्यक्त होती है। उन मध्यकालीन कथानकों में यह भाव सीमित राष्ट्रीयता की भावना को व्यक्त करते हैं, लेकिन वर्तमान युग में भी उन भावनाओं की प्रासंगिकता थी–

जन्मदायी धायि! तुझसे उऋण अब होना मुझे,
कौन मेरे प्राण रहते देख सकता है मुझे,
मैं रहूँ चाहे जहाँ, हूँ किन्तु तेरा ही सदा,
फिर भला कैसे न रक्खूं ध्यान तेरा सर्वदा।[1]

सांस्कृतिक राष्ट्रीयता

भारतेन्दु की कविता में राष्ट्रीय भावों का एक स्रोत-सा उमड़ता दिखाई देता है। वे भारतीय संस्कृति को पुनर्जीवित करने वाले सजग कलाकार थे इसीलिए उनकी रचनाओं में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का स्वर गूँजता हुआ सर्वत्र मिलता है।

"कहाँ करुणानिधि केसव सोए?
जागत नहिं अनेक जतन करि भारतवासी रोए॥ "

उस युग के कवियों ने अपनी जन्मभूमि की ही प्रशस्तियाँ प्रस्तुत नहीं कीं वरन् इस भूभाग पर जन्म लेने वाले अनेक युद्धवीर, धर्मवीर तथा दयावीर भी उनकी लेखनियों द्वारा प्रशंसित हुए हैं। वे भारत श्रृंगार बड़े-बड़े चक्रवर्ती सम्राटों का स्मरण करते हैं जिनकी देश–विदेशों में धाक थीं।[2] जिस सांस्कृतिक भारत तथा जिस प्राचीन संस्कृति का यशोगान कवियों ने किया है, वह हिन्दु-कालीन भारत तथा हिन्दु-संस्कृति है, परन्तु ऐसा करने में कवियों का उद्देश्य किसी के प्रति वैरविरोध की भावना प्रकट करना नहीं था। वे तो सबका हित चाहते थे और उनके हृदय में समस्त देशवासियों के कल्याण की भावधारा प्रवाहित होती थी। वे हिन्दु उत्थान के द्वारा ही सब भारतीय जनता को जागृति का विचार रखते थे। उनकी कविता में कहीं भी किसी तत्कालीन भारतीय जाति के प्रति द्वेष-भाव प्रकट नहीं होता। उनका हिन्दु-जागरण भी पक्षपातहीन तथा सभी धर्मों एवं संस्कृतियों के प्रति सहिष्णु होने के कारण भारतीयता के रंग में रंगा हुआ था, अतः राष्ट्रीय ही था।[3]

भारतीय नवजागरण

समाज सुधार की दृष्टि से समाज में स्थित असामाजिक प्रथा परम्पराएं जैसे जातिप्रथा, पर्दा प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा का विरोध किया और स्त्री–शिक्षा, विधवा पुनर्विवाह का समर्थन किया। स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परम हंस आदि ने अपने

1. हिन्दी साहित्य एवं साहित्यकार पृ. 148–149
2. भारतेन्दुनाटकावली, पृ. 669
3. हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना, पृ. 228

अतीत, साहित्य और संस्कृति के प्रति श्रद्धा और गौरव की भावना जागृत करने का प्रयास किया। विश्व मानव कल्याण के लिए भारतीय सांस्कृतिक उत्थान पर उन्होंने बल दिया। वे यह जान चुके थे कि भारत विश्व कल्याण की भूमिका तब तक नहीं निभा सकता, जब तक उसे राजनीतिक और आर्थिक शोषण से मुक्ति नहीं मिल जाती। स्वामी विवेकानन्द ने धर्म के पुनर्जागरण द्वारा कल्याण की भावना का प्रसार किया। नारी जागरण और नारी उद्धार पर बल देने वाले विभिन्न समाज सुधारकों ने नारी जाति के प्रति सम्मान और आदर भाव की आवश्यकता पर विशेष बल दिया। इस सामाजिक, सांस्कृतिक जागरण ने समाज को अन्धकार युग से निकालकर नवीन प्रकाश दिखाने का कार्य किया। नव जागरण की चेतना का विकास 20वीं शताब्दी में राष्ट्रीय चेतना के रूप में सामने आया।[1]

निराला नव जागरण काल के कवि हैं। राष्ट्र को पराधीनता के बंधन से मुक्त देखने की लालसा उस काल के प्रायः सभी कवियों के काव्य का मुख्य विषय रहा है। निराला काव्य में राष्ट्रीय भावना का धरातल बड़ा विस्तृत और बहुरंगी है। निराला ने असंख्य गीतों में भारत के गौरव का गान, माँ भारती का शतशः स्मरण कर जातीय जीवन में उत्तेजना के प्राण फूंके हैं। भारतीय जन-मानस में उद्‌बोधन का संचार करते हुए निराला ''तुलसीदास'' में जागरण का संदेश इस प्रकार से देते हैं–

''जागो–जागो आया प्रभात,
बीती वह, बीति अन्धरात।''

यह पंक्तियां सूर्यकान्त त्रिपाठी ''निराला'' की कविता ''नर जीवन के स्वार्थ सकल'' से ली गयी हैं। इसके लिए कवि आत्म बलिदान हेतु माँ भारती के चरणों में भावपूर्ण समर्पण करते हुए कहता है–

''बाधाएँ आए तन पर
देखूं तुझे नयन निर्भर
क्लेदयुक्त अपना तन दूँगा
मुक्त करूँगा तुझे अटल
तेरे चरणों पर देकर बलि
सकल श्रेय श्रम सिंचित फल।''

अद्वैत भावना

राष्ट्रीयता के अतिरिक्त अद्वैत तत्त्व की सम्वेदना-संस्पर्श निराला काव्य की अन्तर्वस्तु में मुख्यता से गाया गया है। निराला के जीवन पर रामकृष्ण परमहंस एवं विवेकानंद के विचारों

1. हिन्दी साहित्य एवं साहित्कार पृ. 136

का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। ''परिमल'', ''अनामिका'', ''गीतिका'', ''अर्चना'', ''बेला'', ''अणिमा'' इत्यादि में निराला की अद्वैत भावना को देखा जा सकता है निराला का प्रसिद्ध गीत **''तुम तुंग हिमालय श्रृंग और मैं चंचल गीत सुर सरिता''** यह इसी भाव भूमिका की अभिव्यक्ति करता है।[1]

प्रत्येक देश-विदेश के इतिहास पुराणों के पन्ने महापुरूषों की जीवनगाथा से ही सजीवता को प्राप्त हुए हैं। महापुरूषों की जीवनगाथा यदि इतिहास पुराणों से निकाल दी जाये तो इतिहास के पन्ने निर्जीव कोरे कागज रह जायेंगे। महापुरूषों की जीवनगाथा महान् है। महापुरूषों से इतिहास बनता है किंतु इतिहास से महापुरूष नहीं बनते हैं। महापुरूषों का जीवन निम्न प्रकार का होता है–

चलते–चलते राह हैं, बढ़ते–बढ़ते ज्ञान।
तपते–तपते सूर्य हैं, महापुरूष महान्।।

यह कविता कुवंर बेचैन की ''जीवन प्रवाह'' रचना से ली गयी हैं। यहां तक कि कवियों ने भारत की नर-नारियों की गरिमा तथा महिमा का ही केवल बखान नहीं किया वरन् उन वीरों से संबंधित शक्ति के प्रतीक स्थानों को भी तीर्थस्थानों के समान पूज्य तथा स्फूर्तिप्रदाता माना है। कवि उन खण्डहरों में भी वीरगति पाने वाले रणधीरों की जयध्वनि सुन पाता है। वीरों के रक्त के छींटे उसे आज भी उनके दर और दीवार पर जगमगाते दिखाई देते हैं। निस्संदेह वीरता और बलिदान के स्तम्भ स्वरूप ये स्थान आज भी वीरों की याद दिलाते हैं। श्री ठाकुरप्रसाद शर्मा की इन लिखित पंक्तियों में चित्तौड़गढ़ की आभा और वीरों की बलिदानगाथा के साथ-साथ आधुनिक समय की अवनति पर फटकार भी सुनाई देती है–

पूर्वज वीर-अस्थियों का है यह अभेद्य गढ़ बना हुआ,
हे सर्वत्र प्रबल सिंहों के उष्ण रक्त से सना हुआ।
सुचि सबला रमणीगण ने निज जौहर यही दिखाया था,
निज शरीर भष्मावेशेष से पावन इसे बनाया था।
है दृढ़ साहस-युक्त वीरगण! तुम्हें कोटिशः बार प्रणाम,
कब फिर भारत में होंगे नर तुम से नीति निपुण गुण धाम।
हम से कुटिल नीच पुरुषों को है शतकोटि बार धिक्कार,
रक्षा होगी तभी हमारी जब तुम फिर लोगे अवतार॥

उपर्युक्त उदाहरणों के आधार पर यह निश्चय किया जा सकता है कि द्विवेदी युग के कवि अपने प्राचीन भारत का यशोगान करने में सफल हुए। उन्होंने आर्यभूमि, आर्यजाति, जाति के वीर स्त्री तथा पुरुषों का वर्णन कर अतीतकालीन भारत का भव्य स्वरूप जनता के सम्मुख

1. हिन्दी साहित्य एवं साहित्यकार, पृ. 98–99

प्रस्तुत किया। वे अतीत को स्वर्णिम तथा सुचारू बताकर वर्तमान की अधोगति का सुधार चाहते थे। उन्होंने जनता में अतीत को पुनः लौटाने की एक चेतना प्रादुर्भूत करके राष्ट्रीय प्रगति की ओर चरण बढ़ाया।[1]

ऐसा प्रतीत होता है मानो विधाता ने इसे सुसंस्कृत एवं सभ्य होने का वरदान भी दिया हो। इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि मनुष्य जीवन के प्रारम्भिक युग में, जिस समय संसार अन्य बड़े-बड़े देश सभ्यता की प्रथम सोपान चढ़ रहे थे, उस समय यह देश उन्नति के शिखर पर पहुंच चुका था।[2] वह दिन दूर नहीं, जब देश फिर से सशक्त तथा सम्पन्न होगा, सुसंस्कृत तथा सभ्य होकर विश्व का पथदर्शन करेगा और जगद्गुरु की खोई हुई उपाधि को पुनः प्राप्त कर युग-युग तक राष्ट्रीय जीवन के सुख का उपभोग करता रहेगा। भारत के स्वर्णिम भविष्य की शुभ कामना शमशेर बहादुरसिंह के काव्य संग्रह ''कुछ और कविताएं'', 'भारत की आरती' में इस प्रकार करते हैं–

भारत की आरती

देश-देश की स्वतंत्रता देवी,
आज अमित प्रेम से उतारती।
साम्राज्य पूंजी का क्षत होवे,
ऊँच नीच का विधान नत होवे।
सधिकार जनता उन्नत होवे,
जो समाजवाद जय पुकारती।
यह किसान कामकार की भूमि है,
पावन बलिदानों की भूमि है।
भव के अरमानों की भूमि है,
मानव इतिहास को संवारती।[3]

1. राष्ट्रीय वीणा, प्रथम भाग, पृ. 105
2. Romain Rolland, The Prophets of the New India (Translated by E.F. Malcolm Smith, 1930) P. 4
3. तारसप्तक (दूसरा) 1951, पृ. 109

सन्दर्भ ग्रन्थ

अथर्ववेद, काण्ड 12, सूक्त 1/12/52, भाष्यकार डॉ. देवीसहाय–पाण्डेय, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, नई दिल्ली

अथर्ववेदः भूमिसूक्त, 29/1/4 भाष्यकार डॉ. देवीसहाय पाण्डेय, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, नई दिल्ली

अनिता कोठारी, हिन्दी साहित्य एवं साहित्यकार, प्रथम संस्करण, मार्क पब्लिशर्स, जयपुर

उमाकान्त केशव आप्टे, हमारे राष्ट्र जीवन की परम्परा, पृ. 3–4, 1951, प्रभात प्रकाशन, मथुरा

ऋग्वेद, 9/63/5, प्रथम संस्करण, 2020, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, नई दिल्ली

कठोपनिषद् अध्याय पहला, वल्ली 3/14 चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

तारसप्तक (दूसरा भाग), पृ. 109, 1951 प्रगति प्रकाशन, दिल्ली

नीलदेवी, भारतेन्दुनाटकावली, पृ. 669, सं. श्याम सुन्दरदास, प्रथम संस्करण, प्रयाग

बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन सर्वस्व, भारतवन्दना, पृ. 629, प्रथम भाग, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, (उत्तर प्रदेश)

मानिकलाल, प्राचीन भारत विवेचनात्मक अध्ययन, पृ. 8 एटलाण्टिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली

मोहम्मद इकबाल, वतन के गीत, पृ. 52, प्रथम संस्करण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 22, प्रथम संस्करण, लोकभारती प्रकाशन

राष्ट्रीय वीणा, प्रथम भाग, पृ. 105, प्रकाश पुस्तकालय कानपुर, पंचम संस्करण

राहुल सांकृत्यायन, आधुनिक हिन्दी काव्य धारा, पृ. 67, किताब महल, इलाहाबाद, 1945

विद्यानाथ गुप्त, हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना, द्वितीय संस्करण, 1976, एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली

विष्णु पुराण, अं. 2, अं. 3, श्लोक 24, सम्पादक एवं व्याख्याकार आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

श्रीमद्भागवतगीता, 5/19/21, गीता प्रेस गोरखपुर

Freerick Hertz, Nationalty in History and Politics, P. 417, 4th Ed., 1945, Publisher-Paul, French, Trubner and Company

Gettel R.G., Introduction to Political Science, P. 54, 3rd Ed. Publisher-Boston, New york, Ginn and Company

J. Holland Rose, Nationality in Modern Histroy, P. 147, Publisher-Macmillan, 1916

Romain Rolland, The Prophets of the New India, (Translated by E.F. Malcolm Smith, 1930) P. 4

Stalin, J., Marxism and the question of Nationalities P. 6, Publisher-Macmillan, 1916

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 107-111

DRAMA IN MODERN SANSKRIT LITERATURE

Priyamvada Kannan
Ph. D Research Scholar, Post Graduate and Research Department of Sanskrit,
Presidency College (Autonomous) Chennai - 600005

ABSTRACT :

Jaggu Āḻvār Iyengār with the pen-name Jaggu Vakuḷabhūṣaṇa, born in 1902 in Chatrogosha (near Melkote) emerged as a highly respected Sanskrit poet, playwright and scholar.

Over his long literary career, he composed a prolific body of work – poems, plays, commentaries and devotional literature in Sanskrit as well as writings in Kannada.

Vakuḷabhūṣaṇa's erudition and creative talent were recognised with several honours: he received the Sāhitya Academi Award for the Sanskrit literary work Jayantikā. His plays are especially noteworthy – he contributed more than twenty dramas, many of which are dialogues with or continuations of classical Sanskrit plays, serving as prologues or epilogues to them.

One of Vakuḷabhūṣaṇa's distinguished works/plays is Nighnatāpasam – the overcoming of austerity – written in two acts. The play is not explicitly described as a continuation of any single classical play, but is placed among original dramatic creations and reinterpretations.

The play centers around the theme of Riṣyaśṛṅga being transcended to householdership by getting him released from severe austerities and dry bachelorhood that denied him aesthetic and sensual pleasures.

INTRODUCTION :

Drama is the rt of actualising mute feelings and the nascent joy emanating therefrom, through concrete situations involving happenings to men and women. A story, a plot structure and some characterization appropriate to it are the means to the realization of this joy, through the sentiments that yield it. Very rightly has this form of art been acclaimed as the approximation to perfection in art. It employs lyrical poetry, conversation, action, serene scenic beauty, music and dance – it is a composite art par excellence. No wonder it's said "काव्येषु नाट्कं रम्यं."

Indian tradition attributes divine origin to the Sanskrit drama, giving it a religious and secular origin as well. The vedic rituals contained all the materials necessary for the development of the drama. The epics and the short narratives provided the dramas with the lyrical elements which dominates the Sanskrit dramas. The following stanza aptly reflects this idea:

देवानामिदमामनन्ति मुनयः कान्तं ऋतुं चाक्षुषम्
रुद्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वांगे विभक्तं द्विधा ।
त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरितं नानारसं दृश्यते
नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम् ।।[1]

The greatness of literature doesn't depend on "great materials" from life; especially for poets, the greatness is what the mind may invest any episode in life with, depending on its rich potentiality for literary joy which only they can discover or smell. The dramatic representation consists in the imitation of a condition or state in life (अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्) or of an occurrence happening in the world (लोकवृत्तानुकरणं नाट्यम्). Really great things may fall into insignificance in the hands of incompetent poets, ill-equipped for the task of producing joy out of appropriate contexts, however trivial it may look. Without the mercy of the poets, that joy is not available even to the aesthetically blessed.

THE SUBJECT :

Sri Jaggu Āḻvār Iyengār (1902-1994), with the pen-name Sri Jaggu Vakuḻabhūṣaṇa, is considered the doyen of modern Sanskrit creative authors and has left behind him nearly sixty-five or more delectable masterpieces across all genres of literature, showing him on par with excellencies achieved by such great poets as Bhāsa and Kālidāsa.

One of the rūpakas by him is the remarkable play "Nighnatāpasam" in two acts, which centres around the theme of "Riṣyaśṛṅga" being forayed into proper house-holdership by getting him released from severe austerities and dry bachelorhood.

[1] Malavikagnimitra I-4

The well-meaning father, rishi Vibhaṇdaka, had raised him with excessive discipline and austerities without exposing him to the outer world at all. He has not seen women at all and has no idea of sex; the impulse being lying dormant in him waiting for someone to stimulate it. He has no idea of a city, of crowds, of royalty, of grandeur and this other side of life. The King of Aṅga, Romapāda, has a foster daughter Śāntā (adopted from King Daśaratha of Ayodhyā) of marriageable age. When his kingdom is afflicted by severe famine it is suggested that only Riṣyaśṛṅga could save his kingdom from this calamity. But how to get him to the kingdom, away from his temperamentally sanguine father, easily irritable, stands as a problem. A plan is hatched to kidnap the youth through the agency of royal courtesans. They entice him in the absence of his father through sensual inducements to accepting of pleasures denied to him all these years. The youth falls prey – he arrives in the kingdom and just as he lands there, there is heavy rainfall. All ends well in the deserved marriage of the princess with the ascetic boy.

This roughly is the frame of the story.

Slight changes in the play :

1. The poet replaces the ships and megaboats disguised as naukāśrams in the original Mahābhārata story with gold-plated chariots.
2. Vibhaṇdaka is not picturised here as the possessive, jealous, irritable and primitive mindset recluse that he is made out to be in the original- on the contrary, he is characterised as liberal, foresighted and progressive-minded maharishi who wishes well of Aṅga deśa also willing to part from his son for that cause:

   अवग्रनिरासार्थं रोमपादस्य चेष्टितम् ।

   अयं प्रयातु नामाद्य पर्जन्यो वर्षतु स्वयम् ।। [1]

   This ennobling of the ṛiṣhi is an original innovation which brings color and meaning to the eventful parting, the affection of the ṛiṣhi for his son not slackening a bit.
3. The duration of the plan, the ambush, the abduction takes place in just two days here unlike several unspecified number of days in the original.
4. The encounter in the original between the hermit youth and the courtesans evokes fun (हास्यः) almost bordering on the farcical element whereas in the play it evokes a sense of romantic feeling, the adventure of love which is for the better taste of the situation and more natural. The King Romapāda and princess Śāntā have just nominal roles.
5. Riṣyaśṛṅga doesn't appear here as a buffoon, even though he isn't exposed to the outside world. The verses describing him is evident of this fact –

   कृष्णाजिन कौपीनः श्मश्रुकलामनोज्ञमुखचन्द्रः ।

[1] Nighnatapasam II-4

स्थपुटितमांसलबाहुः पीनोरा भाति मार इव ।।[1]

यौवनव्यतिकरेण राजते मानिनीहृदयहारिरूपभाक् ।

अस्मदीयहृदयानि साम्प्रतं पश्यतोहर इवाचरन्नयम् ।।[2]

तपसा परिशुद्धवृत्तिः रवितेजा विषये पराङ्मुखोयम् ।

निरुपद्रव कन्दमूल भोक्ता गतकापट्यमनास्स्मरानभिज्ञः ।।[3]

He is shown as covering his male parts with a piece of deer skin, with moustache hair just beginning to appear on his face like rising increments of moonlight; with well-developed muscles and prominent chest; he is the embodiment of Cupid stealing the hearts of the courtesans, far from provoking any fun in them.

He is praised by them as pure hearted by penance, splendorous as the sun, averse to sensuality, accustomed to fruits, roots and shoots for food, full of innocence and unaware of senses. This makes him a dignified hero at once supplying the play with its due centre of attraction.

The unnamed courtesans have colourful and meaningful roles through their clever dialogues and seem very resourceful.

Dialogues :

The chief interest of the play lies in its scintillating dialogues mostly in short, pointed and pregnant sentences, reminding one of Bhāsa's styles more than that of Kālidāsa or Bhavabhūti. The dramatist reserves all his skill and interspaces his lovely verses appropriately – one time describing the sun and the moon and then the deer listening to music, the lovely personalities of the courtesans and then to the condition of the hermit boy separated from them.

Scenic beauties :

The scene where the father and son talk to each other in Act II, where the son refers to the courtesans as "hermits from another ashram" and the father knowing them for what they must be in truth, is full of humour touching romance gently. It would easily have degenerated into something vulgar in the hands of a lesser poet.

The end :

There is no kidnapping by allurement here. The boy is made to go in search of the courtesans when the father realises that there is no point in keeping him away in isolation

[1] Ibid I-7
[2] Nighnatapasam I-8
[3] Ibid I-9

once he knows a girl from a boy, thus putting an end to his celibacy. The boy for his part does not blame his father but says cruel fate has deceived him-

एतावत्कालपर्यन्तं वञ्चितोऽस्मि विधिना यतस्सुखसामग्री विशेषमीदृशमप्रदर्श्यैव कठोरे कान्तारे स्थापितोऽस्मि I[1]

He knows that his penance is now at an end, that he is tamed, as it were, liberated from the recluse's way of life- निघ्नोऽस्मि तापसोऽहं भवतः I[2] But the king is all the happier to meet such a hermit boy who has renounced his celibacy – वयमपिनिघ्नतापसदर्शनेन धन्याः खलु[3] I Hence the title of the play.

Memorable verses :

The opening prayer dedicated to Lord Krishṇa is perhaps the most memorable of the verses employed here for its lilt, alliteration, devotion, brevity, musicality and its picturesque sum-up of the entire avatār-

बृन्दाकान्तारसञ्चारी नन्दानन्ददकेसरी ।

बृन्दारकारिसंहारी मन्दारी पातु मां हरिः ।।[4]

"He moves about in the forests of Brindāvan, the lion who has brought joy to Nanda (his father). But he is the destroyer of the enemies of God wearing mandāra flowers; may he protect me."

The bharatavākya in the end contains the theme of the usual स्वस्तिवाचकः recited at the end of daily renditions of Holy works, but saturated with rasa.

It is amazing that so much can be done in just two acts, which can better be called two scenes, but the delineating hand is that of a master craftsman - Jaggu Āḻvār Iyengār.

Ph: 9962982929

Email: kannanpriyamvada@gmail.com

[1] Nighnatapasam Act II – spoken by Riśyaśṛṅga
[2] Ibid Act II spoken by Riśyaśṛṅga
[3] Ibid Act II – spoken by Maharaja
[4] Ibid Shloka I-1

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 112-116

किन्नर विमर्श और आधुनिक समाज

डॉ. सुनिता गजभिये
एस. एस. एन. जे. महा. देवळी, जि. वर्धा।

प्रस्तावना :

अपना भारत देश विविधताओं से भरा हुआ एक देश है। जहां देश के हर व्यक्ति को समान अधिकार प्राप्त होता है। लेकिन समाज में कुछ ऐसे भी अनेक वर्ग जाति धर्म है जिन्हें आज भी समान बराबरी का स्थान नहीं मिल रहा है। यह समुदाय आज भी अपेक्षित है। समाज में इस समुदाय को किन्नर समुदाय कहा जाता है। इस समुदाय को तीसरा लिंग या हिजड़ा या नपुंसक लिंग के नाम से भी पहचाना जाता है। आधुनिक युग में भी किन्नर समुदाय को अनेक प्रकार के भेदभाव और समानताओं का सामना करना पड़ता है। किन्नर समुदाय के प्रति आज भी लोगों के मन में नकारात्मकता फैली हुई है। किन्नर समुदाय के बारे में समाज के लोग तरह–तरह की बातें करते हैं।

किन्नर विमर्श आज के समय का एक अत्यंत महत्वपूर्ण सामाजिक एवं सांस्कृतिक विषय है। भारतीय समाज में किन्नर लोगों का अस्तित्व बहुत प्राचीन काल से है – जैसे धार्मिक ग्रंथो में कथाओं और लोक परंपराओं में किन्नर विमर्श का उल्लेख मिलता है। फिर भी किन्नर विमर्श आधुनिक समाज में आते–आते किन्नर समाज से अलग हो गया उन लोगों को नहीं समान अधिकार मिले और ना ही सामाजिक स्वीकृति मिली है।

किन्नर विमर्श और आधुनिक समाज में किन्नर समुदाय को सामाजिक बहिष्कार भेदाभेद और मानवी अधिकारों से वंचित रखा जाता है। लेकिन साहित्य और कानून में इसके प्रति जागरूकता बढ़ रही है। भारतीय आधुनिक समाज में किन्नर लोगों की समस्याओं को स्वीकार करने और उनके लिए समानता शिक्षा और रोजगार जैसे अधिकारों के लिए संघर्ष किया जा रहा है। पारंपरिक सामाजिक पूर्वाग्रह के बावजूद समाज और सरकार में बदलाव की एक लहर देखी जा रही है। जहां किन्नर की स्थिति में सुधार और उन लोगों को मुख्य धारा में शामिल करने का प्रयास किया जा रहा है।

प्राचीन साहित्य में नारी विमर्श एवं पुरुष विमर्श पर अतः लिखा जा चुका है। लेकिन इस समाज में एक और लिंग विमर्श है जो नारी व पुरुष दोनों ही विमर्श का हिस्सा नहीं है। इस तृतीय विमर्श को बड़े–बड़े साहित्यकारों ने किन्नर विमर्श का नाम दिया है। किन्नर समाज ऐसा समुदाय है जिसमें तीसरे लिंग के व्यक्ति शामिल होते हैं। जो न पूरी तरह से पुरुष होते हैं और नहीं पूरी तरह से महिलाएं होती हैं। इस समाज के लोगों के अपने रीति–रिवाज जीवन शैली और मान्यताएं होती है जो सर्व सामान्य समाज से पूरी तरह अलग होती है। यह समाज सदियों से पुराना है और भारतीय पौराणिक ग्रंथ में इसका उल्लेख भी मिलता है।

किन्नर लोग पहचान के लिए ताली बजाते हैं। क्योंकि उनके खास ताली की आवाज से वह अपने समुदाय के दूसरे लोगों को पहचानते हैं। वह लोग खुशी और उत्सव व्यक्त करने के लिए भी ताली बजाते हैं जिससे शादी में या बच्चों का जन्म ऐसे शुभ अवसर पर किन्नर ताली बजाते हैं। इसके अतिरिक्त आदि को एक आशीर्वाद का रूप भी माना जाता है और यह उनके आगमन की एक आवाज भी होती है। ताली बजाना एक पहचान का प्रतीक भी होता है। समुदाय के सदस्यों को एक दूसरे की पहचान करने में मदद करता है। किसी भी शुभ अवसर पर खुद की खुशी जाहिर करने के लिए किन्नर ताली बजाते हैं।

ताली को एक आशीर्वाद माना जाता है और कुछ मान्यताओं के अनुसार उनके आशीर्वाद में बहुत शक्ति होती है। किन्नर की ताली नकारात्मक ऊर्जा को दूर करने में मदद करती है। ताली का उपयोग गुस्सा और अन्य भावनाओं को व्यक्त करने के लिए भी किया जाता है। आज देश के हर कोने में किन्नर समुदाय निवास करता है।

किन्नर का विवाह :

किन्नर का विवाह उनके रावण देवता से एक दिन के लिए होता है। अगले दिन रावण की मृत्यु के साथ उनका वैवाहिक जीवन समाप्त हो जाता है। आपको यह जानकर शायद हैरानी हो कि इन किन्नर की मौत किसी भी समय हो लेकिन उनके शव यात्रा हमेशा रात्रि को ही निकल जाती है। शव यात्रा को उठाने से पूर्व उसे चप्पलों से पीटा जाता है। और किसी गैर किन्नर को नहीं दिखाया जाता है। ऐसा माना जाता है कि ऐसा करने से मारने वाला अगले जन्म में भी किन्नर ही पैदा होगा इसलिए उनके मरने के बाद पूरा किन्नर समुदाय एक सप्ताह तक भूखा रहता है। वह दान पुण्य करता है और भगवान से प्रार्थना करता है कि दोबारा इस रूप में हमें जन्म न मिले। उनके लिए यह उनके मरने की रस्म भी है और पूरी जिंदगी पर सवाल उठा रहता है कि आखिर किसी का जीना इतना अभिशप्त कैसे हो सकता है?

किन्नरों की समस्याएं :

आज किन्नरो का अस्तित्व दुनिया के हर देश में है। समाज में उनकी पहचान भी है। फिर भी उन्हें आम इंसानों की तरह नहीं समझा जाता। उन्हें बराबरी का दर्जा नहीं दिया जाता। समाज में रहने वाले लोग उन्हें हीन भावना से देखते हैं। आखिर क्यों उन्हें इस तरह सामाजिक तिरस्कार झेलना पड़ रहा है, क्यों समाज उनके प्रति लचीला रूप नहीं अपनाता है? सवाल बहुत है। लेकिन जवाब कोई नहीं। इनके आधे अधूरेपन की वजह से भले ही समाज इन्हें अपना अंग नहीं मानते। लेकिन वास्तविकता यही है कि यह समाज के अंग है। दिव्यांग या कोढ से बीमार लोगों की तरह किन्नर भी लाचार है। मनुष्य के रूप में जन्म लेने के बावजूद किन्नर अभिशप्त जीवन जीने के लिए मजबूर है। किन्नर समुदाय का सामाजिक बहिष्कार एक ऐसा पद है जिससे किन्नर के साथ होने वाले सामाजिक भेदभाव में उनका मनोबल टूट रहा है। किन्नर समुदाय को सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक निर्णय लेने की प्रक्रिया से दूर रखा जा रहा है।

सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन से बहिष्कार की अभिप्राय परिवार और समाज से बहिष्कार, हीनता, सुरक्षा का अभाव शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाएं सीमित पहुंचते हैं। इनकी पहचान को सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार द्वारा उनके लिए विभिन्न योजनाएं बनाई जा रही है।

सरकारी योजनाएं :

- सरकार इनकी पुरानी सांस्कृतिक और सामाजिक प्रतिष्ठा की पहचान दिलाने के लिए कदम उठाए।
- सरकार किन्नरों को मुख्य धारा में शामिल करने के प्रयास करें। ताकि किन्नर स्वयं को अछूत या अलग न महसूस करें।
- इन्हें अस्पतालों में चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करें और अलग से पब्लिक टॉयलेट व अन्य सुविधाएँ उपलब्ध कराए।
- सरकार उनकी बेहतर स्थिति के लिए सामाजिक कल्याण योजना बनाएं।
- सरकार किन्नर की सामाजिक समस्याओं जैसे भय, अपमान शर्म एवं सामाजिक कलंक आदि के निवारण के लिए गंभीर प्रयास करें।

आधुनिक समाज में किन्नर विमर्श :-

पहचान और समानता का संघर्ष :

किन्नर समुदाय अपने लैंगिक पहचान को स्थापित करने और पुरुषों और महिलाओं के साथ समान व्यवहार के लिए लड़ रहा है। किन्नर समुदाय को भेदभाव और सामाजिक कार्यों का सामना करना पड़ता है।

साहित्य और कला में स्थान :

विख्यात साहित्यकारों ने किन्नर समुदाय पर उसके जीवन पीड़ा और संघर्षों को दर्शाने वाले उपन्यास, कविताएं और कहानीयां लिखी है जिससे उनके प्रति जागरूकता बढ़ी है।

कानूनी और सरकारी पहल :

किन्नर समुदाय को सरकार द्वारा कानूनी पहचान देने और सामाजिक कल्याण योजनाएं बनाने के लिए प्रयास किए जा रहे है और उनको समाज में अच्छा जीवन जीने की सुविधा मिल रही है।

मानसिकता में बदलाव :

पहले की तुलना में आधुनिक कालीन समाज में किन्ध्नर के प्रति दृष्टिकोण में सुधार हुआ है। लेकिन यह सभी अभी भी पर्याप्त नहीं है। लोगों को अपनी सोच बदलने और व्यवहार में सकारात्मक बदलाव लाने की जरूरत है।

चुनौतियों का सामना :-

भेदभाव और बहिष्कार :

समाज में नकारात्मक दृष्टिकोण के कारण किन्नर समुदाय के लोग आज भी सामाजिक बहिष्कार और अपमान का सामना कर रहे हैं।

आर्थिक और शैक्षिक समस्याएं :

उन्हें शिक्षा और रोजगार के समान अवसरों की कमी का सामना करना पड़ता है। जिससे बहुत सारे लोग गरीबी और राजनीतिक कार्य की ओर धकेले जाते हैं।

चिकित्सा संबंधी मुद्दे :

किन्नर को एचआईवी और अन्य चिकित्सा समस्याओं के लिए विशेष स्वास्थ्य सेवाओं की आवश्यकता है, जो आज भी पूरी तरह से उपलब्ध नहीं है।

मानसिकता :

सरकारी नियमों और कागजी बदलाव के बावजूद समाज की सोच में बदलाव लाना एक बड़ी चुनौती है।

सामाजिक स्वीकृति :

किन्नर समाज को आज भी सामाजिक स्वीकृति नहीं मिली है और समाज की सोच में बदलाव लाने की आवश्यकता है।

आगे की राह :

सकारात्मक दृष्टिकोण आजकल समाज के नए पीढ़ियों को किन्नरों प्रति अपनी मानसिकता बदलनी चाहिए और किन्नरों को सम्मान देना चाहिए।

समान अवसर :

किन्नरों को शिक्षा रोजगार और अन्य सामाजिक क्षेत्र में समान अधिकार प्रदान करने की आवश्यकता है।

कानूनी अधिकार :

भारत सरकार को किन्नरों के मानवाधिकारों की रक्षा के लिए बड़े कानून बनाने और लागू करने की आवश्यकता है।

जागरूकता :

आज के युग में सोशल मीडिया और साहित्य के माध्यम से जागरूकता फैला कर मानवी समाज में सकारात्मक बदल लाया जा सकता है।

निष्कर्ष :

किन्नर के प्रति हम लोग समाज की मिली जुली प्रतिक्रिया देखते हैं। समाज के जिन लोगों का किन्नर के साथ पहले कभी अथवा लगातार मिलजुल रहा है। वह बहुत जल्दी उन लोगों को स्वीकार करते हैं। उनसे अच्छा व्यवहार करते हैं। कई बार तो लोग उन्हें दैवी रूप में भी देखते हैं। लेकिन समाज का एक बड़ा तबका ऐसा है जो अपने कुछ पूर्वग्रह के कारण उनसे दूर भागता है। शायद किन्नरों का समाज से पर्याप्त मेलजोल नहीं होने से एक झिझक के कारण उन्हें कबूल नहीं करते। इस प्रकार वे लोग समाज से दो भिन्न प्रकार के प्रतिक्रियाओं को देखते हैं। एक बहुत सकारात्मक तो दूसरा अत्यंत ही नकारात्मक एवं उपेक्षात्मक। किन्नर के प्रति यह दोनों नजरिया समाज का रहता है। समाज का यह दोनों ही अतिवादी नजरिया उनकी विकास के लिए सही नहीं है। क्या मानव समाज की मानसिकता यही है? आखिर क्यों हम उन्हें अपने से इनकार कर रहे हैं? वह भी हमारी तरह इंसान है। आखिर कब तक उनके साथ भेदभाव की यह स्थिति बनी रहेगी? उनके साथ हो रही भेदभाव की स्थिति समाप्त करने के लिए हमें अपनी सोच बदलने होगी। उन्हें व्यावहारिक रूप से अपनाना होगा तब जाकर उनका विकास संभव हो पाएगा। आज दिन प्रतिदिन वे खुल रहे हैं और विकसित हो रहे हैं। समाज में अब इन्हें थोड़ा ही सही जगह देना शुरू कर दिया है और शीघ्र ही हम वह दिन भी देखेंगे जब यह समुदाय समाज में सामान्य लोगों की भांति अपनी मानवाधिकारों के साथ जीवन यापन कर सकेंगे।

संदर्भ सूची :

1. सांस्कृत्यायन, राहुल. (1948). किन्नर के देश में. नई दिल्ली : किताब माल प्रकाशन।
2. शर्मा, बंशीधर. (1976). किन्नर लोक साहित्य. हिमाचल प्रदेश : ललित प्रकाशन।

3. कृष्णनाथ. (1943). किन्नर धर्म लोक. नई दिल्ली : सातवाहन प्रकाशन।
4. भारद्वाज, प्रवेश. (2002). किन्नर समुदाय की प्रगति. वाराणसी : भार्गव भूषण प्रेस।
5. महिंद्रा, भीष्म. (2011). किन्नर कथा. नई दिल्ली : सामाजिक बुक्स प्रकाशन।
6. तुलसीदास. (1402). रामचरितमानस अयोध्या कांड दोहा 33 प्र.स.दार।

बेवसाईटस्

1. https%//www.wikipedia.in

मो. नं. 7387141533
ई–मेल – sunitagajbhiye13@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 117–121

हिंदी कहानी–साहित्य में किन्नर विमर्श और समाज की संवेदनशीलता

डॉ. निता चांगदेव देशभ्रतार
सहायक प्राध्यापक, समाज कार्य विभाग,
इंद्रप्रस्थ न्यू आर्टस्, कॉमर्स ॲण्ड सायंस कॉलेज, वर्धा (महाराष्ट्र राज्य)

प्रस्तावना :

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है, जो उसके यथार्थ, मूल्यों, संघर्षों और आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करता है। साथ ही, साहित्य समाज को प्रभावित भी करता है – विचारों को जागृत करता है, क्रांति को प्रेरित करता है और सुधार की दिशा भी दिखाता है। हिंदी साहित्य का इतिहास इस संबंध का जीवंत प्रमाण है। भक्तिकाल से लेकर समकालीन युग तक, हिंदी साहित्य ने समाज की हर पहलूओं को छुआ है, जिसमें जाति, वर्ग, लिंग, धर्म और राजनीति आदि का अंतर्भाव दिखायी देता है।

समाज में जो कुछ घटित होता है, वह किसी न किसी रूप में साहित्य में प्रतिबिंबित होता है। इसी परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो आज के हिंदी साहित्य में किन्नर या तृतीय लिंगी समुदाय से जुड़ी समस्याएँ, अनुभव, और संघर्ष एक महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में उभर रहे हैं। हिंदी साहित्य में 'किन्नर' शब्द प्राचीन ग्रंथों से जुड़ा है, जहां यह आकाशीय संगीतकारों को संबोधित करता था। किंतु आधुनिक संदर्भ में किन्नर हिजड़ा समुदाय का पर्याय बन गया है, जो जैविक रूप से अंतरलिंगी या ट्रांसजेंडर अल्पसंख्यक हैं। भारतीय समाज में किन्नरों को देवता का अवतार माना जाता है। किंतु दैनिक जीवन में वे हर पल अपमान, बहिष्कार और आर्थिक शोषण का शिकार होते हैं। हिंदी कहानी–साहित्य में इस विरोधाभास को कई बार रेखांकित किया है।

विगत कुछ दशकों में हिंदी कहानी–साहित्य ने स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श जैसे अनेक नए सामाजिक पहलूओं को अपनाया है। इन्हीं विमर्शों की श्रृंखला में 'किन्नर विमर्श' का उद्‌गम हुआ है, जो समाज के हर उस तबके की आवाज़ बनकर सामने आया है जिसे सदियों से उपेक्षित और हाशिए पर धकेला गया है। साथ ही मानव जीवन विकास की हर मुख्यधारा से पृथक किघ्या गया है। किन्नर समुदाय भारतीय समाज का एक अभिन्न अंग है। परंतु सामाजिक दृष्टि से उन्हें आज भी बराबरी का दर्जा नहीं मिल सका। इस समुदाय की पीड़ा, उनकी संवेदनाएँ, और उनके अस्तित्व का संघर्ष हिंदी कहानी–साहित्य में अब गंभीरता से उभरने लगा है।

किन्नर विमर्श की अवधारणा :

किन्नर विमर्श का तात्पर्य है– तृतीय लिंगी या ट्रांसजेंडर समुदाय के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा मानसिक जीवन से जुड़ी समस्याओं तथा उनकी अस्मिता को मध्य्य रखकर किया गया साहित्यिक और वैचारिक कथन करना। यह विमर्श समाज के उस अंग की उजागर करता है जो लिंग की पारंपरिक धारणाओं के अनुरूप नहीं है। पुरुष और स्त्री की दोहरी परिभाषा के बीच किन्नर या तृतीय लिंगी व्यक्ति सदैव एक असहज स्थिति में जीवन यापन कर रहे हैं। इस समाज की पहचान खोज और सामाजिक स्वीकृति के संघर्ष से भरी है। किन्नर विमर्श का प्रमुख उद्देश्य इस समुदाय केवल दया की दृष्टि से नहीं, बल्कि समाज में सम्मान और समानता की नज़र से देखा जाए और हिंदी कहानी–साहित्य ने इस उद्देश्य को आगे बढ़ाने में बहुत ही अहम भूमिका निभाई है।

हिंदी कहानी-साहित्य में किन्नर विमर्श का उत्थान :

हिंदी साहित्य में किन्नर समुदाय को केंद्र में रखकर जो लेखन किया गया है वह अन्य विमर्श की तुलना में देर से आरंभ हुआ है। स्त्री या दलित विमर्श के पश्चात ही किन्नर विषय पर गंभीर लेखन प्रारंभ हुआ ऐसा प्रतीत होता है। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध और इक्कीसवीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में कई लेखकों एवं साहित्यकारों ने इस विषय पर ध्यान केंद्रित किया है।

प्रारंभिक लेखन में किन्नर विमर्श :

प्रारंभिक दौर में किन्नरों समुदाय का चित्रण अधिकतर हास्य, उपहास या रहस्यमय रूप में किया जाता था। लोक कथाओं, कहानी, कहावतों या किसी किस्सों में उन्हें शुभ–अशुभ का प्रतीक माना जाता रहा है। लेकिन उनके मनुष्य होने के अनुभव को समझने का प्रयास कतई नहीं किया गया।

समकालीन लेखन में किन्नर विमर्श :

पूर्व काल के समाप्त होते ही और इक्कीसवीं सदी के आगमन होने के पश्चात् साहित्य के लेखकों ने किन्नर समुदाय के जीवन को गंभीरता से वर्णन करना आरंभ किया। जिसमें नीरजा माधव जी का प्रख्यात उपन्यास 'यमदीप' यह किन्नर विमर्श की दिशा में मील का पत्थर माना जाता है। उपन्यास में किन्नर पात्र 'ज्योति' के माध्यम से समाज द्वारा किए जाने वाले उपेक्षा, बहिष्कार, प्रताड़ना एवं मानसिक यातनाओं को यथार्थ चित्रित किया गया है। इसके अलावा किन्नर कथा, मैं पायल, तीसरी ताली जैसी कई रचनाओं ने भी किन्नर समुदाय के जीवन और संघर्ष को समाज के सामने उजागर करने का सार्थक प्रयास किया गया है।

हिंदी साहित्य एवं कहानीकारों ने इस विषय पर अनेक कथा एवं लघुकथाएँ भी लिखीं है, जिनमें पहचान, तीसरा आईना, लाल जोड़ी आदि कथाएँ उल्लेखनीय हैं। इन कहानियों का उद्देश्य केवल किन्नरों के प्रति सहानुभूति जगाना नहीं, बल्कि किन्नर समुदाय के प्रति समानता एवं संवेदनशीलता का वास्तविक अर्थ क्या है, इससे पाठकों को भली–भाँति परिचित कराना।

हिंदी कहानी एवं साहित्य में किन्नर जीवन का वर्णन –

आत्म पहचान की समस्या :

हिंदी साहित्य में किन्नरों के जीवन का सबसे अहम सवाल है की 'मैं कौन हूँ?' यह सवाल न केवल किन्नरों की व्यक्तिगत पहचान से जुड़ा हुआ है, बल्कि समाज में उनकी स्वीकार्यता का भी है। कथाकारों ने

किन्नरों की इस अस्मिता एवं संघर्ष को बेहद गहराई से व्यक्त किया है। कई कहानियों में किन्नर पात्र को उनके बचपन में ही परिवार से अलग कर दिया जाता हैं तथा समाज में छोड़ दिया जाता है जिससे उन्हें एक अलग और नकारात्मक पहचान के साथ जीने को मजबूर किया जाता हैं।

सामाजिक उपेक्षा एवं बहिष्कार :

हिंदी साहित्य या कहानियों में हमेश यह दिखाया जाता है कि समाज किन्नरों को 'मनुष्य' के रूप में स्वीकार नहीं करता। उन्हें शादी, शिक्षा, रोज़गार या अन्य सामाजिक जीवन से बेदखल किया जाता है। 'तीसरी ताली' जैसी कहानियों में यह स्पष्टरूप दिखायी देता है कि समाज द्वारा यह असंवेदनशीलता उनके भीतर गहरे क्रोध और मानसिक व्यवहार में बदलाव को जन्म देती है।

आजीविका और संघर्ष :

किन्नर समुदाय का जीविका–संघर्ष भी साहित्य में प्रमुख विषय रहा है। समाज द्वारा मुख्यधारा से अलग किए जाने के कारण वे प्रायः मांगने या नाच–गाने के पेशे तक सीमित रह जाते हैं। 'मैं पायल' जैसी रचनाओं में लेखक ने इस जीवन की आर्थिक विवशता को मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है।

स्नेह, भावना और संवेदनाएं :

हिंदी कहानी–साहित्य ने किन्नरों न केवल सामाजिक पात्र के रूप में दिखाया है, बल्कि संवेदनशील मनुष्य के रूप में भी उन्हें प्रस्तुत किया है। किन्नर भी आम मनुष्य जैसा प्रेम, स्नेह करते हैं, उन्हें भी भावनाएं होती है, वे दुखी भी होते हैं। साथ सुखी जीवन के सपने भी देखते हैं और अपने अस्तित्व को पहचान देना चाहते हैं। इस दृष्टि से यह शोधालेख पाठको के मन में किन्नरों के प्रति गहरी मानवीय संवेदनाओं का निर्माण करता है।

समाज में संवेदनशीलता का अभाव :

भारतीय समाज में किन्नर समुदाय को वर्तमान स्थिति में भी भय, उपेक्षा या उपहास की दृष्टि से ही देखा जाता है। उनके प्रति सहानुभूति तो दिखाई जाती है, परंतु उनमें समानता शून्य होती है। हिंदी कहानी–साहित्य इस असंवेदनशीलता की आलोचना करता है। हिंदी साहित्य लेखकों ने अपनी लेखन के माध्यम से यह दिखाने की कोशिश की है कि संवेदनशील समाज वही होता है जो समाज के हर व्यक्ति तथा समुदाय को उसकी आत्म पहचान एवं गरिमा के साथ स्वीकार करता है।

साहित्य की भूमिका :

साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है। साथ ही यह समाज को संवेदनशील बनाने का सबसे प्रभावी माध्यम भी है। हिंदी कहानियों तथा साहित्य ने यह कार्य उचिघ्त रूप में पूर्ण करने का प्रयास किया है– उन्होंने किन्नर पात्रों के माध्यम से समाज को यह संदेश दिया है कि मानवता किसी जाति, लिंग या वर्ग से बड़ी है। पाठक जब किन्नरों की कहानियों को पढ़ता है, तब वह किन्नर पात्र के साथ स्वयं को जोड़ने का अनुभव करने लगता है और यही संवेदनशीलता का प्रारंभ है।

सामाजिक परिवर्तन की दिशा :

हिंदी कथा–साहित्य में किन्नर विमर्श के विस्तृत रूप के बाद समाज में किन्नरों के प्रति धीरे–धीरे दृष्टिकोण में परिवर्तन आने लगा है। आज किन्नर समुदाय शिक्षा, राजनीति और कला के क्षेत्र में अपना स्थान

सुनिश्चित कर रहा है। इस परिवर्तन को प्रेरित करने में साहित्य्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। लेकिन सबसे अहम बात तो यह है कि साहित्य के मंच एवं शैक्षिक संस्थाओं में किन्नर लेखकों की रचनाओं को समान अवसर प्रदान किया जाए।

किन्नर विमर्श के प्रमुख आयाम :

- किन्नर पात्र हमेशा अपने अस्तित्व और आत्मसम्मान की खोज में जीते हैं।
- किन्नर समुदाय इस समाज की दोहरी मानसिकता को आव्हान देते हैं।
- साहित्य उन्हें सम्मान और संवेदना प्रदान कर उनकी मानवीय गरिमा को पुनर्स्थापित करने का प्रयास करता है।
- किन्नर विमर्श हाशिए पर पड़े स्त्री तथा दलितों का प्रतिनिधित्व करता है।

समकालीन लेखक और उनका योगदान :

नीरजा माधव, ममता कालिया, संजीव, असगर वजाहत, शिवमूर्ति जैसे अनेक साहित्य के लेखकों ने समाज में फैली असमानताओं को अपनी कहानियों एवं साहित्य लेखन के माध्यम उजागर करने का प्रयास किया है। नवोदित लेखकों में भी किन्नर विमर्श एक मुख्य विषय के रूप में उभर रहा है। कई लेखकों ने आत्मकथनात्मक शैली के द्वारा किन्नरों की आवाज़ को बूलंद करने का कार्य किया है, जिससे पाठकों को किन्नरों के अनुभवों से बड़े सरलता से जुड़ा जाक सकता है।

समाज की संवेदनशील भूमिका :

हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श केवल चर्चा का विषय नहीं है। अपितु यह सामाजिक न्याय का भी गंभीर प्रश्न है। समाज यदि वास्तवरूप में इन समुदाय के प्रति संवेदनशील बनना चाहता है, तो उसे निम्न पहल करनी होगी।

- शैक्षणिक संस्थानों में लैंगिक विविधता पर खुली चर्चाओं का आयोजन करना।
- सोशल मीडिया तथा फिल्मों में किन्नर पात्रों को पूर्वाग्रह रूप में न दिखाया जाए।
- साहित्यिक क्षेत्र में पुरस्कारों एवं मंचों पर किन्नर लेखकों को समान अवसर प्रदान किया जाए।
- स्कूल तथा महाविद्यालयीन स्तर पर किन्नर विषयों पर आधारित रचनाओं को पढ़ा जाएँ।

निष्कर्ष :

हिंदी कथा–साहित्य में किन्नर विमर्श ने साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की है। यह केवल एक सामाजिक विषय नहीं, अपितु यह मानवीय संवेदना का एक गहरा साक्ष भी है। हिंदी साहित्य में और समाज में भी अब किन्नर पात्र दया या उपहास का विषय नहीं रहा है, बल्कि आत्म सम्मान और अस्तित्व का प्रतीक बन रहा हैं। आज हिंदी कथा–साहित्य ने समाज को यह समझाया है कि 'मानवता' किसी भी लिंग की सीमाओं में नहीं बंधी होती है। आज समाज में आवश्यकता इस बात की है कि हम इस किन्नर विमर्श को और गहन तरीके से समझें, पढ़ें और समाज के हर वर्ग में इस वर्ग के प्रति संवेदनशीलता फैलाने का प्रयास करें। किन्नर विमर्श न केवल साहित्य के लिए एक नई दिशा है, बल्कि यह मानव समाज की दया, करूणा, समानता और संवेदनशीलता की अस्मिता भी है।

संदर्भ सूची :

1. माधव, नीरजा. (2002). यमदीप. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
2. वजाहत, असगर. (2017). तीसरी ताली. दिल्लीः राजपाल एंड संस.
3. सिंह, पायल. (2018). मैं पायलः एक किन्नर की आत्मकथा. नई दिल्लीः भावना प्रकाशन।
4. झाला, शैलेषकुमार. (2018). हिंदी साहित्य में समकालीन नारी विमर्श. रिव्हयूव ऑफ रिसर्च, जून 2018।
5. शर्मा, मीनाक्षी. (2019). किन्नर विमर्श और समाज की संवेदनशीलता. आधुनिक विमर्श जर्नल.
6. वेंकटेश्वर, एम. (2020). हिंदी कथा–साहित्य में किन्नर स्वर. प्रथम अंक 153. अप्रैल 2020. साहित्य कुंज।
7. सिहाग, एम. एवं शर्मा, विनोद कुमार. (2021). किन्नर विमर्श : इतिहास, समाज, साहित्य के संदर्भ में. बोहल शोध मंजूषा राजस्थान।
8. भारती. (2021). दर्द, उपेक्षा तथा घृणा से भरे जीवन की कथा है 'किन्नर कथा'. अपनी माटी. जुलाई 31, 2021।
9. मिश्रा, रचना. (2021). हाशिए से केंद्र की ओरः हिंदी कथा साहित्य में किन्नर पात्रों की भूमिका. हिंदी अध्ययन पत्रिका.
10. सांकृत्यायन, राहुल. (2024). किन्नर देश में. नई दिल्ली : प्रभाकर प्रकाशन।

बेवसाईटस् :

1. https://warpudkarcollege.com/assets/pdf/ChapterInBooks/2023-24/21_WSA_2023-24_CHEB1.pdf
2. http://www.socialresearchfoundation.com/new/publish-journal.php
3. http://www.socialresearchfoundation.com/anthology.php#8
4. https://www.ijirmps.org/papers/2024/3/230692.pdf
5. https://khabarlahariya.org/is-the-kinnar-community-not-a-part-of-society/
6. https://sahityakunj.net//entries/view/hindi-katha-sahitya-mein-kinnar-swar
7. https://oldror.lbp.world/UploadedData/11304.pdf
8. https://www.indiacode.nic.in/handle/123456789/13091?view_type=browse

ई–मेल : nitadeshbratar@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 122-127

ज्ञान प्रकाश विवेक के कथा साहित्य में आर्थिक मूल्य

सुमन लता, शोधार्थी
डॉ. सुनीता सिंह, शोध निर्देशिका
हिंदी विभाग, ओम स्टर्लिंग ग्लोबल यूनिवर्सिटी, हिसार, हरियाणा।

आर्थिक मूल्य :

दैनिक आवश्यकताओं को पूर्ण एवं सामाजिक जीवन में प्रगति के लिए धन अति आवश्यक है। व्यक्ति दैनिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने एवं सामाजिक प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए धन कमाना चाहता है। खेती, नौकरी, व्यवसाय एवं मजदूरी धन प्राप्ति के साधन है। धन की आवश्यकता और उपयोग के विषय में डॉ. जयकरण का मत है, 'अर्थ समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। किसी भी समाज की आर्थिक स्थिति उस समाज के स्वरूप को काफी प्रभावित करती है। आधुनिक जीवन में अर्थ की महता बहुत बढ़ गई है। किंतु अर्थ की प्रभुता जितनी अधिक बढ़ी है। जीवन की विषमताओं में भी उसी गति से वृद्धि हो रही है। व्यक्ति की इच्छाएं, आकांक्षाएं, मानोदिशाएं आदि उनकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है'। इस प्रकार अर्थ भौतिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने का साधन एवं व्यक्ति की मनोवृतियों का निर्धारक है।

आर्थिक मूल्य से अभिप्राय है – व्यक्ति और समाज की रोजगार व्यवस्था, श्रम का महत्व, धन की असमानता, गरीबी–समृद्धि का अंतर, संसाधनों का बंटवारा और आर्थिक न्याय। साहित्यकार जब इन विषयों को कथा में प्रस्तुत करता है तो वह केवल कहानी नहीं लिखता, बल्कि समाज की वास्तविकता को उजागर करता है।

उच्च वर्ग के विषय में डॉ. मोहिनी शर्मा के अनुसार, 'भारत का उच्च वर्ग अर्थ समृद्ध होते हुए भी मूल्यों से शून्य हैं। इस वर्ग का लक्ष्य गरीबों का अधिक से अधिक शोषण करके अर्थ इकट्ठा करना है, क्योंकि इसे यूरोपीय, अमेरिकी, पूंजीपतियों से प्रतिस्पर्धा करनी है। भले ही उसमें समस्त मानवीय मूल्यों की हत्या ही करनी पड़े।'[1]

अर्थ किसी भी राष्ट्र की प्रगति, प्रतिष्ठा एवं स्तर का निर्धारक है। प्राचीनकाल से ही समाज निर्माण में अर्थ की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार अर्थ है। जिस व्यक्ति के पास जितना अधिक धन होता है। वह व्यक्ति उतना ही सुखी और संपन्न माना जाता है। भौतिक सुख–सुविधाओं की प्राप्ति में अर्थ महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आज संसार में आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के लिए अनेक वाद प्रचलित है, जैसे साम्यवाद, समाजवाद और पूंजीवाद। समाज की सभी संस्थाओं की तुलना में आर्थिक संस्थाएं सबसे अधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है। किसी भी देश की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों

से अधिक प्रभावशाली उसकी आर्थिक परिस्थितियां होती हैं। प्रतिकूल आर्थिक परिस्थिति में देश का नवनिर्माण रुक जाता है।

किसी भी राष्ट्र की सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक उन्नति का आधार आर्थिक व्यवस्था है। सीताराम झा के अनुसार, 'आर्थिक स्थिति सामाजिक जीवन और स्वरूप को अनेक प्रकार से प्रभावित करती है। मनुष्य के आचार–विचार, धर्म, नैतिकता आदि पर अर्थ का अत्यधिक प्रभाव रहता है। आर्थिक सुव्यवस्था के अभाव में सामाजिक चेतना समुचित रूप से विकसित नहीं हो पाती।'[3]

सामाजिक निर्माण में धन की महत्वपूर्ण भूमिका है। देश की आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए धन महत्वपूर्ण है। धन का महत्व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी है। किसी भी देश की आर्थिक स्थिति के आधार पर संसार में उसके स्तर का निर्धारण किया जाता है। आर्थिक मूल्य जीवन में परिवर्तन का आधार बनता है। भोगवाद एवं अर्थ प्रेरित सभ्यता के कारण आज सही–गलत–आचार–विचार एवं समाज में स्थिति का निर्धारक धन है। रमेश देशमुख के अनुसार, 'धर्म, अर्थ काम, मोक्ष, इन चार पुरुषार्थों की सिद्धि ही मानव जीवन का लक्ष्य माना गया है। किंतु भारतीय चिंतकों ने इन चार पुरुषार्थों में 'अर्थ' को सर्वोपरि दर्जा कभी नहीं दिया। अर्थ महत्वपूर्ण होते हुए भी 'साधन' ही रहा साध्य नहीं। किंतु इस युग में अर्थ को सहज ही सर्वोपरि स्थान प्राप्त हो गया है। इसके फलस्वरुप हमारी अर्थव्यवस्था ने हमें विकराल आर्थिक विषमता के कगार पर खड़ा कर दिया है।'[4]

किसी भी समाज के वास्तविक स्वरूप के चित्रण में आर्थिक संस्थाओं की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। अपितु धन समाज का मेरुदंड होने के कारण समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ज्ञान प्रकाश विवेक के कथा–साहित्य में आर्थिक मूल्य के विभिन्न पक्षों की अभिव्यक्ति मिली है।

विवेक जी के कथा साहित्य में आर्थिक मूल्य :

(क) श्रम और श्रमिक वर्ग :

उनकी रचनाओं में श्रमिक वर्ग की समस्याएँ बार–बार उभरती हैं। मजदूर और किसान अपने श्रम का उचित मूल्य नहीं पाते।

- बेरोजगारी और महँगाई की मार।
- प्रवासी मजदूरों की पीड़ा।
- शोषण और गरीबी का चक्र।

(ख) आर्थिक विषमता :

धनी और गरीब वर्ग के बीच की गहरी खाई विवेक जी की कथाओं का यथार्थ है। गरीबों के जीवन में संघर्ष और अभाव है, जबकि अमीर वर्ग वैभव का उपभोग करता है।

(ग) मध्यवर्ग की दुविधा :

उनकी कहानियाँ मध्यवर्गीय परिवार की समस्याओं को भी सामने लाती हैं। सीमित आय, महँगाई, बच्चों की शिक्षा और सामाजिक प्रतिष्ठा बनाए रखने की मजबूरी उनके आर्थिक जीवन को तनावपूर्ण बनाती है।

(घ) स्त्री और आर्थिक परतंत्रता :

स्त्रियाँ अक्सर आर्थिक रूप से पुरुषों पर आश्रित रहती हैं। विवेक जी स्त्रियों की इस पराधीनता को सामाजिक असमानता का एक बड़ा कारण मानते हैं।

3. आर्थिक मूल्यों का सामाजिक संदर्भ :

ज्ञान प्रकाश विवेक का कथा साहित्य यह बताता है कि समाज का विकास तभी संभव है जब आर्थिक न्याय स्थापित हो। गरीब, किसान, मजदूर और स्त्रियों को उनके श्रम का सम्मान और अधिकार मिले। केवल सामाजिक ही नहीं, बल्कि आर्थिक समानता भी लोकतंत्र की नींव है।

'चाय का दूसरा कप' उपन्यास में देवदत्त और केतन की बातचीत के द्वारा आर्थिक मूल्य को उजागर किया गया है, 'एक रिक्शावाला बीस रुपए में घर चलाता है। एक पूंजीपत्ति की मासिक आय चालीस करोड़! अमीर और गरीब की औसत आमदनी में दस लाख गुना का फर्क है। इस एक देश में कितने–कितने देश हैं? उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग की आय में जमीन आसमान का बड़ा अंतर दिखाई देता है। व्यक्ति की इच्छाओं, मनोवृतियों एवं जीवन स्तर के निर्धारण में अर्थ का बड़ा महत्व है। 'नई दिल्ली एक्सप्रेस' में लेखक ने आर्थिक विफलता के कारण निर्धन व्यक्ति की मनोवृत्ति की दयनीय एवं आत्म सम्मान के नष्ट होने का वर्णन किया है, 'वो लोग, गरीब लोग। कंपार्टमेंट के दोनों दरवाजों के बीच, खाली जगह पर पसरे हुए हैं। जैसे उन्होंने अपनी एक बस्ती बस ली हो। वो अपनी दुनिया में..... जो बहुत गरीब दुनिया है, उस दुनिया में मस्त हैं ..... वे सब बिना टिकट यात्रा कर रहे हैं। टिकट खरीदने के पैसे उनके पास होते हैं। जिनके पास लंच और डिनर के भी पैसे होते हैं। उनके पास न रोटी ना रेल यात्रा का टिकट।'[5]

आर्थिक विपन्नता के कारण इन लोगों का आत्मसम्मान नष्ट हो चुका है। जैसे जीवन में आंख मिलाने का साहस इन लोगों में समाप्त हो चुका है। 'तमाशा' कहानी में लेखक ने आर्थिक मूल्य को रेखांकित किया है। जो असंतुलित आर्थिक विकास की देन है, 'दिल्ली महानगर था[6]। वह अपने बाजारो और पॉश कॉलोनियों पर इतराता था। लेकिन पाइपलाइन के लीकेज पर नग्न अवस्था में नहाती स्त्रियां, पटरी पर सोते और कसमसाते लोग, जेबकतरे, भिखारी, झोपड़ियों की न खत्म होने वाली कतार! .... ये सब इस शहर के मवाद थे। हर एक बड़े शहर की अपनी एक सभ्यता होती है और ये सभ्यता का मवाद भी! शहरें दिल्ली अपने मवाद को छुपाने की हर संभव कोशिश करता था। शर्मशार होता था, शायद न भी होता हो। शर्मशार तो वह उस दरिया पर भी नहीं होता था, जो एक नाले में बदल चुका था।'[7]

तमाशा कहानी के द्वारा लेखक ने जीवन स्तर के अंतर के साथ–साथ हमारे आर्थिक नियोजन की कमियों पर भी व्यंग्य किया है। 'बहेलिये' कहानी में प्रताप सिंह, मानसिंह का पूरी तरह से आर्थिक शोषण करता है और वह इल्जाम मानसिंह के ऊपर लगा देता है, 'सकते में आ गया मानसिंह। यह सब क्या है? कैसा न्याय है ये? बड़े लोगों का फरेब है ये? सब लोग झूठ का पक्ष ले रहे हैं। क्या कसूर है मेरा? यही कि मैं सच की आवाज बुलंद की..... यही कि मैं भ्रष्ट धूर्त चौधरी को कटघरे में खड़ा करने का साहस जुटाया..... कैसा न्याय है ये? ये मेरे मुर्गे मार दिय.....। मेरा खेत जलाकर राख कर दिया गया है और जुर्माना भी मुझ पर ठोक दिया गया। जलील भी कितना किया? एक हफ्ता उस मक्कार चौधरी के पांव लागूं जिसने मेरे खेत फूंक दिये।'[8]

'गली नंबर तेर उपन्यास' में लेखक चौकीदार द्वारा दिन–रात मेहनत करने पर भी अपना पेट भरने एवं तन ढकने में असमर्थ होने का वर्णन किया है। गरीबी ने उसे बेचारा बनाकर उसका आत्म सम्मान नष्ट कर दिया है, 'जिंदगी जीने के लिए यह लोग कितने मुनासिब हैं? कमीज न हुई तो घुटनों से पेट को छिपा लेंगे। मैं उसे अपनी दो फटती हुई और लगभग फट चुकी पैंट और कमीज दी। वह पलकित हो उठा। उसके काले आबनूसी

चेहरे पर चमक उतर आई थी। वह बार–बार पैंट और कमीजें देखता–शायद मैंने नए कपड़े को ऐसे देखा था कभी। वह फटी हुई पैंट को उसी ढंग से देख रहा था। उस तक आते–आते खुशी इस पैंट की तरह क्यों फट जाती है। यह सवाल अनुत्तरित था।"[9] यहां गरीब चौकीदार के द्वारा दिन रात मेहनत करने पर भी जीवन निर्वाह की कठिनाइयों का वर्णन किया है। वह आधारभूत आवश्यकताओं जुटाने में असमर्थ है।

'जलजला' कहानी में सविता के साथ बलात्कार होने के बाद भी पूंजीपति का बेटा पैसे के प्रभाव व पहचान के बल पर अपनी जमानत के लिए जुट जाता है। गरीब व्यक्ति को अदालत में भी न्याय नहीं मिल पाता है, 'जानते हो बेटा जमानत किसने दी है? वही मलिक साहब जो विधायक है, पैसे वाले हैं, पहुंचे हैं, उनकी ऊपर तक... जानते हो क्या कहते फिर रहे हैं? –लड़की बदचलन है, उसने ही जानबूझकर फंसाया है लड़कों को.. .अब केस चलेगा, सब नाटबाजी होगी। हां बेटा सविता को भी हाजिर होना पड़ेगा। एक–एक बात भरी अदालत में पूछी जाएगी। कब हुआ? कैसे हुआ? कौन–कौन थे? पहले कौन आया कपड़े उतारे या फाड़े?'[4]

'बैकबेंचर' कहानी में मल्टीनेशनल कंपनियों में व्याप्त कर्मचारियों के शोषण, बेरोजगारी एवं मुक्त अर्थव्यवस्था के दुष्प्रभाव का उद्घाटन किया है, 'बाजार का यही तो फंडा था। वो मंदी को भी सेलिब्रेट कर रहा था। चौथा ऑटो एक्सपो मनीषा भल्ला और उसके साथियों के लिए अच्छा नहीं रहा था। उन्हें रिजेक्ट कर दिया था। अब यहां भी कंपटीशन था। वो नौजवान लड़के–लड़कियां आ गए थे जो आक्रामक थे। जो अपने सामने किसी को भी 'क्रश' कर सकते थे। वो बाजार की भाषा जानते थे जो बाहर से विनम्र लेकिन अंदर से तल्ख़ और खडूस थी। बाजार में ऐसे नौजवानों का खैरकदम था मनीषा भल्ला और उसके साथियों ने बहुत आग्रह किया कि उन्हें भी कहीं एडजस्ट कर लिया जाये। लेकिन कॉर्पोरेट वर्ल्ड में रिक्वेस्ट, अनुरोध, निवेदन और इल्तजा जैसे शब्द भी बेअसर और गैरजरूरी हो चुके थे।'[5]

'गली नंबर तेरह' का पात्र कुमार भी हर प्रकार से योग्य होने पर भी रोजगार के लिए मारा–मारा फिरता है। वह अखबार में वैकेंसी की ऐड देखता है। अपना इंटरव्यू देता है, लेकिन हर जगह उसे मायूसी ही हाथ लगती है, 'मैं सोच के शहर में गुम था। वह जान रीड की किताब के पन्ने पलट रहा था। वही किताब उसकी निजी लाइब्रेरी में थी। वही किताब जो उसने मुफलिसी के दिनों में भेज दी होगी। निर्धन, बेरोजगार और आत्मसम्मानी युवक के लिए किताब भी हथियार हो जाती है। निर्धनता की जंग लड़ने के लिए।'[6]

'कमीज' कहानी का पात्र एक ऑफिस में क्लर्क है। वह हर बार यह सोचता है कि वह इस महीने के खर्च से अपनी कमीज जरूर लेगा। लेकिन हर बार कोई ना कोई खर्च निकल आता है जिससे उसे अपना फैसला बदलना पड़ता है, 'अब कुल दो कमीजें रह गई थी सरल के पास। पिछले महीने से बजट को इस प्रकार निचोड़ता आ रहा था कि उसके पास साठ रुपए ही बच जाएं और वह नई कमीज सिलवा सके, बहुत सारी जमा घटा करने के बाद पैंसठ के करीब बचा भी लिए थे सरल ने। वह बहुत खुश भी था कि चलो एक अच्छा शर्ट पीस साठ में ले लेगा। सिलाई भी तो कम नहीं। चलो सिलवा अगले महीने लूंगा। जैसे विचार बनता –बुनता रहा।'[5] दैनिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में असक्षम बसंत दैनिक खर्चों की उधेड़–बुन में लगा रहता है।

ज्ञान प्रकाश विवेक के द्वारा रचित कहानी संग्रह 'पिताजी चुप रहते हैं का प्रकाशन आधार प्रकाशन द्वारा 1991 में किया गया। इस कहानी संग्रह की प्रथम कहानी 'किरचें' में विवेक जी ने आर्थिक भेद के कारण पहचान को ही भूल जाने का चित्रण किया है। कहानी का पात्र किरदार सरजू चारपाई बुनकर जीवन व्यतीत करता है।

एक दिन वह अपने दोस्त के घर ही चारपाई बनने के लिए चला जाता है। उसका दोस्त उसे पहचान कर भी नहीं पहचान पाता है। भौतिकता के दौर में पहचान, कपड़े, व्यवसाय और आर्थिक स्तर पर निर्भर करती है। अगर साथ रहने वाला उसमें फिट नहीं बैठता है तो हम अपनी आंखें बंद कर लेते हैं, 'पहली बार वह अकड़कर खड़ा हुआ था। उसका आत्मविश्वास और अकड़कर खड़ा होना मेरे लिए विचित्र था। वह जाने लगा था। उसने मुझे आखरी बार देखा जैसे आंखों से प्रश्न पूछ रहा हो–बहुत बड़े आदमी बन गए हो। क्या इसी कारण नहीं पहचान रहे मुझे।'[6]

'अमानवीय' कहानी में झुग्गी–झोपड़ियों में जीवन व्यतीत करने वाली प्यारी और उसके पति संकर के माध्यम से निम्न वर्ग के जीवन को चित्रित किया है। आर्थिक अभाव के कारण जिस दिन दोनों की लड़ाई होती है। उसी दिन संकर शराब के अड्डे पर चला जाता है। प्यारी काम पर नहीं जाती और उनके तीनों बच्चे भूख के कारण लड़ते रहते हैं। शराब की लत के कारण संकर का मानवीय स्तर बहुत गिर जाता है। वह लाश के पांव से भी जूते निकाल लेता है और मोची को पैंतीस रूपए में बेच देता है जो पाठक के मन में उसके प्रति घृणा पैदा करता है।

'जी. डी. उर्फ गरीबदास कहानी' में लेखक ने गरीब बने अमीर व्यक्ति की दुर्दशा का वर्णन किया है।

'जीतों' कहानी में एक नारी के आर्थिक संघर्ष को कहानी का आधार बनाया गया है।

निष्कर्ष :

आर्थिक मूल्य के विवेचन में लेखक ने वर्ग भेद के अंतर्गत उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग के शारीरिक, मानसिक, एवं आर्थिक शोषण को वर्णित किया है। उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग के शोषण के लिए संस्पेंशन का डर दिखाना, ट्रांसफर दुर–दराज क्षेत्र में कारना। निर्धारित वेतन से कम मजदूरी देकर बीमार तथा बुजुर्ग मजदूर को नाकारा घोषित करके नौकरी से निकालकर उसका आर्थिक शोषण किया जाता है। इसी प्रकार भ्रष्टाचार के कारण नौकरियों में भाई–भतीजावाद टेंडरों में अपने ही लोगों को व वरीयता देना शामिल है। महंगाई के कारण निम्न वर्ग के अस्त–व्यस्त जीवन का वर्णन किया गया है।

ज्ञानप्रकाश विवेक के कथा–साहित्य में आर्थिक मूल्य समाज और व्यक्ति की जीवन–यात्रा के यथार्थ स्वरूप को सामने लाते हैं। उनकी रचनाओं में आर्थिक विषमताएँ, निर्धनता, बेरोजगारी, श्रम का शोषण, वर्ग–भेद तथा पूँजीवादी व्यवस्था की खामियाँ बार–बार चित्रित होती हैं। वे यह स्पष्ट करते हैं कि आर्थिक असमानता केवल आर्थिक स्थिति तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह सामाजिक, नैतिक और मानवीय मूल्यों को भी प्रभावित करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जयकरण (डॉ.) श्री नरेश मेहता के कथा साहित्य में मध्य वर्ग, नई दिल्ली : संजय प्रकाशन, 2011 पृष्ठ 146
2. शर्मा, मोहिनी, हिंदी उपन्यास और जीवन मूल्य, (स्वातंत्र्योतर हिंदी उपन्यासों के संदर्भ में) दिल्ली : इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, 1986 पृष्ठ 168
3. झा, सीताराम, भारतीय समाज का स्वरूप, पटना : बिहार ग्रंथ अकादमी, 1974 पृष्ठ 107

4. देशमुख, रमेश, आठवें दशक की हिंदी कहानी में जीवन–मूल्य, कानपुर : विद्या प्रकाशन, 1994
5. विवेक, ज्ञानप्रकाश, चाय का दूसरा कप, उत्तर प्रदेश : हार्पर कॉलिंस पब्लिशर्स, 2010 पृष्ठ 128
6. विवेक, ज्ञानप्रकाश, नई दिल्ली एक्सप्रेस, नई दिल्ली : विजया बुक्स, 2019, पृष्ठ 82
7. विवेक, ज्ञानप्रकाश, तमाशा, (कहानी संग्रह शिकारगाह), नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ, 2003, पृष्ठ 40
8. ज्ञानप्रकाश, विवेक, बहेलिये, (कहानी संग्रह पिताजी चुप रहते हैं) पंचकूला, आधार प्रकाशन, 1991, पृष्ठ 101
9. विवेक, ज्ञान प्रकाश, गली नंबर तेरह, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 1998, पृष्ठ 33
10. विवेक, ज्ञान प्रकाश, जलजला, (कहानी संग्रह जो सब चला गया), दिल्ली : दीक्षा प्रशासन, 1986, पृष्ठ 66
11. विवेक, ज्ञान प्रकाश, बैकबेंचर, (कहानी संग्रह कल खंड), नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन 2015, पृष्ठ 64
12. विवेक, ज्ञान प्रकाश, गली नंबर तेरह, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 1998, पृष्ठ 22
13. विवेक, ज्ञानप्रकाश, कमीज, (कहानी संग्रह जोसफ चला गया), दिल्ली दीक्षा प्रशासन, 1986, पृष्ठ 78
14. विवेक, ज्ञान प्रकाश, किरचें (कहानी संग्रह पिताजी चुप रहते हैं), पंचकूला : आधार प्रकाशन, 1991, पृष्ठ 23

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 128–131

महाभोज में चित्रित विषयों की प्रासंगिकता आज के संदर्भ में

जाह्नवी राज, शोध छात्रा,
डॉ. दिवाकर पांडेय, शोध निर्देशक
वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा।

"महाभोज" में प्रस्तुत मुद्दे आज के सामाजिक–राजनीतिक वातावरण में भी उतने ही महत्त्वपूर्ण और जीवंत दिखाई देते हैं। उपन्यास में राजनीति का विकृत रूप, भ्रष्टाचार, मीडिया की पक्षपाती भूमिका, दलित समाज का शोषण, दलबदल, अवसरवाद, नौकरशाही की उदासीनता तथा जातिगत समीकरण जैसे जिन विषयों को उभारा गया है, वे आज भी हमारे समाज की प्रमुख चुनौतियाँ बने हुए हैं, "सत्ता का दुरुपयोग, वोटबैंक की राजनीति और आम जनता की पीड़ाएँ अब भी वैसी ही हैं जैसी उपन्यास में दिखाई गई हैं। 'महाभोज' केवल एक साहित्यिक कृति नहीं अपितु आज की वास्तविकताओं का दर्पण भी है, जो यह सिद्ध करता है कि समय बदलने के बावजूद समस्याओं का स्वरूप और उनकी तीव्रता लगभग वैसी ही बनी हुई है।"

लेखिका मन्नू भंडारी ने इस उपन्यास के माध्यम से राजनीति और अपराध के बढ़ते गठजोड़ को दिखाया है और यह भी दर्शाया है, "कैसे राजनीति आम जनता के शोषण का माध्यम बन गई है। राजनीतिक विकृतियाँ समाज के लिए कोई नई बात नहीं हैं। प्राचीन काल से ही जनता सत्ता के खेल और चालबाजियों को समझती भी रही है और उनसे परेशान भी होती आई है। समय के साथ केवल शासन प्रणाली बदली है, जहाँ पहले राजतंत्र था, वहीं अब लोकतंत्र की स्थापना हुई है परन्तु सत्ता पर काबिज लोगों की मानसिकता में खास अंतर नहीं आया।" आज भी कई नेताओं का जनता के वास्तविक सुख–दुख से कोई सरोकार नहीं दिखता। जैसे पुराने समय में वंशवादी शासन चलता था, वैसे ही आज भी अनेक क्षेत्रों में वंशवाद की राजनीति खुले रूप में मौजूद है। अब जबकि प्रतिनिधि चुनने का अधिकार पूरी तरह से जनता के हाथ में है तो स्वाभाविक है, "यदि लोग एकजुट होकर अपने अधिकारों और कल्याण पर ध्यान दें तो यह राजनेताओं के लिए चुनौती बन सकता है।"

यही कारण है कि सत्ता में बैठे अनेक लोग यह सुनिश्चित करने की कोशिश करते हैं कि जनता संगठित न हो पाए। वे अक्सर ऐसे हालात उत्पन्न करते हैं कि लोग अपने हितों से भटक जाएँ, आपस में बँटे रहें और वोटबैंक के रूप में उन्हें आसानी से नियंत्रित किया जा सके। इस प्रकार जनता को विभाजित रखना उनकी राजनीतिक सुरक्षा का प्रमुख साधन बन चुका है। अब इसके लिए जातियों की समानता, एक धर्म की स्थापना आदि अनेक प्रकार के जुमले जनता को दिए जाते हैं ताकि जनता आपस में उलझकर लड़ती–मरती रहे और

राजनेताओं की रोटी सुरक्षित रहे, "जनता के बीच घटित होने वाली अमानवीय घटनाएं भी नेताओं के लिए चुनावी मुद्दे से अधिक कुछ नहीं हैं। सत्ता पक्ष उन्हें दबाने की कोशिश करता है जबकि विपक्ष उन्हें सरकार गिराने के हथियार के रूप में इस्तेमाल करता है। दोनों में मानवीय संवेदना नगण्य है। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।" लेखिका राजनीति की इन विकृतियों को कई रूपों में व्यक्त करती है :

- राजनीतिक भ्रष्टाचार।
- अवसरवादी राजनीति।
- दल–बदल की समस्या।
- जातिगत प्रभाव।
- मीडिया का दोहरा स्वरूप।
- नौकरशाही / प्रशासन में भ्रष्टाचार।
- दलितों का शोषण व जागरूकता।
- मध्यम वर्ग की निष्क्रियता।

राजनीतिक भ्रष्टाचार वह अवस्था है जिसमें सत्ता में बैठे लोग व्यक्तिगत लाभ के लिए अनैतिक और असत्यनिष्ठ कार्यों का सहारा लेते हैं। "यह भ्रष्टाचार सत्ता तक सीमित नहीं रहता बल्कि केंद्र से शुरू होकर विभिन्न संस्थाओं, विभागों और समाज के अन्य क्षेत्रों तक अपनी जड़ें फैलाता है। सत्ता का दुरुपयोग, पद का गलत इस्तेमाल, रिश्वतखोरी, भाई–भतीजावाद और अनुचित निर्णय, ये सभी राजनीतिक भ्रष्टाचार के प्रमुख रूप माने जाते हैं। इसका प्रभाव व्यापक होता है, क्योंकि शासन की उच्च स्तर की गिरावट धीरे–धीरे पूरे प्रशासनिक ढांचे को कमजोर कर देती है और अंततः आम जनता की प्रगति और सुविधाओं पर नकारात्मक असर डालती है।" इसके अंतर्गत आने वाले सभी निजी / सरकारी संस्थान इस भ्रष्टाचार का शिकार होते हैं। इसके कई कारण हैं,। उदाहरण स्वरूप :

पारदर्शिता की कमी :

सरकारी काम में पारदर्शिता की कमी इसकी व्यवस्था को कमजोर करती है। साथ ही कर्मचारियों को अपने पद का दुरुपयोग करने का अवसर भी मिलता है। "इसका खामियाजा आम जनता को भुगतना पड़ता है। कर्मचारियों की अपने काम के प्रति लापरवाही भी बढ़ती है क्योंकि इससे बड़े से बड़े अधिकारी भी अछूते नहीं हैं।" इसलिए वे भी निचले स्तर के कर्मचारियों और उनके अनुचित काम पर रोक नहीं लगा पाते। नतीजतन आम जनता इस व्यवस्था की आदी हो गई है अब उन्हें शायद ही कोई शिकायत हो। अगर होती भी है तो वह सिर्फ दस्तावेजों तक ही सीमित रहती है। बिशु की मौत पर सरोहा के लोगों का गैरजिम्मेदाराना व्यवहार प्रशासन की ऐसी ही कार्रवाई की प्रतिक्रिया है।

राजनीतिक हस्तक्षेप :

मुख्यतः वे काम सुचारू रूप से चलते हैं जो चुनावी मुद्दों से जुड़े होते हैं बाकी सभी काम उसी धीमी गति से दस्तावेजों के रूप में एक विभाग से दूसरे विभाग में घूमते रहते हैं। इसके कारण काम में रिश्वतखोरी, बेईमानी, अनियमितताएँ बढ़ती रहती हैं। साथ ही उच्च पदों पर अयोग्य लोगों की मौजूदगी भी इसका परिणाम है। नेता को जानने वाले लोग अपने आप ही सभी पदों के लिए योग्य हो जाते हैं। योग्य लोग बेरोजगार रह जाते हैं।

इस तरह धीरे–धीरे हर जगह राजनेताओं का दबदबा बढ़ता जाता है। इस बीच ईमानदार कर्मचारी भी लाचार हो जाते हैं। वे चाहकर भी अनुचित कामों के खिलाफ कुछ नहीं कह पाते वह चाहे तो भी उसे ऐसी जगह स्थानांतरित कर दिया जाएगा जो उसके हित में नहीं होगा या उन कार्यों का दोष उस पर डाल दिया जाएगा।" कुछ ऐसा ही 'महाभोज' के पात्र एसपी सक्सेना के साथ होता है। दा साहब और डीआईजी सिंहा के बीच हुए समझौते का खामियाजा ईमानदार ऑफिसर सक्सेना को तबादले के रूप में भुगतना पड़ता है। डीआईजी कुछ घुस की रकम अथवा पदोन्नति के लालच में आकर दा साहब के सभी अनुचित कार्यों की प प्रमाणिकता को दस्तावेज सहित सिरे से समाप्त कर देता है, जिसे लेखिका ने इस तरफ प्रस्तुत किया है जैसे यह उच्च पदस्थ लोगों के लिए रोज की बात हो। हत्या, बेईमानी, हिंसक अपराध जैसी चीजें उनके लिए कोई महत्व नहीं रखतीं।" यदि रखती भी हैं तो चुनावी जुमले के रूप में इस्तेमाल की जाती हैं।

मीडिया का दोहरा स्वरूप :

लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहलाने वाला मीडिया शिक्षा, खेल, मनोरंजन आदि क्षेत्रों से या समाज के विभिन्न पहलुओं से सूचनाएं एकत्रित कर आम जनता तक जानकारी पहुंचाने का काम करता है, लेकिन यह अपने अधिकार का दुरुपयोग कर लोगों को आधारहीन और मनगढ़ंत खबरें उपलब्ध करा रहा है या फिर कुछ खास लोगों द्वारा उपलब्ध कराई गई सूचनाओं से संचालित हो रहा है। इसके अलावा, वास्तविक समाचार प्रसारित न करके सच्चाई को छिपाना उनका मुख्य कार्य बन गया है ताकि जनता हमेशा गुमराह बनी रहे। "महाभोज में भी यही सिलसिला जारी है। सत्ताधारी पार्टी के पास अपना मीडिया है जो सत्ताधारी पार्टी के हिसाब से किए गए कामों को प्रसारित करता है और वास्तविकता को छुपाता है। विपक्ष के पास भी अपना मीडिया है जो उसके हिसाब से खबरें प्रसारित करता है। मीडिया संस्थान का नाम तो श्मशालश है लेकिन वह इसके ठीक विपरीत काम करता है अपनी झूठी मशाल की रोशनी से जनता को गुमराह करता है। नरोत्तम जैसे ईमानदार मीडियाकर्मी भी ऐसी व्यवस्था में खुद को असहाय और विवश पाते हैं। तमाम सबूतों के बावजूद वह समाज के सामने सच पेश नहीं कर पाता, यही उसकी सबसे बड़ी विवशता है।"

इसमें संदेह नहीं कि आज भी ऐसी गतिविधियों के चलते मीडिया का स्तर लगातार गिरावट की ओर बढ़ रहा है। राजनीति जगत में व्याप्त भ्रष्टाचार से सभी परिचित हैं परंतु अधिकांश लोग इस पर खुलकर चर्चा करने से बचते हैं। लेखिका ने न केवल इसे अपने लेखन का केंद्र बनाया है बल्कि अत्यंत साहस और स्पष्टता के साथ राजनीति के विकृत चेहरे को एक–एक परत खोलकर सामने रखा है, जो वास्तव में प्रशंसनीय है। "'महाभोज' में हरिजन समाज के शोषण, मीडिया की गिरती विश्वसनीयता, दलबदल की समस्या, अवसरवादी राजनीति, नौकरशाही की लापरवाही और संदिग्ध भूमिका, मध्यम वर्ग की निष्क्रियता तथा जातिगत दबाव जैसे मुद्दों का प्रभावी चित्रण मिलता है।" यद्यपि यह उपन्यास दशकों पूर्व लिखा गया था फिर भी इसकी प्रासंगिकता आज भी उतनी ही तीव्र महसूस होती है।

संक्षेप में, राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय लोग अब भी इसके पात्रों और परिस्थितियों से स्वयं को जुड़ा हुआ पाते हैं। आज भी प्रजा उसी तरह पीड़ित है केवल राजनेता ही नहीं, बल्कि समाज के वे सभी वर्ग, जिनके चरित्र इस उपन्यास में उकेरे गए हैं। आज की वास्तविकता में भी समान स्थितियों से गुजर रहे हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि राजनीति, मीडिया और समाज की आपसी जटिलताओं में भ्रष्टाचार

एक गहरी जड़ें जमा चुकी समस्या के रूप में सामने आता है। लेखिका द्वारा प्रस्तुत महाभोज न केवल राजनीतिक तंत्र की विकृतियों को उजागर करता है अपितु यह भी दर्शाता है कि सत्ता के खेल में आम जनता कैसे निरंतर शोषित होती रहती है। उपन्यास के चित्रित पात्र, परिस्थितियाँ और संघर्ष आज के सामाजिक–राजनीतिक परिदृश्य से पूरी तरह मेल खाते हैं, जिससे यह रचना आज भी उतनी ही प्रासंगिक और प्रभावशाली प्रतीत होती है। इस प्रकार, ष्महाभोजष् एक सशक्त और कालजयी राजनीतिक उपन्यास है जो भारतीय राजनीति की गहराई से पड़ताल करता है। इसकी प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है क्योंकि उपन्यास में दर्शाई गई विसंगतियाँ और समस्याएँ आज भी भारतीय समाज और राजनीति में मौजूद हैं। अंततः, जब तक जनता जागरूक, संगठित और दृढ़ नहीं होगी तब तक राजनीतिक स्वार्थ, मीडिया की गिरावट और सामाजिक असमानताएँ अपनी जगह बनी रहेंगी। साहित्य हमें इन सच्चाइयों से रूबरू कराता है और परिवर्तन की दिशा में सोचने के लिए प्रेरित करता है।

संदर्भ सूची :

1. मन्नू भण्डारी, महाभोज, राधाकृष्णन प्रकाशन, दिल्ली।
2. मन्नू भण्डारी, एक कहानी यह भी, राधाकृष्णन प्रकाशन, दिल्ली।
3. निर्मला जैन, कथा–समय में तीन हमसफर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली–2015
4. जे.पी. सिंह, समाजशास्त्र की अवधारणाएँ एवं सिद्धांत, पी.एच.आई. प्रा. लि, 2013
5. डॉ० पारूकांत देसाई, आधुनिक लेखिकाओं के नगरीय परिवेश के उपन्यास, चिन्तन प्रकाशन, कानपुर, 1994
6. कृष्णकुमार बिस्सा, हिन्दी उपन्यासों में राजनैतिक चेतना, दिनमान, दिल्ली, 1984
7. महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में वैचारिकता, डॉ0 शशि जैकब।
8. महाभोज, मन्नू भण्डारी का उपन्यास साहित्य।

मेल आईडी – jahanaviraj393@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 132–139

ધર્મ

Dr. Hemant R. Patel
Assistant Professor, Shree Somnath Sanskrit University, Veraval.

ભારતીય સંસ્કૃતિનો મૂળ મંત્ર ધર્મ છે. ભારતીય સંસ્કૃતિના ૪ પુરુષાર્થોમા ધર્મનું સ્થાન પ્રથમ છે.ધર્મ શુ છે ? ધર્મની પરિભાષા શુ છે ? ધર્મ વિશે અનેક ગ્રંથોમા જુદા જુદા મત મંતાતરો છે.ધર્મને અંગ્રેજીમા [RELIGION] અને ઉર્દુમા મજહબ કહેવામા આવે છે.પરંતુ એ આટલુ જ સાચુ છે જેટલુ દર્શનને ફિલોસોફી [philosophy] કહીએ. દર્શનનો અર્થ માત્ર જોવુ જ નથી પરંતુ વિશેષ છે. એ જ રીતે ધર્મને RELIGION કે મજહબ કહેવો આપણી મજબુરી છે.'મજહબ'નો અર્થ સંપ્રદાય થાય છે.આ જ રીતે [RELIGION] નો સમાનાર્થી અર્થ વિશ્વાસ,આસ્થા કે મત થઇ શકે છે પરંતુ ધર્મ થઇ શક્તો નથી.જો કે મતનો અર્થ આપણો કોઇ વિષય પર વિશિષ્ટ વિચાર થાય છે.

ધર્મનો શાબ્દીક અર્થ – ધર્મ એક સંસ્કૃત શબ્દ છે. ધર્મનો અર્થ વ્યાપક છે.**ध+र्+म = धर्म** । અહિ **ध** વર્ણ દેવનાગરી વર્ણમાળાનો ૧૯મો વર્ણ અને તવર્ગનો ૪થો વ્યજંન છે.ભાષાવિજ્ઞાનની દ્રષ્ટીએ આ દન્ત્ય, ઘોષ, સ્પર્શ, અને

મહાપ્રાણ ધ્વનિ છે.સંસ્કૃત ધાતુ **धा+ड** વિશેષણ જેનો અર્થ ધારણ કરનાર થાય છે.જે ધારણ કરવાને યોગ્ય છે. તે જ ધર્મ છે.પૃથ્વી સમસ્ત પ્રાણીઓને ધારણ કરે છે. જે રીતે આપણે કોઇ નિયમ કે વ્રત ને ધારણ કરીએ. અહિ ધર્મનો અર્થ જેમણે સર્વને ધારણ કરેલ છે તે,અર્થાત **धारयति इति धर्मः**|

ધર્મ દ્વારા મનુષ્ય પોતાના જીવનને શ્રેષ્ઠમાંથી શ્રેષ્ઠતમ બનાવે છે.ધર્મ એક એવુ તત્વ છે જે મનુષ્ય અને પશુઓનો ભેદ કરાવે છે. ધર્મ વિશે અથર્વવેદમા કહેવામા આવ્યુ છે કે **नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्। अथर्ववेदः**12.1.450

અર્થાત પૃથ્વી જુદા જુદા ધર્મવાળાને એક પરિવારની જેમ રાખે છે. અહી પૃથ્વીનો ધર્મ દર્શાવ્યો છે.પૃથ્વી પર અનેક ધર્મવાળા લોકો રહે છે.હિંદુ મુસલમાન શીખ,પારસી વગેરે. આ જુદા જુદા ધર્મવાળા લોકોને પૃથ્વી એક પરિવારની જેમ રાખે છે.તેમની સાથે કોઇ પણ પ્રકારનો ભેદભાવ કરતી નથી.અહિ દરેક મનુષ્યે બોધ લઇ પોતાના ધર્મનુ પાલન કરવુ જોઇએ.સમાજમા એકતા લાવવાનુ કાર્ય ધર્મ જ કરે છે.પ્રાચીન સભ્યતા અને સંસ્કૃતિમા વિધયમાન ધર્મની સામાજિકતાનુ જ એ પરિણામ હતુ,જેને કારણે સમાજનું જુદા જુદા તત્વોમા વિઘટન થઇ શક્યુ નહિ.એક્તાના સુત્રમાં સમાજના આ સર્વો તત્વોને એક સાથે ગ્રથિત કરવાને કારણે ધર્મને સંબંધ સ્થાપિત કરનાર તત્વ તરીકે ઓળખવામા આવે છે.

શ્રીમદભાગવતમહાપુરાણમાં ધર્મના લક્ષણો આપવામા આવ્યા છે.

सत्यं दया तपः शौच तितिक्षेक्षा शमो दमः ।

अहिंसा ब्रह्मचर्य च त्यागः स्वाध्याय आर्जवम् ।।

सन्तोषः समद्रक सेवा ग्राम्येहोपरमः शनैः ।

नृणां विपर्ययेहाक्षा मोनमात्माविमर्शनम् ।।

अन्नाघादेः संविभागो भूतम्यश्च यथाहर्तः।

तेष्वात्मदेवताबुध्धिः सुतरानृषु पाण्डव ।।

श्रवणं कीर्तन चास्य स्मरणं महत्तां गतेः ।

सेवेज्यावनतिर्दास्यं सखमात्मसमर्पणम् ।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम् 7.11.8-12

અહિ ધર્મના લક્ષણો દર્શાવ્યા છે. સત્ય,દયા,,તપસ્યા, શૌચ,તિતિક્ષા યોગ્ય- અયોગ્યનું જ્ઞાન, મનનો સંયમ,અહિંસા,,બ્રહ્મચર્ય,ત્યાગ, સ્વાધ્યાય, સરળતા,સંતોષ, સમદર્શી મહાત્માઓની સેવા,સાંસારિક ભોગોમાંથી નિવૃતિ, મનુષ્યનાં અભિમાનપૂર્ણ પ્રયત્નનું ફળ વિપરીત હોય છે એવો વિચાર મૌન આત્મચિંતન,પ્રાણીઓમા અન્ન વગેરેનુ યોગ્ય વિભાજન, મનુષ્યમા મુખ્યત્વે પોતાની આત્મા તથા ઇષ્ટદેવનો ભાવ,,શ્રીકૃ ષ્ણનાં નામ ગુણ- લીલા વગેરેનુ શ્રવણ કીર્તન, સ્મરણ તેમની સેવા,પૂજા તેમજ નમસ્કાર,તેમના પ્રતિ સાખ્ય-દાસ્ય તેમજ આત્મ સમર્પણ.આ ઉપરાત વર્ણધર્મ અંગે શ્રીમદ ભાગવદપુરાણમા ઉલ્લેખ છે કે

शौर्य विर्य धृतिस्तेजस्याग आत्मजयः क्षमा ।

ब्राह्मणतया प्रसादश्च रक्षा च क्षत्रलक्षणम् ।।

देवगृर्वच्यते भक्तिस्त्रिवर्गपरिपोषण् ।

आस्तिक्यमुघमो नित्यं नैपुणं वैश्यलक्षणम् ।।

शूद्रस्य संनतिः शौचं सेवा स्वामिन्यमायया ।

अमन्त्रयज्ञो ह्यस्तेयं सत्यं गोविप्रलक्षणम् ।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम् - 7.11.22,23,24

અહી વર્ણધર્મ અંગે કહેવામા આવ્યુ છે કે ક્ષત્રિયનો ધર્મ યુધ્ધમા ઉત્સાહ, વીરતા, ધૈર્ય, તેજસ્વિતા, ત્યાગ, ક્ષમા, બ્રાહ્મણો પ્રતિ ભક્તિ તેમજ પ્રજાનુ રક્ષણ કરવુ છે.વૈશ્યધર્મ વિશે જણાવ્યુ છે કે ખેતી કરવી પશુપાલન અને વેપાર કરવો, વૈશ્યવર્ણ સમાજની સમૃધ્ધિ અને ઉન્નતિ માટે સતત પ્રયત્નશીલ રહે છે.દેવતા, ગુરુ તથા ભગવાન પ્રત્યે ભક્તિ ધર્મ, અર્થ કામ આ ત્રણ પુરુષાર્થનુ રક્ષણ કરવુ, તેમજ આસ્તિક્તા, ઉધોગશીલતા, વ્યાવહારિક નિપુણતા એ વૈશ્યના લક્ષણો છે.શુદ્રવર્ણ પ્રાચીન ભારતમાં અન્ય વર્ણોની માફક મહત્વપૂર્ણ વર્ણ હતો. ઉચ્ચવર્ણની જેમ તેમની સાથે વિનમ્રતાનો વ્યવહાર, પવિત્રતા, સ્વામીની નિષ્કપટ સેવા,વૈદિક મંત્રોથી રહિત યજ્ઞ, ચોરી ન કરવી, સત્ય તથા ગાયનું રક્ષણ કરવુ એ શુદ્રવર્ણનો ધર્મ છે.

શ્રીમદભગવદગીતામા શ્રીકૃષ્ણ વર્ણધર્મ અંગે કહે છે કે

सदशं चेष्टते स्वस्याःप्रकृतेर्ज्ञानवानपि ।

प्रकृति यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ।। श्रीमद्भागवद्गीता 3.33

श्रेयान् स्वधर्मः विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात् ।

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ।। श्रीमद्भगवद्गीता 3.35

અહિ કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે મનુષ્યમાં બ્રાહ્મણત્વ, ક્ષત્રિયત્વ,વૈશ્યત્વ, શૂદ્રત્વ જન્મજાત ગુણ નથી.પરંતુ પકૃતિ દ્વારા પ્રદત ગુણ છે.તેથી દરેક મનુષ્યનુ કર્તવ્ય છે કે સૌ પ્રથમ પોતાની જાતિ વિશિષ્ટનો સાક્ષાત્કાર કરે તેમજ તેમને અનુકૂળ કાર્ય કરે.કારણ કે મનને અનુકુળ કાર્યને જીવ ધર્મ નિષ્ઠાની સાથે પરમ પદ પ્રાપ્ત કરી શકે છે.તેથી સર્વ મનુષ્યે પોતાના વર્ણને ઓળખવો જોઇએ. તેમજ સ્વધર્મનુ પાલન કરી તેમને શ્રેષ્ઠ માનવો જોઇએ. કારણ કે અન્યનો ધર્મ સારી રીતે આચરણ કરીએ તો પણ તો પણ જ શ્રેષ્ઠ માનવો જોઇએ,કારણ કે અન્યનો ધર્મ સારી રીતે આચરણ કરીએ તોપણ તે ગુણરહિત હોય છે.તેથી સ્વધર્મ જ શ્રેષ્ઠ છે.પોતાના ધર્મમાં મૃત્યુ પણ મૃત્યુ પણ કલ્યાણકારી હોય છે,જ્યારે અન્યનો ધર્મ ભય આપનાર હોય છે. અહિ કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે બ્રાહ્મણોનો ધર્મ અહિંસા વગેરે સદગુણોને પ્રાધાન્ય આપવુ,આ જ રીતે શૂદ્રની અપેક્ષા એ વૈશ્ય તેમજ ક્ષત્રિયનું કર્મ ગુણયુક્ત છે.તેથી એક જ ધર્મનુ પાલન કરનારે સ્વધર્મમા નિષ્ઠા રાખવી જોઇએ.પરંતુ તેનાથી સ્વયંને વિશિષ્ટ અને હીન સમજવા ન જોઇએ.માત્ર સ્વધર્મમા જ રત રેહવુ જોઇએ.

ધર્મની વિશેષતા દર્શાવતા મહાકવિ ભાસ પંચરાત્રમા કહે છે,કે **अच्छलो धर्मः । पंचरात्रम् अंक-1**

અર્થાત ધર્મ છલ કપટ રહિત હોય છે.આ ઉપરાંત પ્રતિજ્ઞાયૌગન્ધરાયણ નાટકમા કહે છે કે **अपश्चातापकरः खलु संज्चितधर्माणं मृत्यु ।**

प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् अंक-4

અર્થાત જેમણે ધર્મનો સંચય કર્યો છે,તેમનુ મૃત્યુ પશ્ચાતાપનુ કારણ બની શકતુ નથી. અહિ કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે ધર્મ મનુષ્યને નિયમમા રહેતા શીખવે છે.જેનાથી મનુષ્ય શ્રેષ્ઠમાંથી શ્રેષ્ઠતમ બને છે.સમાજમા એકતા સ્થાપિત કરવાનુ કાર્ય ધર્મ જ કરે છે.મનુષ્યજીવનના જે ચાર પુરુષાર્થો છે. તેમા મહત્વપૂર્ણ સ્થાન ધર્મનુ છે.આમ અહી કહી શકાય કે ધર્મ મનુષ્યને માનવમાથી મહામાનવ બનાવે છે.મનુસ્મૃતિમાં ધર્મ અંગે કથન છે કે

आचारःपरमो धर्मः। मनुस्मृतिः 1.108

ધર્મ મનુષ્યનો આંતરિક સદાચાર છે.અહી આંતરિક સદાચારનો અર્થ એવો વ્યવહાર ક જેનાથી સ્વયંનુ ઉત્થાન તો થાય જ છે. સાથે સાથે સમાજનો પણ અભ્યુત્થાન થાય છે.અહી કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે મનુષ્ય જ સર્વ ધર્મનો આશ્રય છે.તેના પર જ ધર્મ અધર્મનો આશ્રય રહેલો છે.જયારે મનુષ્ય ધર્મનું આચરણ કરે છે,ત્યારે તેમનુ વ્યક્તિત્વ તેમજ સમાજ સ્વસ્થ સુંદર તેમજ બંધનોથી મુક્ત પ્રકૃતિની સાથે તાદાત્મય સ્થાપિત કરીને પુરુષને નિર્વિકાર સ્વરુપનું દર્શન કરાવી ધન્ય થઇ જાય છે,તેમજ જ્યારે મનુષ્ય

અધર્મના રસ્તે અગ્રસર બને છે,ત્યારે માત્ર તે મનુષ્ય જ અધોગતિ પામતો નથી,પરંતુ સમગ્ર સમાજનુ પતન થાય છે. અધર્મ પર ચાલનાર મનુષ્યનું ઉત્થાન ત્યા સુધી શક્ય નથી જ્યા સુધી તે સદાચારનો માર્ગ અપનાવતો નથી.

વર્તમાન સમયમાં ધર્મ સમાજમાથી લૃપ્ત થઇ રહ્યો છે.જેને કારણે સમાજમા એકતાનો અભાવ જોવા મળે છે.વર્તમાન સમયમા ધર્મનું સ્થાન જુદા જુદા સંપ્રદાયો એ લીધુ જોવા મળે છે.તેઓ પણ સમાજમા એક્તા સ્થાપિત કરવાનુ જ કાર્ય કરે છે. જે સમાજના હિત માટે મહત્વપૂર્ણ કાર્ય છે. સમાજનો જો દરેક વ્યક્તિ પોતાના ધર્મને સારી રીતે જાણે અને તે મુજબ આચરણ કરે તો સમાજમા ધર્મ જળવાયેલો રહેશે અને સમાજમાં એકતા સ્થાપિત થશે. જેની સાંપ્રત સમયમા ખૂબ જ જરૂર છે.

સંદર્ભગ્રંથો :

૧. **अथर्ववेदसंहिता** – પંડિત શ્રીપાદ દામોદર સાતવળેકર

સ્વાધ્યાય મંડળ પારડી,જિલ્લો વલસાડ

આવૃતિ- ૬

૨. **श्रीमद्भागवतमहापुराणम्**

गीताप्रेस गोरखपुर, पंचम संस्करण, वि.संवत - 2033

3. **श्रीमद्भगवदगीता** – જયદલાલ ગોયન્દ્કો

ગીતાપ્રેસ ગોરખપુર,સંવત – ૨૦૭૧,૨૧મુ સંસ્કરણ

૪. **मनुस्मृतिः** – હરેંદ્ર હ. શુક્લ

શ્રી હરિહર પુસ્તકાલય સુરત

આવૃતિ- ૧૯૯૩

૫. **पंचरात्रम्** - **भासः**

સંપાદક – પ્રા.સુરેશ જે. દવે

સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર અમદાવાદ

આવૃતિ – ૨૦૦૧-૦૨

૬. **प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्** – **भासः**

સંપાદ્ક – પ્રા.સુરેશ જે. દવે

સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર અમદાવાદ

આવૃતિ- ૧૯૯૮

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 140–151

Performance of lentil (*Lens culinaris*) under diverse organic and inorganic fertilizer sources in sandy loam soil

Manish Kumar
Assistant Professor at Hariom Saraswati (P.G) College, Dhanauri, Haridwar, Uttarakhand, India.
Manoj Kumar Shukla
Associate Director, LIL FARMS (NGO), Dehradun, Uttarakhand, India.

Abstract :

During the winter crop season of 2024-25 at the Crop Research Farm, Department of Agronomy, Hariom Saraswati Post Graduate College Dhanuri, Haridwar, Uttarakhand, India, the growth and yield of lentil were investigated in a field trial using various organic and inorganic nutrient sources in sandy loam soil in Haridwar, Uttarakhand. The experiment used a Randomised Block Design with three replications per treatment, and the lentil seeds were sown at a rate of 20 kg ha^{-1}. Data was collected before and after harvest and analysed statistically. During the experiment's year, the best organic and inorganic treatments were M_2 (75% RDF ha^{-1}) and O_3 (5t ha^{-1} Vermicompost), which improved plant height, dry matter accumulation, and leaf area index. M_2 (75% RDF ha^{-1}) demonstrated the highest yield features and yield in inorganic nutrient management. Among organics, O_3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) performed the best in terms of plant height, dry matter accumulation, leaf area index, pods $plant^{-1}$ and seed pod^{-1}, test weight, grain yield, stover yield, and harvest index during the experiment year. Nonetheless, O_2 (5t ha^{-1} poultry manure) was shown to be comparable to O_3 (5t ha^{-1} vermicompost) in the research year.

Keywords : *Lentil, organic, inorganic, poultry manure, vermicompost, Lens culinaris*

Introduction :

Agricultural production is a difficult business connected with increasing crop yields and higher quality products, which result in higher market value according to consumer preferences. High-quality products, particularly organic options, can have a considerable impact on the manufacturing process. Lentil (*Lens culineris* L.) is a major grain legume crop in India, with 2n = 14 chromosomes. During the Rabi season, lentil

crops are frequently grown in India. As a leguminous crop, it takes nitrogen from the air to meet some of its nitrogen requirements, making it an important component of crop rotation in many parts of the country. Lentils are farmed on around 1.38 million hectares of land in the country, with a total production of 0.95 million tonnes and an average yield of 688 kg/hectare. The frequent usage of soil nutrients has resulted in the development of numerous nutritional deficits. This happens because soil nutrients deplete faster with increasing output levels, resulting in widespread nitrogen deficit in Indian soils. Later, phosphorus deficiency arose, affecting around 65 to 70 percent of Indian soil. The emphasis on NPK application has resulted in secondary and micronutrient deficit in soil and crops throughout the world.

The widespread use of chemical fertilisers and other chemicals has generated environmental problems and increased manufacturing costs. Concerns about the environment have led to an emphasis on sustainable agriculture practices that are both environmentally benign and cost effective. Thus, maintaining a balance in nutrient management is critical for maximising output in lentil crops throughout India (Shanker *et al.* 2002). Evidence suggests that using only chemical fertiliser does not increase production in a continuous cropping system. However, using farmyard manure, vermicompost, and poultry manure can improve crop output, soil quality, and physical condition (Edwards and Arancon, 2004). The primary purpose is to identify the most basic substrate formulations for successful lentil cultivation, and this study was carried out to determine the optimal combination of organic and inorganic nutrient sources to increase lentil crop output.

Materials and procedures :

A study named "Impact of organic and inorganic nutrient sources combined with bio fertilisers on the growth and yield of lentil (*Lens culinaris*)" was undertaken from 2024 to 2025 at Crop Research Farm, Department of Agronomy, Hariom Saraswati Post Graduate College Dhanuri, Haridwar, Uttarakhand, India. The research farm is situated near Hraidwar. It is located in the lower Himalayan region in latitude 30.010 North and longitude 31.200 East, with an elevation of 450 meters above mean sea level. The study was conducted using a Randomised Block Design with two variables. One factor consists of inorganic nutrient sources, and another comprises of organic nutrient sources. Nine treatment combinations, each reproduced three times, are created by combining three organic resources. The treatments were distributed at random within each replication, with twenty-seven plots assigned to various treatments. In addition, one plot was set aside for the absolute control treatment, bringing the total number of plots in the experiment to thirty. Growth attributes were plant height, dry matter accumulation, number of branches plant^{-1}, number of nodules plant^{-1}, crop growth rate, and relative growth rate, while yield attributes comprised number of pods plant^{-1}, number of seeds pod^{-1}, and test weight. The crop's overall production was measured in terms of grain yield and stover yield.

To arrive at a credible conclusion, the data gathered during the investigation was organised and analysed statistically. The data was analysed using the standard approach for "Analysis of Variance" (ANOVA) described by Gomez and Gomez (1984). An 'F' test (variance ratio) was used to determine the significance of treatments. The standard deviation of the mean was determined in each case. The Critical Difference (CD) was employed to examine the variation in treatment means at a 5% level of significance, and the 'F' test revealed significant differences among means.

Results and Discussion :

Characteristics of growth :

Plant height, dry matter accumulation, the number of branches and nodules per plant, crop growth rate, and relative growth rate all increased steadily as the crop matured. An study of the data revealed that organic and inorganic nutrient sources had a significant impact on plant height, dry matter accumulation, number of branches plant-1, number of nodules plant-1, crop growth rate, and relative growth rate, with no changes in their combined impacts. A comparison of the mean data in tables 4.1 and 4.2 revealed significant differences in plant height, dry matter accumulation, number of branches plant^{-1}, number of nodules plant^{-1}, crop growth rate, and relative growth rate at the pre-harvest stage among various inorganic nutrient sources during the experiment. The tallest plant height was measured using M_2 and 75% RDF per ha^{-1}. M_1 had the lowest growth attribute performance, with 50% RDF ha^{-1}. This could be linked to the fact that lentil crops use less fertiliser, especially nitrogen-based fertilisers. Streeter and Wong (1988) had comparable results. HIowever, overuse of nitrogen fertilisers and high residual levels impede nodule growth and N_2 fixation. Xuan *et al.* (2017) reported similar findings in beans. O_3 (Vermicompost 5t/ha) in organic treatment outperformed all other treatments during the experiment year in terms of plant height, dry matter accumulation, branches plant^{-1}, nodules plant^{-1}, crop growth rate, and relative growth rate. O_2 (5t/ha poultry manure) was equivalent to O3 (5t/ha vermicompost) in terms of plant height, dry matter accumulation, number of branches plant-1, nodules plant-1, crop growth rate, and relative growth rate. T0 (absolute control) had the lowest values for the above parameters. O3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) had higher values for these parameters due to improved nutrient uptake and slow decomposition of organic manures such as vermicompost, which made nutrients available to the plant throughout its growth, resulting in maximal growth potential. The results were congruent with those reported by Mookherjee and Malik (2009), Keivanrad and Zandi (2012), Rakesh Kumar (2015), and Druw *et al.* (2014). An examination of the average data reveals that the combined impact of organic and inorganic nutrient sources remained constant on lentil plant height, dry matter accumulation, number of branches plant^{-1} and nodules plant^{-1}, crop growth rate, and

relative growth rates throughout the experiment year. Rakesh Kumar (2015) also reported a similar discovery.

Table 4.1 : Impact of natural and artificial nutrient sources on the growth characteristics of lentil

Treatment	Plant height (cm)		Dry weight (g)		Number of branches Plant^{-1}(No.)	
	60 DAS	90 DAS	60 DAS	90 DAS	60 DAS	90 DAS
Absolute control	12.36	25.55	0.86	6.22	5.83	6.12
Inorganic source						
F1 50% RDF ha^{-1}	13.37	28.33	1.40	8.63	6.17	6.86
F2 75% RDF ha^{-1}	14.52	30.31	1.43	8.83	7.00	7.50
F3 100% RDF ha^{-1}	13.63	29.77	1.54	9.54	6.72	7.02
Sem ±	0.67	1.58	0.05	0.29	0.39	0.32
C.D. at 5%	1.36	3.24	0.09	0.59	0.80	0.65
Organic Sources						
O1 FYM 10t ha^{-1}	18.39	38.22	1.40	8.66	6.44	6.97
O2 Poultry Manure5 t ha^{-1}	18.07	39.88	1.44	8.90	6.72	6.90
O3 Vermicompost5 t ha^{-1}	19.97	43.22	1.53	9.44	6.72	7.50
Sem ±	0.58	1.37	0.04	0.27	0.37	0.30
C.D. at 5%	1.18	2.80	0.09	0.56	0.76	0.62

Table 4.2 : Impact of natural and artificial nutrient sources on the growth and growth analytic characters of lentil

Treatment	Number of nodules plant^{-1}(No.)		Crop Growth Rate (g m^{-2}day^{-1})		Relative Growth Rate (g g^{-1}day^{-1})	
	60 DAS	90 DAS	60 DAS	90 DAS	60 DAS	90 DAS
Absolute control	16.53	15.26	0.76	16.85	-0.0254	0.0583
Treatment						
F1 50% RDF ha^{-1}	19.00	19.44	1.06	19.29	-0.0332	0.0658
F2 75% RDF ha^{-1}	19.67	19.56	1.16	21.34	-0.0285	0.0693
F3 100% RDF ha^{-1}	19.11	19.00	1.07	19.74	-0.0332	0.0666

Sem ±	0.48	0.51	0.18	0.83	0.0061	0.0014
C.D. at 5%	0.98	1.03	0.37	1.70	0.0124	0.0029
Organic Sources						
O1 FYM 10t ha^{-1}	18.89	19.00	1.07	19.36	-0.0320	0.0659
O2 Poultry Manure5 t ha^{-1}	19.00	19.00	1.08	19.91	-0.0341	0.0668
O3 Vermicompost5 t ha^{-1}	19.89	20.00	1.14	21.10	-0.0287	0.0689
Sem ±	0.46	0.48	0.17	0.79	0.0058	0.0014
C.D. at 5%	0.93	0.98	0.35	1.62	0.0118	0.0028

Characteristics of production output :

The crop's yield characteristics were documented at the harvesting stage. A quick review of the data revealed that both organic and inorganic nutrition sources had a significant impact on the number of pods $plant^{-1}$, seeds per pod^{-1}, and test weight, with no changes for their combined impacts. A comparison of the average data in table 4.3 revealed significant differences in pod number, seed number, and test weight during the harvest stage across diverse inorganic fertiliser sources. The largest number of pods on each plant, seed pod^{-1}, and test weight were found at M_2 (75% RDF ha^{-1}). Nonetheless, M_1 (50% RDF ha^{-1}) demonstrated the lowest yield performance. M_1 (50% RDF ha^{-1}) produces limited yield characteristics. Pod initiation and seed laying are much lower in contrast to M_2 (75% RDF ha^{-1}), resulting in a reduction in these activities. This could be because a balanced diet promotes healthy growth and development in lentil plants. Thakur and Singh (1998), Singh *et al.* (2001), and Singh and Singh (2002) all found comparable results. Compared to all other treatments, O_3 (Vermicompost 5t/ha) exhibited a significant increase in pods $plant^{-1}$, seed pod^{-1}, and test weight throughout the course of the year. In contrast, O_2 (Poultry manure 5t ha^{-1}) produced results similar to O_3 (5t ha^{-1}). T_0 (absolute control) produced the fewest pods $plant^{-1}$, seed pod^{-1}, and test weight. An examination of the average data reveals that the interaction effect of diverse organic and inorganic nutrition sources remained constant in relation to the number of pods $plant^{-1}$, number of seeds pod^{-1}, and lentil test weight at harvest. Similar findings were reported by Mishra *et al.* (2017) and Prakash *et al.* 2012. Singh *et al.* (2015) propose that better nutrient availability, plant establishment, and growth qualities in O_3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) may contribute to this outcome. According to Singh *et al.* (2015), improved nutrient availability, plant establishment, and growth qualities in O_3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) may all contribute to this outcome. According to Singh et al. (2015), improved nutrient availability, plant establishment, and growth qualities in O_3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) may all contribute to this outcome.

Table 4.3 : shows how organic and inorganic nutrient sources impact the yield attributes and overall yield of lentils.

Treatment	No. of pod plant^{-1} (No.)	No. of seeds pod^{-1} (No.)	Test weight (g)	Grain yield (q ha^{-1})	Stover yield (q ha^{-1})	Harvest index
Absolute control	28.14	0.81	20.12	22.12	24.55	47.39
Inorganic source						
F1 50% RDF ha^{-1}	32.69	1.47	20.20	30.40	27.18	47.20
F2 75% RDF ha^{-1}	36.02	1.62	22.26	33.09	29.71	47.50
F3 100% RDF ha^{-1}	33.33	1.50	20.59	31.56	27.95	47.16
Sem ±	1.07	0.05	0.66	1.01	0.89	1.41
C.D. at 5%	2.19	0.10	1.35	2.05	1.82	-
Organic Sources						
O1 FYM 10t ha^{-1}	32.81	1.47	20.28	30.52	27.28	47.32
O2 Poultry Manure5 t ha^{-1}	32.86	1.51	20.77	31.27	27.94	47.20
O3 Vermicompost5 t ha^{-1}	33.60	1.60	22.01	33.27	29.62	47.34
Sem ±	1.02	0.05	0.63	0.95	0.85	1.34
C.D. at 5%	2.08	0.09	1.28	1.95	1.73	-

Index of yield and harvest :

Yield is a complex property that results from the interaction of the plant's intrinsic characteristics, how it interacts with its surroundings, and how it is managed. The ecological environment, genetic potential, and agronomic management approaches are critical for increasing crop yields. If these standards are extensively adhered to, agricultural methods will naturally influence crop outcomes. The methods used to supply nutrients are the most important agronomic techniques. However, in order to improve grain output, crop growth must be balanced during both the vegetative and reproductive periods. The increased proportion of grain weight to total dry matter produced is a metric of balanced growth that is used to evaluate the efficacy of agronomic interventions. The harvest index (HI) is used to describe this ratio.

Different sources of inorganic nutrients resulted in significant changes in grain and stover output. Treatment M_2 (75% RDF ha^{-1}) had considerably better grain yield, stover

yield, and harvest index than the other treatments. This finding is consistent with earlier research by Kumar, Singh, and Aziz (2011). Over-fertilization reduces the performance of lentil crops. Excessive nutrition can also reduce productivity by influencing crop performance, resulting in lower growth rates, delayed maturity, and, ultimately, decreased yield. According to Aziz *et al.* (2011), the most optimal nutrient management strategy for lentil crops in the Indian Himalayan region is to use 75% RDF.

Using O_3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) throughout the experiment year resulted in a significant improvement in lentil grain and stover yield. O_2 (Poultry manure 5t ha^{-1}) produced comparable results to O_3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) This finding was consistent with those of Mishra *et al.* (2017), Prakash *et al.* (2012), and Singh *et al.* (2015). The enhanced grain output from O_3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) could be due to improved nutrient utilisation. During the later stages of crop growth, increased nutrient availability causes maximal growth characteristics, resulting in higher plant growth and, ultimately, enhanced yield. This increase in straw output can be attributed to a considerable increase in plant height and dry matter production following 5t ha-1 of vermicompost application under O_3 conditions (Singh *et al.,* 2015). This finding corroborated the findings of Mishra *et al.* (2017). The harvest index for grain crops refers to the proportion of harvested grain to total shoot dry matter. This can indicate how efficient reproduction is. The index can also be used to calculate crop carbon balance by combining it with grain yield data to calculate total shoot dry matter and then defining crop residue as the difference between shoot and grain carbon. O_3 highest harvest index (Vermicompost 5t/ha) is most likely due to its highest grain production.

Conclusion :

According to the findings of the current study, utilizing M_2 (75% RDF ha^{-1}) mixed with O_3 (Vermicompost 5t ha^{-1}) was the most beneficial combination of organic and inorganic nutrients for growing lentils in the experimental year.

References :

1. **Ahamed, K.U., Nahar, K., Rahmatullah, M.N., Faruq, Gulam and Alamgir, M.D. Ali (2011).** Yield components and different lentil organic sources of nutrients as affected by row spacing. *American-Eurasian Journal of Agronomy,* **4**(1):01-05.
2. **Ahmed, I. U., Rahman, S., Begum, N. and Islam, M. S (2008).** Effect of phosphorus and zinc application on the growth, yield P, Zn and protein content of lentil *J. Ind. Soc. Soil Sci.*, 34:305-308.
3. **Anonymous, 2019.** http://agricoop.nic.in/sites/default/ files/Pulses.pdf)
4. **Arya, M. P. S and Kalara G.S (1988)** Effect of phosphorus doses on the growth, yield and quality of summer mung and soil nitrogen. *Indian. Journal Agriculture Research,* 23-30.
5. **Awomi, T. A., Singh, A. K., Kumar, M. and Bordoloi, L. J. (2012)** Effect of phosphorus, molybdenum

and cobalt nutrition on yield and quality of lentil in Acidic Soil of Northeast India. *Indian Journal of Hill Farming,* **25**(2):22-26.

6. **Bairwa, R.K., Nepalia, V., Balai, C.M. and Upadhyay, B. (2012)** Effect of phosphorus and sulphur on yield and economics of summer lentil. *Madras Agricultural Journal*. **99**(7/9):523- 525.
7. **Bashir, A.M. (1994)** Grain legumes, In: Crop production. National Book Foundation Islamabad, pp.306.
8. **Baza, M. (2019).** Response of lentil organic sources of nutrients to rates of blended NPS fertilizer in Kindo Koysha District, Southern Ethiopia. [Msc Thesis]. *Wolaita Sodo University.*
9. **Beg, M. A. and Singh, J.K. (2009)** Effect of biofertilizer and fertility levels on growth, yield and nutrient removal of lentil under Kashmir conditions. *Indian Journal of Agricultural Sciences,* **79** (5): 388-390.
10. **Begon, M., Harper, J. L. and Townsend, C. R., (1990).** Ecology: Individuals, Populations and Communities, 2nd ed. Blackwell Scientific Publications USA.
11. **Behera, N., and Elamathi, S. (2007)** Studies on the time of nitrogen, application of foliar spray of DAP, and growth regulators on yield attributes, yield and economics of lentil. *International Journal of Agricultural Science*, **3**(1): 168-170.
12. **Bhat, S.A., Thenua, O.V.S., Shivakumar, B.G. and Malik, J.K. (2005)** Performance of summer lentil as influenced by biofertilizers and phosphorus nutrition. *Haryana J. Agron*., **21**(2): 203-205.
13. **Bhattacharyya P.K. (2012)** Effect of dual inoculation with *rhizobium* and PSB on nodulation and yield of lentil *J. Mycopathol, Res*, **50**(1): 105-107.
14. **Bhattacharyya, J. and Pal, A. K (2001)** Effect of *Rhizobium* inoculation, phosphorus and molybdenum on growth of summer lentil *.J. inter academic,* **5**(4):450-457.
15. **Bhuiyan M.M.H., Rahman M.M., Afroze F., Sutradhar G.N.C., and Bhuiyan M.S.I. (2008)**Effect of phosphorus, molybdenum and *rhizobium* inoculation on growth and nodulation of lentil *Journal of Soil Nature.* **2**(2): 25-30.
16. **Chasti, M.H. and Tahir, A. (2008)** integrated phosphorous management in lentil under temperate condition of Kashmir. Indian Journal of Agriculture Science 78(5) 473-475.
17. **Chatterjee, A. and Bhattacharjee, P. (2002)** Influence of combined inoculation with *rhizobium* and Phosphobacteria on lentil in field. *J. Mycopathal. Res*. **40**(2):201-203.
18. **Choudhary, L.R., Singh, M.K. and Yadav R. I. (2013)** Growth and Yield of Different Organic sources of nutrients of Lentil in Custard Apple (*Annonasquamosa* L.) *Based Agri-horti System. Environment & Ecology* **3**(3):1515-1518.
19. **Dame, O., & Tasisa, T. (2019).** Responses of Soybean (Glycine max L.) Organic sources of nutrients to NPS at Bako, Western Ethiopia. *American Journal of Water Science and Engineering*, 5(4), 155–161.
20. **Dash and Pattanayak, S. K. (2007)** Effect of seed treatment with cobalt on nodulation, growth and yield of lentil crop. *J. Soils and Crops* **17**(1) 24-29.
21. **David, A. and Imtinaro (2013)** Performance of integrated nutrient management for enrichment of soil fertility status and yield of lentil. *Progressive Research* **8**(8):153 159.

22. **Delley, C.D., Kells, J.J and Rener, K.K. (2004)** Effect of glyphosate application timing and row spacing on weed growth in corn *(Zea mays)* and soybean (*Glycine max).Weed Technology***18**(1): 177-82.

23. **Dhakal, Y., Meena, R.S. and Kumar S. (2016)** Effect of INM on nodulation, yield, quality and available nutrient status in soil after harvest of lentil. *Legume Research*, **39**(4): 590-594.

24. **FAO (2019).**Food and Agriculture Organization of the United.

25. **Gajera, R. J., Khafi, H. R., Raj, A. D. and Yadav, V. (2017)** Growth and Production Potential of Lentil. Influenced by Rhizobium Inoculation with Different Nutrient Sources.*Turkish Journal of Agriculture and Forestry* 40(2):229-240

26. **Gajera, R.J., Khafi, H.R., Raj, A.D., Yadav V. and Lad A.N., (2014)** Effect of phosphorus and bio-fertilizers on growth yield and economics of summer lentil. *Agriculture update* **9**(1) 98-102.

27. **Ghanshyam. Kumar, R. and Jat, R. K. (2008)** Productivity and Soil fertility as effected by Organic Manures and inorganic fertilizers in lentil, *Indian Journal of Agronomy***55** (1): 16-21.

28. **Goldstein, A. H. (1994)** Involvement of the quinoprotein glucose dehydrogenase in the solubilization of exogenous phosphates by gram-negative bacteria. *Cellular and Molecular Biology* 197-203.

29. **Gupta, A., Sharma, V., Sharma, G.D. and Chopra, P. (2006)** Effect of biofertilizer and phosphorus levels on yield attributes, yield and quality of urdbean (*Vigna mungo* L.*). Indian Journal of Agronomy* **51**(2):142-144.

30. **Ibrahim, M.M and Bassyuni, M. S. S. (2012)** Effect of irrigation intervals, phosphorus and potassium fertilization rates on productivity and chemical constituents of lentil plants. *Research Journal of Agriculture and Biological Sciences*, **8**(2): 298-304.

31. **Ihsanullah, F. H. T., Habib, A., Abdul, B. and Ullah (2002)** Effect of row spacing on agronomic traits and yield of Lentil. *Asian Journal of plant sciences*, **1**(4):328-329.

32. **Ismail, A.M. and A.E. Hall (2000)** Semi-dwarf and standard height cowpea responses to row spacing in different environment. *Crop Sci.*, 40: 1618-1624.

33. **Jain, A. K. Kumar, S., Singh, O.P., Panwar., J. D. S. and Kumar V.(2008)** Studies in relation to *rhizobium* and vesicular arbuscular mycorrhizal (vam) inoculation with phosphorus in lentil. *Plant Archives* **8**(2) 935-93.

34. **Karwasra, R.S., Kumar, Y.and Yadav, A.S.(2006)**Effect of phosphorus and sulphur on lentil. *Haryana Journal of Agronomy*.**22**(2):164-165.

35. **Khaing, M.T., Myint, A.K., Newe, K., Thuzar, M and Kyaw, P. (2016)** Phosphorus nutrition with or without *rhizobium* inoculation on nitrogen accumulation and yield of green gram (*Vigna radiata L.*) *Journal of Agricultural Research* **4**(1): 81-88.

36. **Khan. S., Singh. V.P.andkumar. A. (2001)** studies on effect of plant densities on growth and yield of *kharif* green gram. *Bulletin of Environment, Pharmacology and Life Sciences. 6(1)291-295*

37. **Khattak, G. S. S., Ashraf, M. and Khan, M. S. (2004)** Assessment of genetic variation for yield and yield components in lentil greengram using generation mean analysis. *Pakistan J. Bot.,* **36**(3):583-588.

38. **Kokani, J. M., Shah, K. A., Tandel, B. M. and Bhimani, G. J. (2015)** Effect of FYM, phosphorus and sulphur on yield of summer blackgram and post harvest nutrient status of soil. *The Bioscan,* 10(1): 379-383.

39. **Kumar, R., Singh,, V.Y., Singh, S., Latare, M.A., Mishra, P.K. and Supriya (2012)** Effect of phosphorus and sulphur nutrition on yield attributes, yield of lentil. *Journal of Chemical and Pharmaceutical Research,* **4**(5):2571-2573.

40. **Kumar. A. and Kushwaha, H. S. (2006)** Response of pigeonpea to sources and levels of phosphorus under rainfed condition. *Indian Journal of Agronomy***5** (11) 60-65.

41. **Kumawat, A., Pareek, B.L. and Yadav, R.S. (2010)** Response of lentil to biofertilizers under different fertility levels. *Indian Journal of Agricultural Sciences,* **80**(7): 655.

42. **Malik, A., Hassan, F., Waheed, A., Qadir, G. and Asghar, R. (2006)** Interactive effects of irrigation and phosphorus on lentil. *Pak. J. Bot*., **38**(4): 1119-1126.

43. **Manpreet, S., Sekhon, H. S. and Jagrup, S. (2004).** Response of summer lentil genotypes to different phosphorus levels. *Environment and Ecology*.**22** (1): 13-17.

44. **Meena, S., Swaroop N. and Dawson J. (2016)** Effect of integrated nutrient management on growth and yield of lentil .*Agric. Sci. Digest*., **36**(1): 63-65.

45. **Mishra, S. K. (2003)** Effect of Rhizobium inoculation, nitrogen and phosphorus on root nodulation, protein production and nutrient uptake in cowpea (*Vigna sinensis*). *Ann. Agric. Res*., **24** (1): 139:144.

46. **Mitra, A. K., Banerjee, K. and Pal, A. K. (2006)** Effect of different levels of phosphorus and sulphur on yield attributes, seed yield, protein content of seed and economics of summer green gram. *Research on Crops*. **7**(2):404-405.

47. **Mitrai, S. and Bhattacharyaz, B. K. (2005)** Water use and productivity of greengram (*Vigna radiata* L) as influenced by spacing, mulching and weed control under rainfed upland situation of Tripura. *Indian journal of Agricultural* Sciences **75**(1): 52-4.

48. **Mondal, S.S., Ghosh, A., Sarkar B. and Acharya, D. (2005)** Studies on the effect of potassium, sulphur and irrigation on growth and yield of lentil. *Journal of Inter academic*. **7**(3):273- 277.

49. **Mubeen, B. R., Shamim, M. D., Khan, A. H. and Singh, A. K. (2015)** Response of Lentil to *rhizobium* Inoculation and Growth Regulators on Biochemical Changes and Yield. *Environment & Ecology***33** (1): 105-109.

50. **Muley P.V and Shinde V.S. (2017)** Effect of liquid and carrier based rhizobium and PSB on growth, yield and economics of lentil. *Bulletin of Environment, Pharmacology and Life Sciences* **6**(2) 165-168.

51. **Nadeem, M. A., Ali, A., Sohail, R. and Maqbool, M. (2004)** Effect of different planting pattern on growth, yield and quality of grain legumes. *Pak. J. Life Soc. Sci.,***2**(2):132-135.

52. **Nemat, A., Noureldin, A. Y. Y., Hayatemy, H. M. F. and Ibrahim, A.M (2000)** Studies on lentil organic sources of nutrients grown under phosphorus fertilizer and *Rhizobium* inoculation. 1- Growth and growth analysis. *Egypt Annals Agric. Sci.,* **3**: 997-1008.

53. **Oad, F. C. and Burio, U. A. (2005)** Influence of different NPK levels on the growth and yield of lentil

Industrial J. Plant Sci., **4** (4): 474-478.

54. **Patel, F. M and Patel, L. R. (2006)** Response of lentil variety to phosphorus and *Rhizobium* inoculation. *J. Farming System Res. and Develop*, **8**(1): 29- 32.

55. **Patel, H. R., Patel, H. F., Maheriya, V. D and Dodia, I. N. (2013)** Response of *kharif* green gram to sulphur and phosphorus fertilization with and without biofertilizer application. *The Bioscan*, **8**(1): 149-152.

56. **Patil, S. C., Jagtap, D. N and Bhale, V. M. (2011)** Effect of phosphorus and sulphur on growth and yield of moongbean. *International Journal of Agricultural Sciences*, **7**(2):348-351.

57. **Phyo Pa Pa Han, Than Da Min, Mar MarKyu, Thet Lin, Maw Maw Than and Yinn Mar Soe (2011)** Effect of Phosphorus Application and Rhizobium Inoculation on Yield and Yield Components of Lentil

58. **Pir FA, Nehvi FA, Abu M, Dar SA, Allai BA. (2009)** Integrated phosphorus management in lentil in Kashmir valley. *Trends in Biosci*. 2 (2):25-26

59. **Premnath, P. K., Verma, R. B. Yadav, A. and Kumar, D. (2015)** Effect of wheat residue treated with planting techniques, rhizobium inoculation and micronutrients on succeeding lentil crop. *Environment & Ecology***33**(1): 91-94.

60. **Raboy, V. (2003)** Molecules of interest: myo-inositol-1, 2, 3, 4, 5, 6-hexakisphosphate. *Phytochem*., **64**:1033–1043.

61. **Rajput, M.J., Alam, S. M. and Mangharher, A. M. (1993)** Effect of row spacing on the growth and yield of lentil *Pakistan Journal of Agriculture Research*, **14** (2 & 3).

62. **Rathod, S.L. and Gawande M. B. (2014)** Response of lentil organic sources of nutrients to different fertilizers grades. *International Journal Science and Research* (IJSR) **3**(7) 1313-1315.

63. **Rathore, R.S., R. Khandwe, N. Khandwe and P.P. Singh (1992).** Effect of irrigation schedules, phosphorus levels and phosphate solublizing organism on lentil yield. *Lens*, 19:17-19.

64. **Rathour, D. K., Gupta, A. K., Choudhary, R. R. and Sadhu, A. C. (2015)** Effect of integrated phosphorus management on Growth, yield attributes and yield of summer black gram. *The Bioscan*. **10**(1): 05-07.

65. **Sahai P, Chandra R. (2011)** Performance of liquid and carrier based inoculants of Mesorhizobiumciceri and PGPR (*Pseudomonasdiminuta*) in chickpea (*Cicer arietinum* L.) on nodulation, yield and soil properties. *Journal of the Indian Society of Soil Science*. 59(3):263-267.

66. **Saharp., Khan, M.D and Almas, Z. (2002)** Effect of rhizobium micro-organism on growth and yield of lentil. *Indian Journal of Agriculture Science*. 72(7) 421-423

67. **Saharp., Khan, M.D and Almas, Z. (2002)** effect of rhizobium micro-organism on growth and yield of lentil. *Indian Journal of Agriculture Science*. 72(7) 421-423

68. **Salaiman, A. R. M.; Hossain, D. and Haque, M. M. (2003)** Response of lentil organic sources of nutrients to Rhizobium inoculation in respect of nodulation, nitrogenase activity, dry matter yield and nitrogen uptake. *Korean Journal of Crop Science*. **48**(5): 355- 360.

69. **Sarkar, AbdurRahman, Kabir, Md., Hasan, Begum, Mahfuza and, Md, Abdus Salam (2004)** Yield performance of lentil as affected by planting date, variety and plant density. *Journal of Agronomy*, **3**(1): 18-24.

70. **Sathyamoorthi, K., Mohamed M., Amanullah, K. and Somasundaram, E. (2007)** Influence of increased plant density and fertilizer application on the nutrient uptake and yield of lentil. *Research Journal of Agriculture and Biological Sciences*, **3**(6): 886-895

71. **Sharma, S N. and Prasad, R. (2009)** Effect of different sources of phosphorus on lentil in alkaline soil of Delhi. *Indian journal of Agricultural Sciences.* **79**(10): 782-9.

72. **Shouny, K.A., Abdel-Gawad, A.A., El-Gindy, A.M. and Sorour, H. A. (2001)** Studies on phosphatic fertilization and irrigation of lentil 11- Individual effect of phosphatic fertilization, water regime and irrigation system on yield and quality. *J. Agric. Sci.,* **9**(1): 213-223.

73. **Shravani, K., Triveni, S, .Latha P.C. and Ramulu, V. (2019)** Biofertilizers formulations and their effect on morphological characters in lentil. *Journal of Pharmacognosy and Phytochemistry* **8**(3): 2460-2465.

74. **Singh, B. and Pareek, R.G. (2003)** Effect of phosphorus and biofertilizers on growth and lentil. *Indian Journal of Pulse Research*. **16** (1): 31-33

Corresponding Author: Manishdhiman.mkd@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 152-154

पश्चिमी राजस्थान में कन्या भ्रूण हत्या : सामाजिक मुद्दा

केदार पंवार, शोधार्थी
डॉ. पूजा सिसोदिया, शोध निर्देशक, सह आचार्य
फैकल्टी ऑफ लॉ, पेसिफिक एकेडमी ऑफ हायर एजूकेशन एंड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर।

सारांश :-

पश्चिमी राजस्थान में कन्या भ्रूण हत्या कई वर्षों से पुरातन सामाजिक व्यवस्था के अनुसार चली आ रही है। ऐसा माना जाता है कि विदेशी आक्रमण एवं मुगलों के आक्रमण के आतंक की वजह से बेटियों के जन्म को अभिशाप माना जाता रहा है। धीरे–धीरे यह प्रक्रिया आम परम्परा में परिवर्तन होती गई और वर्तमान समय में इस परंपरा ने एक सामाजिक कुरीति का रूप ले लिया है, जबकि 90 के दशक में अल्ट्रासाउंड तकनीकी के आगमन से इसकी व्यापक रूप में शुरुआत हुई।

एक अनुमान के अनुसार 1990 से भारत में लगभग एक करोड़ से ज्यादा कन्या भ्रूण का अवैध रूप से गर्भपात किया जा चुका है और कन्या भ्रूण हत्या के कारण हर साल लगभग 5 लाख लड़कियों को हम खो रहे है। राजस्थान में हर दिन लगभग 2500 कन्या भ्रूण हत्या के मामले आ रहे हैं। पश्चिमी राजस्थान में कन्या भ्रूण हत्या आज की समय में आम बात हो चुकी है और खासकर बाड़मेर–जैसलमेर जिलों में तो इस सामाजिक बुराई को कन्या शिशु हत्या भी कहा जाता है।

जनगणना 2011 के अनुसार जैसलमेर में निरंतर बाल लिंगानुपात कम होता जा रहा है, जो कि 852 है, जो एक चिंता का विषय है। लिंगानुपात कम होने से विवाह प्रणाली में विकृति, महिलाओं की तस्करी, हिंसा में वृद्धि, सामाजिक और कानूनी अधिकारों का कमजोर होना, इसके परिणाम स्वरुप सामाजिक अस्थिरता उत्पन्न हो रही है।

आज की परिस्थितियाँ भी कुछ अलग नहीं हैं। जैसलमेर (राजस्थान) के एक गांव 'देवड़ा' के बारे में एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई कि वहाँ पिछले 100 वर्षों में मुश्किल से 10–15 बच्चियों की ही शादी हुई है क्योंकि उन्हें पैदा होते ही मार दिया जाता है। कभी–कभी तो यह काम खुद उनकी माँ करती है। वह अपने दूध के साथ बच्ची को अफीम खिला देती है और नाक पर रेत की पोटली रख देती है या मुँह और नाक में रेत भर देती है। मुँह पर रजाई या तकिया रख देती है, ताकि बच्ची का दम घुट जाए व मुँह में नमक तक भर देती है।

मानव अधिकार के परिप्रेक्ष्य में भी कन्या भ्रूण हत्या एक अभिशाप है, जो कि समानता और गैर भेदभाव महिला अधिकारों का उल्लंघन, जन्म के समय लिंगानुपात, भेदभावपूर्ण सामाजिक संरचनाएं, अधिकारों की पूर्णता इत्यादि का समावेश करता हैं।

कन्या भ्रूण हत्या के मुख्य कारक :-

1. **पितृसत्तात्मक सोच** – समाज में महिलाओं को पुरुष से कम महत्व देना, साथ ही बोझ समझा जाना, पारंपरिक सोच के अनुसार बेटे को परिवार के लिए अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि वह कमाने वाला होता है अर्थात् बेटियों को पराया धन समझा जाता है।

पश्चिमी राजस्थान में बेटे को घर का चिराग जैसी संज्ञा भी प्रदान की गई, जिससे पितृसत्तात्मक सोच का पता चलता है।

2. **दहेज प्रथा** – पश्चिमी राजस्थान में बहुत से समाज में दहेज देना या लेना मूँछ का सवाल माना जाता है। कई बार बेटियों को दहेज ना दे पाने के कारण सामाजिक बहिष्कार तक का डर झेलना पड़ता है, साथ ही शादी पर बहुत अत्यधिक खर्च होना जो कि कन्या भ्रूण हत्या का एक महत्वपूर्ण कारण बन जाता है।

3. **गरीबी और आर्थिक दबाव** – पश्चिमी राजस्थान में आर्थिक अस्थिरता के असंतुलन की वजह से कई परिवार अतिरिक्त बच्चे का बोझ नहीं उठा पाते, जिसकी वजह से कन्या के जीवित रहने की संभावना कम हो जाती है।

4. **सामाजिक और सांस्कृतिक कारण** – पश्चिमी राजस्थान के कई समाज में पुरुष प्रधानता के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित होने के कारण पुरुष को प्रधान माना जाता है। अतः गर्भधारण से पहले लिंग का पता लगाने की तकनीक का गलत इस्तेमाल करके भी कन्या भ्रूण हत्या का किया जाना एक मुख्य कारण बन जाता है।

5. अवांछित गर्भधारण जैसे कि बलात्कार के बाद अवांछित बच्चों को जन्म देना भी मुख्य विकृति का कारण है, इसके साथ ही मानसिक बीमारी और प्रसव के बाद समर्थन की कमी और गलत या अपराध जन्म नियंत्रण की कमी भी मुख्य कारण है।

कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के उपाय :-

कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए सरकार द्वारा समय–समय पर कानून बनाकर उपाय किए गए हैं :–

1. भारतीय दंड संहिता आईपीसी की धाराएं 312 से 316, वर्तमान में भारतीय न्याय संहिता बीएनएस की धारा 88 से 92 तक में यह प्रावधान किया गया कि गर्भपात और अजन्मे बच्चे की मृत्यु से संबंधित, अपराध की गंभीरता और इरादे से किए गए अपराध के लिए दंड की व्यवस्था जो कि पहले 7 वर्ष से बढ़कर 14 वर्ष या आजीवन कारावास और जुर्माने तक का प्रावधान किया गया हैं।

2. गर्भधारण पूर्व एवं प्रसव पूर्व निदान तकनीकी (विनियमन एवं दुरुपयोग निवारण अधिनियम, 1994) के द्वारा देश भर में लिंगानुपात को बढ़ावा देने के लिए सेवा प्रदाताओं और ऐसी सेवा चाहने वाले व्यक्तियों की सक्रिय मिलीभगत से गुप्त रूप से तकनीक के दुरुपयोग के माध्यम से लिंग का पता लगाकर, कन्या भ्रूण हत्या से निपटने के लिए भारत सरकार ने कड़ा कानून बनाया, जिसमें जुर्माना एवं सजा दोनों का प्रावधान किया गया है।

इसी प्रकार भारत सरकार ने अन्य कई प्रकार की योजनाएं लागू कर जैसे महिला एवं बाल विकास मंत्रालय तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सहयोग से "बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ" का राष्ट्रीय मिशन चलाकर, राज्य सरकार द्वारा "मुख्यमंत्री लाडो प्रोत्साहन योजना" जिसमें बालिका जन्म को प्रोत्साहन देने के लिए, सरकारी योजना जिसमें सरकारी अस्पताल और पंजीकृत अस्पतालों में जन्म लेने वाली बालिकाओं की शिक्षा के

लिए सरकार रू. 1,50,000 तक का भुगतान सात किश्तो में किया जाएगा, "बेटियां अनमोल है" ,जैसे अभियान चला कर, साथ ही "लाडो चौपाल" कार्यक्रम जिसमें भ्रूण लिंग निर्धारण परीक्षणों की जांच वाले सोनोग्राफी केन्द्रो की धर पकड़ कर कानूनन सजा दिलवा कर कन्या भ्रूण हत्या को रोका जा रहा है।

राजस्थान सरकार ने पीसीपीएनडीटी अधिनियम 1994 के तहत लिंग परीक्षण और अन्य अपराधों से संबंधित मामलों के लिए अलग से फास्ट ट्रैक कोर्ट की स्थापना करके कन्या भ्रूण हत्या को रोकने की एक पहल की है।

पश्चिमी राजस्थान जो की शिक्षा की दृष्टि के साथ–साथ बहुत सारी परंपराओं एवं अंधविश्वास से घिरा हुआ है, जिसके लिए सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी महिला स्वयं की होती है, अर्थात महिलाओं को जागरूक करके, जब तक सामाजिक स्तर पर महिलाओं द्वारा विरोध नहीं होगा, तब तक कन्या भ्रूण हत्या को रोकना थोड़ा असंभव प्रतीत होता है, अर्थात कहा जा सकता है, कि "महिला ही महिला की दुश्मन" है। इसी सोच को परिवर्तित करने के लिए महिलाओं द्वारा विरोध करके कन्या भ्रूण हत्या को रोकने में वरदान साबित हो सकता है। साथ ही महिलाओं में जागरूकता तथा संवेदनशीलता और शिक्षित बनाकर ही कन्या भ्रूण हत्या को रोका जा सकता है।

राष्ट्रीय महिला आयोग और राज्य महिला आयोग को भी लिंग चयन के विरुद्ध एक मुहिम अभियान चलाकर जनता के बीच जागरूकता पैदा करके तथा जहां पर लिंगानुपात में अत्यधिक कमी वाले ब्लॉक/गांव को चिन्हित कर, वहां के सामाजिक ढांचे को साथ लेकर तथा लोगों से उचित व्यवहार करके और परिवर्तन संचार अभियान की स्थापना करके कन्या भ्रूण हत्या को रोका जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राष्ट्रीय सहारा, 6 सितंबर 2006 – अंक
2. राष्ट्रीय सहारा, 9 सितंबर 2006 – अंक
3. सत्य की खोज, कन्या भ्रूण हत्या– जमात इस्लामी हिंद पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
4. सीमांत केसरी पत्रिका।
5. निहारिका टाइम्स पत्रिका।
6. राजस्थान पत्रिका।
7. दैनिक भास्कर।
8. सुजस पत्रिका।
9. इंडिया टुडे।
10. कुरुक्षेत्र पत्रिका।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 155–158

ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸਕ ਪਿਛੋਕੜ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਦਰਜ ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਅਧਿਐਨ

Mrs. Jaspreet Kaur, Researcher
Dr. Kanwaljeet Kaur, Research Supervisor, Assistant Professor
Punjabi, Tantia University, Sri Ganganagar.

ਜਾਣ-ਪਛਾਣ

ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਵਿੱਚ 'ਵਾਰ' ਇੱਕ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਕਾਵਿ-ਰੂਪ ਹੈ, ਜਿਸਦਾ ਇਤਿਹਾਸਕ ਪਿਛੋਕੜ ਮੱਧਕਾਲੀਨ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਜੰਗਾਂ-ਯੁੱਧਾਂ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਇਹ ਕਾਵਿ-ਰੂਪ ਮੂਲ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਯੋਧਿਆਂ, ਸੂਰਬੀਰਾਂ ਦੀ ਬਹਾਦਰੀ ਅਤੇ ਵੀਰ ਰਸ ਦਾ ਗੁਣਗਾਨ ਕਰਨ ਲਈ ਵਰਤਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਮਰਾਸੀਆਂ ਅਤੇ ਭੱਟਾਂ ਵਰਗੀਆਂ ਜਾਤਾਂ ਦੇ ਲੋਕ ਇਸਨੂੰ ਢਾਡੀ ਵਾਰਾਂ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਗਾਇਨ ਕਰਦੇ ਸਨ।

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਇਸ ਲੋਕ-ਪ੍ਰਿਯ ਕਾਵਿ-ਰੂਪ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਕੇ, ਇਸਦੇ ਵਿਸ਼ਾ-ਵਸਤੂ ਨੂੰ ਭੌਤਿਕ (ਵੀਰ ਰਸ) ਖੇਤਰ ਤੋਂ ਕੱਢ ਕੇ ਅਧਿਆਤਮਕ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਲਿਆਂਦਾ, ਜਿੱਥੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਬਾਹਰੀ ਦੁਸ਼ਮਣਾਂ ਦੀ ਬਜਾਏ ਧਰਮ ਸੱਤਾ (ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ) ਅਤੇ ਮਾਇਕ ਸ਼ਕਤੀਆਂ (ਹਉਮੈ, ਮਨਮੁਖਤਾ) ਦਰਮਿਆਨ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਸੰਕਲਨ

ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਵਿੱਚ ਕੁੱਲ 22 ਵਾਰਾਂ ਦਰਜ ਹਨ। ਇਹ ਵਾਰਾਂ ਛੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਰਚਨਾਕਾਰਾਂ ਦੁਆਰਾ ਰਚੀਆਂ ਗਈਆਂ ਹਨ: ਚਾਰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ (21 ਵਾਰਾਂ) ਅਤੇ ਭਾਈ ਸੱਤਾ ਤੇ ਬਲਵੰਡ (1 ਵਾਰ)।

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ	ਵਾਰਾਂ ਦੀ ਗਿਣਤੀ	ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਰਾਗ
ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ	3	ਮਾਝ, ਆਸਾ, ਮਲਾਰ
ਗੁਰੂ ਅਮਰਦਾਸ ਜੀ	4	ਗੂਜਰੀ, ਸੂਹੀ, ਰਾਮਕਲੀ, ਮਾਰੂ
ਗੁਰੂ ਰਾਮਦਾਸ ਜੀ	8	ਸ੍ਰੀ ਰਾਗ, ਗਉੜੀ, ਬਿਹਾਗੜਾ, ਵਡਹੰਸ, ਸੋਰਠਿ, ਬਿਲਾਵਲ, ਸਾਰੰਗ, ਕਾਨੜਾ
ਗੁਰੂ ਅਰਜਨ ਦੇਵ ਜੀ	6	ਗਉੜੀ, ਗੂਜਰੀ, ਜੈਤਸਰੀ, ਰਾਮਕਲੀ, ਮਾਰੂ, ਬਸੰਤ
ਸੱਤਾ ਤੇ ਬਲਵੰਡ	1	ਰਾਮਕਲੀ (ਰਾਮਕਲੀ ਕੀ ਵਾਰ)

ਗੁਰੂ ਅਰਜਨ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਾਰਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਨੂੰ ਵਧਾਉਣ ਲਈ, ਕੁਝ ਵਾਰਾਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਚੱਲਤ ਲੋਕ-ਵਾਰਾਂ ਦੀਆਂ ਧੁਨਾਂ ਉੱਤੇ ਗਾਉਣ ਦਾ ਆਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਜਿਵੇਂ: 'ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ' ਨੂੰ 'ਟੁੰਡੇ ਅਸਰਾਜੇ ਦੀ ਵਾਰ' ਦੀ ਧੁਨੀ ਉੱਤੇ। ਇਸ ਨਾਲ ਬਾਣੀ ਦਾ ਸੁਨੇਹਾ ਆਮ ਲੋਕਾਂ ਤੱਕ ਵਧੇਰੇ ਸਰਲਤਾ ਨਾਲ ਪਹੁੰਚਿਆ।

ਵਾਰ ਕਾਵਿ-ਰੂਪ ਦੀਆਂ ਸੰਗਠਨਾਤਮਕ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾਵਾਂ

ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਰੂਪ, ਮੂਲ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਪਉੜੀਆਂ ਦਾ ਸੰਗ੍ਰਹਿ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਬਾਅਦ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਅਰਜਨ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਭਾਵ ਅਤੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਅਨੁਕੂਲ ਸਲੋਕ ਜੋੜ ਕੇ ਇਸਨੂੰ ਨਵਾਂ ਰੂਪ ਦਿੱਤਾ।

1. ਦੋ ਧਿਰਾਂ ਅਤੇ ਸੰਘਰਸ਼:

ਵਾਰ ਦੇ ਮੂਲ ਢਾਂਚੇ ਵਿੱਚ ਦੋ ਵਿਰੋਧੀ ਧਿਰਾਂ ਦਾ ਹੋਣਾ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ। ਅਧਿਆਤਮਕ ਵਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਇਹ ਧਿਰਾਂ ਗੁਰਮੁਖ (ਉੱਤਮ ਗੁਣ ਵਾਲੀ, ਪ੍ਰਸ਼ੰਸਾ ਦੀ ਪਾਤਰ) ਅਤੇ ਮਨਮੁਖ (ਮਾੜੇ ਗੁਣ ਵਾਲੀ, ਨਿਖੇਧੀ ਦੀ ਪਾਤਰ) ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਸਿਰਜੀਆਂ ਗਈਆਂ ਹਨ।

- ਸੰਘਰਸ਼: ਇਹ ਸੰਘਰਸ਼ ਸੂਖਮ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਪੇਸ਼ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਜੋ ਸੱਚ ਅਤੇ ਕੂੜ, ਸਿਮਰਨ ਅਤੇ ਮਾਇਆ, ਧਰਮ ਅਤੇ ਹਉਮੈ ਵਿਚਕਾਰ ਹੈ। ਜਗਤ ਨੂੰ ਇੱਕ 'ਛਿੰਝ' (ਅਖਾੜੇ) ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਦਰਸਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਗੁਰਮੁਖ ਜੀਵਨ-ਬਾਜ਼ੀ ਜਿੱਤਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਨਮੁਖ ਹਾਰ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

2. ਰਸ ਵਿਧਾਨ (ਸ਼ਾਂਤ ਰਸ ਦੀ ਪ੍ਰਧਾਨਤਾ):

ਲੋਕ-ਵਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਵੀਰ ਰਸ ਦੀ ਪ੍ਰਧਾਨਤਾ ਹੁੰਦੀ ਸੀ, ਪਰ ਗੁਰਮਤਿ ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਅਧਿਆਤਮਕ ਹੋਣ ਕਰਕੇ, ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚ ਸ਼ਾਂਤ ਰਸ ਮੁੱਖ ਰਸ ਵਜੋਂ ਆਇਆ ਹੈ। ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਹੀ, ਥਾਂ-ਥਾਂ ਮਾਨਵੀ ਸਥਿਤੀਆਂ ਅਤੇ ਤਤਕਾਲੀ ਰਾਜਨੀਤਿਕ/ਸਮਾਜਿਕ ਆਲੋਚਨਾ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਕੇ ਕਰੁਣਾ, ਬੀਭਤਸ ਅਤੇ ਵੀਰ ਰਸ ਦਾ ਅਨੁਭਵ ਵੀ ਮਿਲਦਾ ਹੈ।

3. ਬੋਲੀ ਅਤੇ ਸ਼ੈਲੀ (ਢਾਡੀ ਭਾਵ):

ਵਾਰਾਂ ਦੀ ਸ਼ੈਲੀ ਜੋਸ਼-ਭਰਪੂਰ ਅਤੇ ਉਪਦੇਸ਼ਾਤਮਕ ਹੈ। ਬੋਲੀ ਸਰਲ, ਸੂਤਰਬੱਧ ਅਤੇ ਮੁਹਾਵਰੇਦਾਰ ਕੇਂਦਰੀ ਪੰਜਾਬੀ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਅਰਬੀ-ਫਾਰਸੀ ਅਤੇ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਦੇ ਸ਼ਬਦ ਵੀ ਸਹਿਜੇ ਹੀ ਮਿਲ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨਾਂ ਨੇ ਆਪਨੇ ਆਪ ਨੂੰ 'ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਦਾ ਢਾਢੀ' (ਗਾਇਕ) ਕਹਿ ਕੇ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਜਿਵੇਂ:

"ਹਉ ਢਾਢੀ ਵੇਕਾਰ ਕਾਰੈ ਲਾਇਆ ॥ ਰਾਤਿ ਦਿਹੈ ਕੈ ਵਾਰੁ ਧੁਰਹੁ ਫੁਰਮਾਇਆ ॥" (ਮਾਝ ਮ. ੧)

ਇਸ 'ਢਾਡੀ ਭਾਵ' ਰਾਹੀਂ, ਉਹ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਸਿਫ਼ਤ-ਸਾਲਾਹ ਕਰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਉਸ ਤੋਂ ਦਰਸ਼ਨ ਜਾਂ 'ਨਾਮ' ਰੂਪੀ ਦਾਨ ਮੰਗਦੇ ਹਨ, ਜੋ ਸਮੁੱਚੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਕੇਂਦਰੀ ਵਿਸ਼ਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ-ਵਸਤੂ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀਆਂ ਤਿੰਨ ਵਾਰਾਂ (ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ, ਮਾਝ ਦੀ ਵਾਰ, ਮਲਾਰ ਦੀ ਵਾਰ) ਗੁਰਮਤਿ ਦੇ ਸਾਰੇ ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਕਲਾਵੇ ਵਿੱਚ ਲੈਂਦੀਆਂ ਹਨ।

ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਅਤੇ ਅਧਿਆਤਮਕ ਪੱਖ:

- ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ (ਨਾਇਕ): ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਮਹਾਨਾਇਕ ਵਜੋਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ—ਰਚੈਤਾ, ਪਾਲਕ, ਰੱਖਿਅਕ, ਹੁਕਮੀ ਅਤੇ ਦਇਆ ਰੂਪ। ਵਾਰਾਂ ਦੀਆਂ ਪਉੜੀਆਂ ਵਿੱਚ ਇਸ ਮਹਾਨਾਇਕ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਹੈ।
- ਮੂਲ ਮੰਤਰ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ: 'ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ' ਦਾ ਆਰੰਭ '੧ਓ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਗੁਰਪ੍ਰਸਾਦਿ' ਨਾਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਜੋ ਗੁਰਮਤਿ ਦੇ ਮੂਲ ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਨੂੰ ਸਪੱਸ਼ਟ ਕਰਦਾ ਹੈ।
- ਗੁਰੂ ਅਤੇ ਨਾਮ ਦੀ ਮਹਿਮਾ: ਗੁਰੂ ਨੂੰ 'ਇਲਾਹੀ ਨੂਰ' ਦੱਸਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ਜੋ ਜੀਵ ਨੂੰ ਨਾਮ ਦੀ ਦਾਤ ਬਖ਼ਸ਼ ਕੇ ਸੰਸਾਰ ਸਾਗਰ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਨਾਮ ਨੂੰ ਸਮੂਹ ਸੁਖਾਂ ਦਾ ਸੋਮਾ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ।

ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਪੱਖ:

- ਤਤਕਾਲੀਨ ਸਮਾਜ ਦੀ ਆਲੋਚਨਾ (ਸਲੋਕਾਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ): ਵਾਰਾਂ ਨਾਲ਼ ਜੋੜੇ ਗਏ ਸਲੋਕਾਂ ਵਿੱਚ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜ ਦੀ ਤਰਸਯੋਗ ਹਾਲਤ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਜ਼ੁਲਮ ਅਤੇ ਧਾਰਮਿਕ ਪਾਖੰਡ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।

  "ਰਾਜੇ ਸੀਂਹ ਮੁਕਦਮ ਕੁਤੇ ।। ਜਾਇ ਜਗਾਇਨ ਬੈਠੇ ਸੁਤੇ ।।"(ਵਾਰ ਮਲਾਰ ਮ. ੧)
- ਕਰਮਕਾਂਡ ਅਤੇ ਭੇਖਾਂ ਦਾ ਖੰਡਨ: ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਯੋਗ ਚਿੱਤਰਣ, ਝੂਠੇ ਕਰਮਕਾਂਡਾਂ ਅਤੇ ਜੈਨੀਆਂ ਵਰਗੀਆਂ ਅਣ-ਮਨੁੱਖੀ ਰੀਤਾਂ ਦੀ ਕਰੜੀ ਆਲੋਚਨਾ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਮਾਨਵਵਾਦੀ ਧਰਮ ਦੀ ਬੁਨਿਆਦ ਰੱਖੀ।
- ਆਦਰਸ਼ ਜੀਵਨ: ਸਤਿਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਨਵੇਂ ਵਿਵਹਾਰਕ ਆਦਰਸ਼ ਪੇਸ਼ ਕੀਤੇ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਕੇ ਮਨੁੱਖ "ਇਹ ਲੋਕ ਸੁਖੀਏ ਪਰਲੋਕ ਸੁਹੇਲੇ" ਦੀ ਅਵਸਥਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਜਿਵੇਂ: *"ਹਸੰਦਿਆ ਖੇਲੰਦਿਆ ਪੈਨੰਦਿਆ ਵਿਚੇ ਹੋਵੈ ਮੁਕਤਿ"*(ਰਾਗ ਗੂਜਰੀ ਦੀ ਵਾਰ ਮ. ੫)।

ਹੋਰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਦਾ ਸੰਖੇਪ ਸਾਰ

ਬਾਕੀ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਵੀ ਮੁੱਖ ਤੌਰ 'ਤੇ ਉਕਤ ਸਿਧਾਂਤਾਂ (ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਦੀ ਵਡਿਆਈ, ਗੁਰੂ ਦੀ ਮਹਿਮਾ, ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ) 'ਤੇ ਕੇਂਦਰਿਤ ਹਨ:

- ਗੁਰੂ ਅਮਰਦਾਸ ਜੀ: ਆਪ ਜੀ ਦੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਜੀਵਨ-ਜੁਗਤੀ, ਹਉਮੈ ਦਾ ਤਿਆਗ ਅਤੇ ਗੁਰੂ-ਬਾਣੀ ਦੀ ਮਹਾਨਤਾ 'ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਹੈ। *ਸੂਰਮੇ*ਦੀ ਉਚਿਤ ਵਿਆਖਿਆ ਮਨ ਨਾਲ ਲੜਨ ਵਾਲੇ ਗੁਰਮੁਖ ਵਜੋਂ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ।
- ਗੁਰੂ ਰਾਮਦਾਸ ਜੀ: ਆਪ ਜੀ ਨੇ ੪ ਵਾਰਾਂ ਰਚੀਆਂ। ਮੁੱਖ ਵਿਸ਼ਾ ਗੁਰੂ-ਮਹਿਮਾ ਅਤੇ ਗੁਰੂ-ਸੇਵਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਨੂੰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਦਾ ਰਾਹ ਦੱਸਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਵਿਰੋਧੀਆਂ ਅਤੇ ਨਿੰਦਕਾਂ ਦੀ ਬੁਰੀ ਗਤ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਵੀ ਕੀਤਾ ਹੈ।
- ਗੁਰੂ ਅਰਜਨ ਦੇਵ ਜੀ: ਆਪ ਜੀ ਦੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਸ਼ਾਂਤ ਰਸ ਦੀ ਪ੍ਰਧਾਨਤਾ ਹੈ। ਨਾਮ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਨੂੰ ਜੀਵਨ ਦਾ ਮੁੱਖ ਲਕਸ਼ ਮਿਥਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। 'ਬਸੰਤ ਦੀ ਵਾਰ' ਵਿੱਚ ਬਸੰਤ ਰੁੱਤ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਕ ਰਾਹੀਂ ਨਾਮ ਜਪ ਕੇ ਮਨ ਦੇ ਖਿੜਨ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ।

- ਸੱਤਾ ਅਤੇ ਬਲਵੰਡ ਜੀ: ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੀ 'ਰਾਮਕਲੀ ਕੀ ਵਾਰ' ਪਹਿਲੇ ਪੰਜ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੀ ਦੈਵੀ ਸ਼ਖਸੀਅਤ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਜੋਤਿ ਦੀ ਅਜ਼ਮਤ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਸਾਰ ਰੂਪ (ਨਿਸ਼ਕਰਸ਼)

ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਸ਼ਾਮਲ ਵਾਰਾਂ, ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਇੱਕ ਅਨਮੋਲ ਖ਼ਜ਼ਾਨਾ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਲੋਕ-ਕਾਵਿ ਰੂਪ ਨੂੰ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਕੇ, ਇਸਨੂੰ ਆਪਣੀ ਅਦੁੱਤੀ ਕਾਵਿ-ਕਲਪਨਾ ਰਾਹੀਂ ਅਧਿਆਤਮਕ ਸਾਹਿਤ ਦੇ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਅਮਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ।

ਸਾਰੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਦੀ ਵਿਸ਼ੇਗਤ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾ ਹੈ:

1. ਬ੍ਰਹਮੰਡੀ ਰਚਨਾ ਅਤੇ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਦੀ ਵਡਿਆਈ।
2. ਨਾਮ ਦੀ ਮਹਿਮਾ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਦੀ ਉਸਤਤ।
3. ਸਦਾਚਾਰਕ ਸਿੱਖਿਆ ਅਤੇ ਆਦਰਸ਼ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ।

ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਪਉੜੀਆਂ ਦੀ ਉੱਤਮ ਸ਼ੈਲੀ ਅਤੇ ਸਲੋਕਾਂ ਦੀ ਆਲੋਚਨਾਤਮਕ ਸੁਰ ਦਾ ਵਿਲੱਖਣ ਸੰਯੋਗ, ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਅਮਾਨਵੀ ਵਿਹਾਰ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ, ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 159–163

डॉ. नरेश सिहाग की कहानियों में किन्नर विमर्श

डॉ. मालोजी अर्जुन जगताप
सह–आचार्य, हिंदी विभाग,
सांगोला महाविद्यालय, सांगोला।

सारांश :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' का कथा–साहित्य समकालीन हिंदी साहित्य में हाशिए पर पड़े समुदायों की आवाज को स्वर देता है। विशेष रूप से उनकी पुस्तक 'बहुत तेज भागती है जिंदगी' (किन्नर आधारित कहानियां, 2025) में किन्नर समुदाय की सामाजिक स्थिति, आत्मसम्मान और मानवीय अधिकारों का प्रश्न केंद्र में है। इसमें किन्नर विमर्श के सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक पहलुओं की समीक्षा करता है और यह दिखाता है कि सिहाग ने अपनी कहानियों में किन्नरों को केवल दया या उपहास के पात्र के रूप में नहीं बल्कि आत्मनिर्भर और संवेदनशील मानव के रूप में प्रस्तुत किया है। उनकी भाषा, कथानक और प्रतीकात्मकता किन्नर समुदाय की 'अदृश्य आवाज' को साहित्य के केंद्र में लाती है लेकिन इन कहानियों में कथावस्तु एवं रचनात्मक समानता अधिक पाई जाती है। इन कहानियों में भावनात्मकता से अधिक कृत्रिमता दिखाई देती है जैसे तकनीकि कहानियां हो।

बीज शब्द : किन्नर विमर्श, बहुत तेज भागती है जिंदगी, नरेश सिहाग, अस्तित्व, आत्मसम्मान।

भूमिका :

इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य विमर्शों का युग है – दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श और अब किन्नर विमर्श। किन्नर विमर्श उन लोगों की जीवनानुभूति का प्रतिनिधित्व करता है जिन्हें समाज ने 'तीसरा लिंग' कहकर हाशिए पर डाल दिया। डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' का लेखन इस विमर्श को साहित्यिक और मानवीय दोनों धरातलों पर प्रस्तुत करता है। उनकी कहानियाँ जैसे 'बहुत तेज भागती है जिंदगी', तेरे बस का नहीं–एक किन्नर की आत्मकथा' गिरती निगाहें, बड़े शब्द, हर रंग देखा है, खुद से कहे गए शब्द, 'पतझड़ के बीच, खामोशियों का शोर' आदि में किन्नरों का संघर्ष, प्रेम, आत्मबोध और समाज से संवाद स्पष्ट रूप में उभरता है। लेखक स्वयं अपनी भूमिका में कहते हैं – "यह कहानियाँ दया नहीं, बल्कि उस जीवन को समझने की कोशिश हैं जिसे समाज देखने से कतराता है।"[१] डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' समकालीन हिंदी कहानी के उन रचनाकारों में हैं जिन्होंने जीवन के असुविधाजनक और हाशिए पर पड़े विषयों को सहज मानवीयता के साथ प्रस्तुत किया। उनकी कहानियाँ केवल सामाजिक यथार्थ का चित्रण नहीं करतीं, बल्कि एक विचारशील हस्तक्षेप भी करती हैं। 'बहुत तेज भागती है जिंदगी किन्नर आधारित कहानियां' संग्रह की भूमिका में वे लिखते हैं "मैंने उन चेहरों की कहानियाँ लिखी हैं जिन पर समाज ने कभी नजर डालने की जरूरत नहीं समझी।"[२] यह कथन उनके साहित्यिक

उद्देश्य का घोष है। सिहाग की कहानियाँ किन्नर जीवन के विविध पक्षों पारिवारिक बहिष्कार, शिक्षा से वंचन, समाज में स्वीकृति की कमी, प्रेम और सम्मान की खोज का जीवंत दस्तावेज हैं।

किन्नरों की सामाजिक स्थिति और हाशियाकरण :

सिहाग की कहानियों में किन्नरों की सामाजिक स्थिति अत्यंत जटिल और विरोधाभासी है। संग्रह की पहली कहानी बहुत तेज भागती है जिंदगी में किन्नर पात्र रिया उर्फ राजू द्वारा तिरस्कार की शिकार किन्नर की पीड़ा को उकेरा है। कहानी की शुरुआत में ही लेखक लिखते हैं "उसका शरीर बदल रहा था, लेकिन मन वैसा ही रहा कोमल–संवेदनशील और उलझा हुआ।"[३] यह अवतरण दिखाता है कि बाल्यावस्था से ही किन्नर को अपनी 'लैंगिक पहचान' के कारण सामाजिक अस्वीकार्यता झेलनी पड़ती है। यह अस्वीकार्यता परिवार से शुरू होती है और समाज में पहुंचकर भयावह रूप लेती है। "अगर मैं वैसा नहीं हूँ जैसा सब सोचते हैं, तो क्या मैं बुरा हूँ माँ?"४ किन्नर जीवन की सबसे मार्मिक, मनोवैज्ञानिक और अस्तित्वगत पीड़ा को सामने लाती है। यह प्रश्न मात्र आत्मदया या शिकायत नहीं, बल्कि पहचान, स्वीकृति और प्रेम के अधिकार की वेदना है। इसमें दो स्तर स्पष्ट होते हैं पारिवारिक अस्वीकृति और सामाजिक बहिष्कार।

सौम्या का कथन "लोग नोट तो देते थे, पर नजरें नहीं मिलाते थे। हर सिक्के के साथ गिरता था एक नया ताना अरे इनको क्यों दे रहा है? कामचोर लोग हैं!"[५] 'खामोशियों का शोर' कहानी में रवि की वेदना लेखक इन शब्दों में व्यक्त करते है "लेकिन इस खामोश रवि के भीतर एक ऐसा शोर पलता था, जिसे सुनने की हिम्मत किसी में नहीं थी। वो शोर था पहचान का, दर्द का, और समाज से जूझती आत्मा का क्योंकि रवि किन्नर था।"[६] दूसरी कहानी 'तेरे बस का नहीं – एक किन्नर की आत्मकथा' में नीलम का पात्र आत्मस्वीकृति और पहचान के संघर्ष से गुजरता है नीलम आज भी वही ताली बजाती है, पर अब उस ताली में अपमान नहीं अभिमान है। वो अब मंदिर में नहीं, मंचों पर खड़ी होकर कहती है– "हर एक की आँख में खटकना है मुझे, वो जो कहते हैं तेरे बस का नहीं, मैंने उन्हीं की दुनिया में अपना नाम लिखा है!"[७] और भीड़ तालियों से गूँज उठती है। क्योंकि अब वो ताली किसी मजाक की नहीं,सम्मान की पहचान' बन चुकी है। यहाँ नीलम की सामाजिक स्वीकृति का प्रतीक है एक ऐसा 'किन्नर' जो समाज से कटा हुआ है और जो उसे कभी अपनाता नहीं।

'बहुत तेज भागती है जिंदगी' में रिया नामक पात्र समाज की उपेक्षा का प्रतीक बनती है – "लोग दरवाजे बंद कर लेते थे, पर रिया की मुस्कान कभी बंद नहीं होती थी।"[८] यह वाक्य उस समाज के दोहरे चरित्र को उजागर करता है जो मनोरंजन के समय किन्नरों को बुलाता है, पर समानता देने में पीछे हट जाता है। डॉ. निर्मला चौहान लिखती हैं कृ "किन्नर विमर्श की सार्थकता तभी है जब साहित्य उनके आत्मबोध को स्वीकार करे, केवल करुणा नहीं दिखाए।"[९] सिहाग इस आत्मबोध को अपने कथानक में प्रतिष्ठित करते हैं। किन्नरों के अस्तित्व का दर्द, उनकी अदृश्यता, उपेक्षा और मानवीय पहचान के संघर्ष का सघन प्रतीक है। किन्नर बुरे नहीं होते अस्वीकार करने वाला समाज बुरा होता है। उनकी पीड़ा का समाधान सहानुभूति नहीं, सम्मान, अधिकार, बराबरी और संवेदनशील सामाजिक संरचना है।

आत्मपरकता, पहचान और अस्तित्व की खोज :

पहले समाज किन्नरों को 'भिक्षुक' या 'अशुभ' मानता था। परंतु अब वे आत्मसम्मान और समान व्यवहार की माँग कर रहे हैं। वे अब दया नहीं बल्कि अधिकार की भाषा बोलते हैं। शिक्षा और मीडिया ने उनकी पहचान

को 'लिंग' से आगे बढ़ाकर 'मानव' के रूप में देखने की दृष्टि दी है। किन्नर अब अपनी पहचान को छिपाते नहीं बल्कि गर्व से प्रस्तुत करते हैं यह आत्मसम्मान का प्रतीक है। किन्नर विमर्श का मूल प्रश्न पहचान का है। सिहाग की 'दो चहरे एक रास्ता' की नायिका नीलम कहती है– "यहाँ पर हर रिश्ता दो पैमाने पर तोला जाता है सहारा और रोल।"[१०] यह वाक्य एक समूचे वर्ग की व्यथा का प्रतीक है। किन्नरों के जीवन में नाम और पहचान का संकट इतना गहरा है कि वे 'स्व' को ढूँढने की प्रक्रिया में समाज से लगातार दूर होते जाते हैं। रिया का यह वाक्य मैं रिया हूँ, और मैं किसी लिंग की नहीं, अपने अस्तित्व की प्रतिनिधि हूँ। उसके अस्तित्व के और पहचान के संघर्ष कि कथा है। बहुत तेज भागती है जिंदगी यह सिखाती है कि पहचान कोई उपहार नहीं, संघर्ष से अर्जित होती है। समाज की कठोरता के बावजूद किन्नर जीवन आत्म–स्वीकृति, सम्मान और प्रेम का प्रतिकार है। रिया की कहानी केवल उसकी नहीं, हर उस आत्मा की है। डॉ. सुधा मिश्रा लिखती हैं "किन्नर विमर्श देह से आत्मा तक की यात्रा का विमर्श है, जहाँ व्यक्ति अपने अस्तित्व को स्वीकारता है।"[११] सिहाग की कहानियों में यह आत्मस्वीकृति सकारात्मक शक्ति के रूप में उभरती है।

प्रेम, संवेदना और मानव संबंधों की पुनर्परिभाषा :

हिंदी कथा में किन्नर पात्रों का प्रेम मानवीय अधिकार और अस्तित्व की स्वीकृति का प्रतीक बनकर उभरता है। यह प्रेम जैविक लैंगिकता से परे भावनात्मक समानता और संवेदना को महत्व देता है। पारिवारिक और सामाजिक अस्वीकृति के बीच उनका प्रेम न्यायपूर्ण प्रतिरोध का रूप ले लेता है। प्रेम और संवेदना सिहाग की कहानियों का केंद्रीय तत्व है। 'तेज भागती जिन्दगी' की नायिका समाज के सामने अपने प्रेम को स्वीकारने का साहस दिखाती है लेकिन आरव के माता–पिता उसके प्रेम का यश कहकर विरोध करते है "क्या पागल हो गए हो? वह किन्नर है! वह कहता है वह इंसान है– बस इतना काफी है।"[१२] यह कथन पारंपरिक सामाजिक संरचना को चुनौती देता है। डॉ. रमेश त्रिपाठी कहते हैं– "हिंदी कथा में किन्नर पात्र प्रेम को न्याय और समानता के रूप में प्रस्तुत करते हैं।"[१३] इसी प्रेम के माध्यम से वे पहचान, सम्मान और बराबरी की माँग करते हैं। इस प्रकार किन्नर प्रेम साहित्य को लोकतांत्रिक, समावेशी और न्याय–सचेत समाज की ओर अग्रसर करता है। सिहाग का दृष्टिकोण मानवीयता पर आधारित है, जहाँ प्रेम किसी शरीर की सीमा में नहीं बंधता।

सामाजिक परिवर्तन का स्वर :

समाज में अब किन्नरों को लेकर दृष्टिकोण धीरे–धीरे बदल रहा है। 21वीं सदी में शिक्षा, मीडिया, और संवैधानिक अधिकारों ने उनके जीवन में नई रोशनी पैदा की है। आज किन्नर केवल समाज की 'हाशिये की आवाज' नहीं बल्कि समानता, आत्मसम्मान और अस्तित्व के अधिकार की प्रतीक बन रहे हैं। पहले किन्नर समुदाय शिक्षा से वंचित था क्योंकि विद्यालयों और समाज में उनके प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार होता था। परंतु अब यह स्थिति बदल रही है तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र, और दिल्ली जैसे राज्यों में ट्रांसजेंडर विद्यार्थियों के लिए आरक्षण और छात्रवृत्तियाँ शुरू की गई हैं। 'नालसा बनाम भारत सरकार' (NALSA vs. Union of India) निर्णय ने उन्हें 'तीसरे लिंग' के रूप में मान्यता दी, जिससे शिक्षा में प्रवेश आसान हुआ। किन्नर कार्यकर्ता गौरी सावंत, लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी और जोयिता मंडल जैसे नाम शिक्षा से ही समाज में नेतृत्व की भूमिका तक पहुँचे हैं। शिक्षा ने उन्हें भी यह एहसास कराया कि 'पहचान' केवल जैविक नहीं, बौद्धिक और मानवीय भी होती है। किन्नरों के पारंपरिक व्यवसाय जैसे मांगना, नाचना, या शगुन लेना अब धीरे–धीरे बदल रहे हैं। नई पीढ़ी के किन्नर अब

विभिन्न क्षेत्रों में अपनी जगह बना रहे हैं : चेन्नई की कृष्णा कुमार ने 'Trans Kitchen' नामक रेस्टोरेंट चलाकर आत्मनिर्भरता का उदाहरण पेश किया। किन्नर अब राजनीति, न्यायपालिका, और शिक्षा जगत में भी स्थान पा रहे हैं जैसे जोयिता मंडल (पश्चिम बंगाल की पहली ट्रांसजेंडर जज)।

डॉ. सिहाग की कहानियाँ केवल करुणा नहीं जगातीं बल्कि परिवर्तन की चेतना जगाती हैं। किन्नर के लिए नई राह, शिक्षा, व्यवसाय, आत्सम्मान का सन्देश देती है – "अगर समाज ने दरवाजा बंद किया है, तो मैं खिड़की से सूरज ढूँढ लूँगी।"[१४] नीलम का यह कथन आत्मविश्वास सामजिक परिवर्तन का संदेश है। नीलम के माध्यम से वे यह संदेश देते हैं कि शिक्षा, आत्मनिर्भरता और संगठन ही किन्नर समाज की मुक्ति के साधन हैं। नीलम का यहाँ 'वाणी उठाना' केवल प्रतीक नहीं बल्कि समाज को चुनौती देने का रूपक है।

रिया, हम समाज से भीख नहीं माँगते, सम्मान माँगते हैं। और वो हमें खुद अर्जित करना होगा। रिया ने सिलाई सीखनी शुरू की, फिर नाचना, फिर पढ़ना भी। उसकी आँखों में अब डर नहीं था। सिर्फ एक सपना था। एक दिन मेरा नाम मेरे काम से जाना जाएगा। यह रिया की भावना है। सिलाई मशीन, फूड मॉल, स्कूल टीचर आदि कामों के माध्यम से अपनी पहचान किन्नर निर्माण कर रहे है।

भाषा, प्रतीक और शिल्प :

सिहाग की भाषा संवेदनशील और प्रतीकात्मक है। उन्होंने जीवन के बिंबों और रूपकों के माध्यम से समाज की असमानता को व्यक्त किया है। 'टूटे खिलौने का सफर' की नायिका रेशमा के संदर्भ में पुलिसवाला ताना मरते हुए कहता है "तू भी एक टूटा खिलौना है रेशमा।"[१५] यहाँ प्रतीकों प्रयोग किया है। सिहाग की कथा–शैली सहजता एवं पात्रों की भाषा में सरलता प्रतीकात्मकता, अभिव्यक्ति से परिपूर्णता दिखाई देती है।

निष्कर्ष :

नरेश सिहाग का लेखन समकालीन समाज के अंतर्विरोधों की आलोचना करता है। उनकी कहानियाँ यह प्रश्न उठाती हैं कि आधुनिकता और प्रगतिशीलता के इस युग में भी क्यों किन्नर समुदाय सामाजिक न्याय से वंचित है। 'बहुत तेज भागती है जिंदगी' की नायिका कहती है हम भी खुश रहना चाहते हैं, पर पहले हमें 'हम' समझा जाए। यह पंक्ति सिहाग के लेखन का सार है पहचान की माँग से अधिक सम्मान की माँग। डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' की कहानियाँ हिंदी कथा साहित्य में किन्नर विमर्श को एक नयी दिशा देती हैं। उन्होंने इस समुदाय को सहानुभूति के नहीं, समानता के स्तर पर प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों में किन्नर पात्र समाज से संवाद करते हैं, टकराते हैं और अंततः अपनी पहचान स्वयं गढ़ते हैं। 'किन्नर आधारित कहानियां' किन्नर जीवन की उस गाथा को रूप देती है जो मानवीयता के उच्चतम बिंदु को छूती है। सिहाग का लेखन हमें यह सिखाता है कि मनुष्य की पहचान उसके कर्म, संवेदना और दृष्टि से होती है न कि उसके शरीर से। इसमे किन्नर को समाज के भीतर सम्मान की मांग और अपनी मानवता' की पुर्नस्थापना का स्वर उभरता है।

संदर्भ सूची :

१. सिहाग, नरेश 'बोहल', बहुत तेज भागती है जिंदगी, किन्नर आधारित कहानियां, एस.एस. पब्लिकेशन, नई दिल्ली, २०२५, भूमिका से, पृ. ८

२. वही, पृ. ५

३. वही, पृ. ६
४. वही, पृ. ६
५. पतझड़ के बीच, पृ. ३०
६. खामोशियों का शोर, पृ. ३५
७. तेरे बस का नहीं – एक किन्नर की आत्मकथा, पृ. १४
८. बहुत तेज भागती है जिंदगी' पृ. १२
९. चौहान निर्मला, किन्नर विमर्श और हिंदी कहानी, भारतीय ज्ञानपीठ, २०१६, पृ.५४
१०. दो चेहरे एक रास्ता, पृ. ३७
११. मिश्रा सुधा, समकालीन हिंदी कथा साहित्य और हाशिए की पहचान, राजकमल प्रकाशन, २०२१, पृ. ११७
१२. सिहाग, नरेश 'बोहल', बहुत तेज भागती है जिंदगी, किन्नर आधारित कहानियां, एस.एस. पब्लिकेशन, नई दिल्ली, २०२५, पृ. १२
१३. त्रिपाठी रमेश, हिंदी साहित्य में लिंग विमर्श, वाणी प्रकाशन, २०१८, पृ. ६२
१४. सिहाग, नरेश 'बोहल', बहुत तेज भागती है जिंदगी, किन्नर आधारित कहानियां, एस.एस. पब्लिकेशन, नई दिल्ली, २०२५, तेरे बस का नहीं–एक किन्नर की आत्मकथा' पृ. १५
१५. टूटे खिलौने का सफर, पृ. ५०

मो. 9370169371

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 164–171

शक, सातवाहन और कुषाण कालीन अभिलेखों में धार्मिक परंपराओं का निरूपण : एक ऐतिहासिक विश्लेषण

अमित कुमार पाण्डेय
शोधार्थी, जवाहरलाल नेहरू स्मारक पीजी कॉलेज महाराजगंज (सिद्धार्थ यूनिवर्सिटी)
डॉ. प्रवीण कुमार श्रीवास्तव
शोध निर्देशक, जवाहरलाल नेहरू स्मारक पीजी कॉलेज महाराजगंज (सिद्धार्थ यूनिवर्सिटी)

सारांश :

प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय इतिहास के उस युग का अध्ययन प्रस्तुत करता है, जब धर्म केवल आस्था का विषय न होकर शासन, समाज और संस्कृति की आत्मा था। ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से ईस्वी तीसरी शताब्दी तक का यह काल धार्मिक समन्वय, सहिष्णुता और सांस्कृतिक एकता का प्रतीक माना जाता है। अध्ययन में शक, सातवाहन और कुषाणकृइन तीन राजवंशों के अभिलेखों के माध्यम से धार्मिक विचारों, दान परंपराओं, लोकधर्म तथा शासन की नैतिक नीति का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है।

शोध का प्रमुख उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि विदेशी और स्वदेशी शासकों ने किस प्रकार भारतीय धार्मिक परंपराओं को आत्मसात कर, उसे लोककल्याण और सांस्कृतिक एकता के साधन के रूप में विकसित किया। अभिलेखीय साक्ष्य, जैसेकृगिरनार, नासिक, कार्ले, मथुरा, रबातक और अमरावती शिलालेख से यह सिद्ध होता है कि धर्म उस युग में समाज का एक जीवंत नैतिक बल था। यह अध्ययन ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक और तुलनात्मक पद्धति पर आधारित है, जिसमें प्राकृत, ब्राह्मी और संस्कृत लिपियों के अभिलेखों का गहन अध्ययन किया गया है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि शक, सातवाहन और कुषाण काल भारतीय इतिहास के वे अध्याय हैं जिन्होंने धर्म को समरसता, सह–अस्तित्व और सांस्कृतिक एकता का माध्यम बनाया। उनके अभिलेख केवल पत्थर पर अंकित शब्द नहीं, बल्कि भारतीय सभ्यता की आध्यात्मिक एकता के जीवंत साक्ष्य हैं।

मुख्य शब्द : धार्मिक परंपरा, अभिलेख विज्ञान, शक, सातवाहन, कुषाण, लोकधर्म, बौद्ध धर्म, ब्राह्मण धर्म, धार्मिक सहिष्णुता, सांस्कृतिक समन्वय, भारतीय इतिहास, गिरनार शिलालेख।

1. परिचय :

भारतीय इतिहास के विशाल परिप्रेक्ष्य में धर्म केवल आस्था या पूजा का विषय नहीं रहा, बल्कि वह सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक पहचान और राजनीतिक वैधता का मूलाधार रहा है। भारतीय सभ्यता की जड़ें उस गहरे आध्यात्मिक भाव में निहित हैं, जिसने मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र राजनीति, कला, साहित्य,

अर्थव्यवस्था और समाजकृको प्रभावित किया। प्राचीन भारत के विभिन्न कालखंडों में धर्म ने न केवल व्यक्ति के नैतिक जीवन का मार्गदर्शन किया, बल्कि शासन की नीतियों और सामाजिक संबंधों का भी निर्धारण किया।

इस काल के अभिलेख शिलालेख, ताम्रपत्र, मुद्राएँ और दानपत्र भारतीय धार्मिक जीवन के सबसे प्रामाणिक दस्तावेज हैं। इनसे यह स्पष्ट होता है कि धर्म उस समय राजनीतिक शक्ति का उपकरण नहीं था, बल्कि शासन और समाज के मध्य नैतिक सेतु के रूप में कार्य करता था। उदाहरणस्वरूप, शक शासक रुद्रदामन के गिरनार शिलालेख में "धर्मपालन" और "लोककल्याण" की भावना स्पष्ट झलकती है, सातवाहन गौतमिपुत्र शातकर्णी के नासिक अभिलेख में "धर्मनिष्ठा" और "दानशीलता" का उल्लेख है, और कुषाण सम्राट कनिष्क के रबातक अभिलेख में "देवपुत्र" की उपाधि लेकर उन्होंने धर्म को राजसत्ता के साथ एकीकृत किया। भारतीय अभिलेख, शास्त्र के प्रणेता डी.सी. सिरकार ने ठीक ही कहा है कि, "अभिलेख वे दस्तावेज हैं जिनमें प्राचीन भारत की आत्मा अंकित है।"

इन अभिलेखों में प्रयुक्त शब्दावली जैसे "धम्म, "दान, "संघ, "विहार, "देव, "धर्मपाल, "राजधर्म" यह संकेत देती है कि धर्म केवल धार्मिक आचार या अनुष्ठान नहीं था, बल्कि सामाजिक समरसता, नैतिकता और लोककल्याण का प्रतीक था। यही कारण है कि इन अभिलेखों के अध्ययन से भारतीय समाज की वह विशेषता प्रकट होती है, जिसमें विविध धार्मिक मतों और संप्रदायों के मध्य किसी प्रकार का वैमनस्य नहीं, बल्कि सह–अस्तित्व और समन्वय की भावना विद्यमान थी। इस शोध पत्र का उद्देश्य इन्हीं अभिलेखों के माध्यम से यह समझना है कि शक, सातवाहन और कुषाण कालीन धार्मिक परंपराएँ भारतीय समाज के सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों को किस प्रकार प्रतिबिंबित करती हैं। यह अध्ययन उसी आत्मा की खोज है, जो विविधता में एकता और धर्म में मानवता के दर्शन का परिचायक है।

2. शोध की आवश्यकता एवं उद्देश्य :

यह अध्ययन तीन महत्त्वपूर्ण उद्देश्यों पर आधारित है,

1. शक, सातवाहन और कुषाण कालीन अभिलेखों में निहित धार्मिक तत्वों, दान और लोकधर्म की प्रवृत्तियों का ऐतिहासिक विश्लेषण करना।
2. यह समझना कि विदेशी और स्वदेशी शासकों ने धर्म को कैसे अपनाया और उसके माध्यम से शासन की वैधता स्थापित की।
3. इन अभिलेखों के माध्यम से भारतीय धार्मिक सहिष्णुता, समन्वय और बहुलता की परंपरा का ऐतिहासिक विकास ज्ञात करना।

इस विषय की आवश्यकता इसलिए भी है कि भारत में धार्मिक सह, अस्तित्व की जड़ें केवल आधुनिक काल में नहीं बल्कि प्राचीन युग में ही स्थापित हो चुकी थीं। शक और कुषाण जैसे विदेशी शासक जब भारत आए तो उन्होंने यहाँ के देवताओं, शिव, विष्णु, बुद्ध और सूर्य को अपनी संस्कृति में आत्मसात कर लिया। सातवाहन शासकों ने एक ओर वैदिक धर्म और यज्ञ परंपरा को पुनर्जीवित किया तो दूसरी ओर बौद्ध संघों को भूमि दान और स्तूप निर्माण से सहयोग दिया। इस प्रकार यह शोध भारत की उस आध्यात्मिक एकता को प्रमाणित करता है जिसने विविध मतों और संप्रदायों को एक सूत्र में बाँधा।

3. स्रोत एवं शोध, पद्धति :

इस शोध में प्राथमिक स्रोत के रूप में अभिलेखीय साक्ष्यों का उपयोग किया गया है। इस अध्ययन में प्रयुक्त पद्धति मुख्यतः ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक, तुलनात्मक तथा अभिलेख–आधारित प्रमाणिक स्वरूप की है। अध्ययन के अंतर्गत अभिलेखों का विश्लेषण उनके ऐतिहासिक संदर्भ, भाषिक विशेषताओं तथा धार्मिक अभिप्रायों के आधार पर किया गया है। यह शोध अभिलेखों की प्रमाणिकता तथा उनके सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभावों के मूल्यांकन पर आधारित है। शोध की कालिक सीमा ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से लेकर ईस्वी तीसरी शताब्दी तक निर्धारित की गई है, जबकि भौगोलिक सीमा में पश्चिम भारत (गुजरात, महाराष्ट्र), दक्षिण भारत (आंध्र प्रदेश) तथा उत्तर भारत (गंधार, मथुरा) के क्षेत्र सम्मिलित हैं।

द्वितीयक स्रोतों के रूप में डी.सी. सिरकारङ, वी.वी. मिराशी[4], ए.एल. बाशम[5], रोमिला थापर[6] तथा उपिंदर सिंह[7] जैसे प्रमुख इतिहासकारों की कृतियों का उपयोग किया गया है।

4. शक कालीन अभिलेखों में धार्मिक परंपराएँ :

शक या पश्चिमी क्षत्रप राजवंश (ई.पू. 50 – ई. 250) भारत के पश्चिमी क्षेत्रों, विशेषतः गुजरात, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में सक्रिय रहा। इनके अभिलेखों में धार्मिक सहिष्णुता और लोककल्याण की गहरी छाप दिखाई देती है।

(क) गिरनार शिलालेख (रूद्रदामन, 150 ई.) :

यह संस्कृत भाषा में लिखा गया सबसे प्राचीन प्रशस्ति शिलालेख है। इसमें राजा रुद्रदामन द्वारा "धर्म" के पालन हेतु बाँध, झील और नहरों के निर्माण का उल्लेख है। यह "धर्म" शब्द किसी संप्रदाय विशेष के लिए नहीं बल्कि लोककल्याण की व्यापक भावना में प्रयुक्त हुआ है।[8]

(ख) नासिक अभिलेख (उषवदत्त का दान) :

नासिक की गुफाओं में मिले अभिलेख में शक शासकनहपानके मंत्री उषवदत्त द्वारा बौद्ध भिक्षु, संघ को भूमि दान और विहार निर्माण का विवरण है। यह प्रमाण है कि शक शासक बौद्ध धर्म के संरक्षण में सक्रिय थे।[9]

(ग) कार्ले और कन्हेरी गुफाएँ :

इन अभिलेखों से यह ज्ञात होता है कि व्यापारी और गहपति वर्ग ने भी संघों को उदारतापूर्वक दान दिया। अभिलेखों में "सेठी", "भद्रक", "गहपति" जैसे शब्द बार, बार आते हैं, जो धार्मिक दान की सामाजिक व्यापकता को दर्शाते हैं। शक अभिलेखों की एक विशेषता यह है कि इनकी भाषा प्राकृत होते हुए भी लिपि ब्राह्मी है, जो भारतीय संस्कृति में विदेशी शासकों के आत्मसात का प्रमाण है। धार्मिक दृष्टि से शक शासक किसी एक धर्म से नहीं जुड़े, बल्कि उन्होंने सभी परंपराओं को समान दृष्टि से देखा। उनके अभिलेखों में "धम्म", "दान", "संघ" जैसे बौद्ध शब्दों के साथ, साथ "देव, "राजधर्म" और "धर्मपाल" जैसे वैदिक प्रतीक भी मिलते हैं।

5. सातवाहन कालीन अभिलेखों में धार्मिक निरूपण :

सातवाहन राजवंश (ई.पू. 230 – ई. 220) का शासन दक्षिण, मध्य भारत में विस्तृत था। यह वह काल था जब बौद्ध धर्म का प्रसार तीव्र था और ब्राह्मण धर्म पुनः संगठित हो रहा था। सातवाहन शासक दोनों ही धाराओं के प्रति उदार दृष्टिकोण रखते थे।

(क) गौतमी पुत्र शातकर्णी और नासिक अभिलेख :

इस अभिलेख में उसकी माता गौतमी बालश्री द्वारा यह कहा गया है कि उनका पुत्र "धर्मनिष्ठ, सत्यप्रिय और दानशील" था। उसने ब्राह्मणों को भूमि दान दी तथा संघों को सहायता पहुँचाई। इससे पता चलता है कि राज्य और धर्म का संबंध नैतिक और सामाजिक दायित्व पर आधारित था।

(ख) कार्ले चैत्यगृह अभिलेख :

इस अभिलेख में व्यापारी संघों द्वारा स्तूप और चैत्य निर्माण के लिए दान का उल्लेख है। "सुतिस्स" नामक व्यापारी ने अपने पुत्र की स्मृति में यह दान किया। इससे यह सिद्ध होता है कि धर्म केवल शासकों का नहीं बल्कि सामान्य जनता का भी कार्य था।[10]

(ग) अमरावती और नागार्जुनकोंडा अभिलेख :

इन अभिलेखों से यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध धर्म दक्षिण भारत के समाज में गहराई से समाहित हो चुका था। सातवाहन शासकों ने अनेक विहारों और स्तूपों के निर्माण में योगदान दिया। साथ ही, उन्होंने ब्राह्मण धर्म के यज्ञों को भी पुनः प्रचलित किया।[4] सातवाहन अभिलेखों की भाषा प्राकृत है और लिपि ब्राह्मी जो यह दर्शाता है कि धार्मिक शिक्षाओं को जनता की भाषा में प्रस्तुत किया जाता था, जिससे धर्म लोकजीवन में व्याप्त हो सके।[11] धर्म के प्रति सातवाहन शासकों की नीति "समन्वय" की थी। उन्होंने बौद्ध धर्म को सम्मान दिया लेकिन साथ ही वैदिक कर्मकांडों को पुनर्जीवित किया। अभिलेखों में "अग्निहोत्र", "ब्राह्मणदान" और "वेदश्रवण" जैसे शब्द इस बात के साक्ष्य हैं।[5]

6. प्रारंभिक तुलनात्मक दृष्टि :

शक और सातवाहन दोनों कालों की तुलना करने पर कुछ समान और कुछ भिन्न प्रवृत्तियाँ स्पष्ट होती हैं।

समानताएँ :

दोनों ने दान और लोक कल्याण को धर्म का मूल माना। दोनों कालों के अभिलेखों में "दान", "धर्म", "संघ" और "विहार" जैसे शब्द समान रूप से प्रयुक्त हुए हैं। धर्म का स्वरूप करुणा, उदारता और जनसेवा से जुड़ा था।

भिन्नताएँ :

सातवाहन शासक मूलतः भारतीय थे, अतः उनके अभिलेखों में वैदिक धर्म की पुर्नस्थापना का प्रयास मिलता है। वहीं शक शासक विदेशी मूल के होते हुए भी भारतीय संस्कृति में समाहित हो गए और उन्होंने धर्म को वैश्विक समरसता के रूप में देखा। इन दोनों कालों में धर्म राजनीतिक शक्ति का साधन नहीं, बल्कि शासन की नैतिकता का आधार था। यही परंपरा आगे चलकर कुषाण काल में अपने चरम पर पहुँची, जहाँ धर्म और संस्कृति दोनों का वैश्विक रूप सामने आया।

7. कुषाण कालीन अभिलेखों में धार्मिक परंपराओं का निरूपण :

कुषाण साम्राज्य (लगभग ई. 78 से 250 तक) भारतीय इतिहास में धार्मिक सहिष्णुता, सांस्कृतिक समन्वय और अंतरराष्ट्रीय संपर्कों का एक उत्कर्ष काल माना जाता है। कुषाण शासक मूलतः मध्य एशिया के युची जनजाति से थे, परंतु भारत में प्रवेश के पश्चात उन्होंने भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं को आत्मसात कर लिया। विशेषतः कनिष्क जैसे शासक ने धर्म को राजनीतिक सत्ता के नैतिक आधार में परिवर्तित किया।

कुषाण काल के अभिलेख इस बात के प्रमाण हैं कि धर्म अब केवल आस्था का विषय नहीं, बल्कि शासन, कला, साहित्य और समाज के संगठन का भी आधार बन गया था। इस काल में संस्कृत भाषा का प्रयोग अभिलेखों में प्रारंभ हुआ, जो पूर्ववर्ती प्राकृत परंपरा से एक बड़ा परिवर्तन था। इससे यह संकेत मिलता है कि धर्म का स्वरूप अधिक औपचारिक, दार्शनिक और विद्वत्प्परक हो गया था।[6]

(क) रबातक अभिलेख :

अफगानिस्तान के रबातक स्थल से प्राप्त इस अभिलेख में कुषाण सम्राट कनिष्क की धार्मिक नीति का स्पष्ट उल्लेख है। इसमें लिखा है कि कनिष्क ने देवताओं की अनेक मूर्तियाँ स्थापित कीं और अपने शासन में देवपुत्र (देवों का पुत्र) की उपाधि धारण की। अभिलेख में 'देवा' शब्द कई बार आया है, जो बहुदेववादी दृष्टिकोण को दर्शाता है।[7] यह अभिलेख यह भी संकेत देता है कि कनिष्क ने अपने राज्य में बुद्ध, शिव, मित्र, नाना, विष्णु, और आर्दोक्शो जैसे विभिन्न देवताओं की पूजा को मान्यता दी थी। यह धार्मिक सहिष्णुता और सांस्कृतिक समागम की भारतीय परंपरा का उत्कृष्ट उदाहरण है।

(ख) मथुरा अभिलेख और बौद्ध धर्म का उत्कर्ष :

मथुरा क्षेत्र से प्राप्त अभिलेखों में बौद्ध धर्म के महायान मतके विकास के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। कनिष्क ने चौथी बौद्ध संगीति (कश्मीर, लगभग ई. 100) का आयोजन करवाया, जहाँ से महायान बौद्ध धर्म का विधिवत् प्रसार हुआ।[8] मथुरा अभिलेखों में "बोधिसत्व, "धम्मरक्षित" और "संगहबल" जैसे शब्द इस बात के द्योतक हैं कि इस काल में धर्म केवल आस्था नहीं बल्कि सामाजिक संगठन का माध्यम बन चुका था।

(ग) मुद्राओं और अभिलेखों में धार्मिक प्रतीक :

कुषाणों की मुद्राओं पर अनेक देवताओं के चित्र अंकित हैं, शिव, स्कंद, कुमार, मित्र, नाना, माओ (चंद्र देव), आर्दोक्शो (समृद्धि की देवी), बुद्ध, सूर्य आदि। यह दर्शाता है कि कुषाणों ने धार्मिक विविधता को अपने शासन की सांस्कृतिक नीति का अंग बनाया। इन मुद्राओं पर अंकित ग्रीक लिपिऔर खरोष्ठी लिपिका संयुक्त प्रयोग इस बात का प्रमाण है कि भारतीय धार्मिक प्रतीक अब अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का रूप ले चुके थे। कुषाण काल में धर्म का स्वरूप अत्यंत व्यापक था, गंधार कला और अमरावती शैली में मूर्तिकला का विकास हुआ, जिसमें बुद्ध की मानवीकृत मूर्तियाँ पहली बार प्रकट होती हैं। यह परिवर्तन बौद्ध धर्म के दार्शनिक स्वरूप को प्रतीकात्मक से मूर्त रूप में बदल देता है।

8. शक, सातवाहन और कुषाण काल का तुलनात्मक विश्लेषण :

जब इन तीनों कालों के अभिलेखों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है, तो कुछ प्रमुख ऐतिहासिक प्रवृत्तियाँ उभरकर सामने आती हैं।

(क) धार्मिक सहिष्णुता और समन्वय :

शक, सातवाहन और कुषाण, तीनों राजवंशों में धार्मिक उदारता समान रूप से विद्यमान थी। शकों ने बौद्ध धर्म का सम्मान किया, सातवाहनों ने ब्राह्मण और बौद्ध दोनों धर्मों को पोषित किया, और कुषाणों ने विभिन्न धर्मों के प्रतीकों को एक मंच पर ला खड़ा किया।

इन तीनों शासकों के अभिलेखों से यह स्पष्ट होता है कि भारत में धर्म कभी संघर्ष का नहीं बल्कि समन्वय का माध्यम रहा है।

(ख) दान की परंपरा और लोकधर्म :

तीनों कालों में दान को धार्मिक आचरण का केंद्रीय तत्व माना गया। "दानं धर्मस्य लक्षणम्" यह सिद्धांत अभिलेखों में बार, बार परिलक्षित होता है। नासिक, जुन्नर, कार्ले, सांची और मथुरा के अभिलेखों में व्यापारी, गृहस्थ, स्त्री और यहाँ तक कि सेवक वर्ग तक द्वारा विहार निर्माण और भूमि दान के उदाहरण मिलते हैं। इससे धर्म का लोकव्यापी स्वरूप स्पष्ट होता है।

(ग) भाषा और लिपि का विकास :

शक और सातवाहन अभिलेखों में प्राकृत भाषा का प्रयोग हुआ, जबकि कुषाणों ने संस्कृत को अभिलेखीय भाषा के रूप में स्थापित किया। यह परिवर्तन धर्म के शास्त्रीयकरण और औपचारिकता की दिशा में एक बड़ा कदम था। लिपि के रूप में ब्राह्मी का विकास और प्रसार तीनों कालों में समान रूप से हुआ, जबकि उत्तर, पश्चिमी क्षेत्रों में खरोष्ठी लिपि का भी प्रयोग देखा गया।

(घ) धर्म और राज्य का संबंध :

इन तीनों राजवंशों ने धर्म को शासन की नैतिक नींव माना। शक शासक रुद्रदामन ने अभिलेखों में "धर्म पालन" को राजकीय कर्तव्य बताया, सातवाहन शासक गौतमि पुत्र शातकर्णी को "धर्मनिष्ठ" कहा गया, और कुषाण सम्राट कनिष्क ने स्वयं को "देवपुत्र" कहकर धर्म को राजसत्ता के साथ एकीकृत किया।[4] इससे यह स्पष्ट होता है कि धर्म और राजनीति भारतीय परंपरा में एक, दूसरे के पूरक रहे हैं।

(ङ) धार्मिक प्रतीक और कला का विस्तार :

तीनों कालों में धार्मिक प्रतीकवाद ने कला और स्थापत्य में अभूतपूर्व विकास किया। शक और सातवाहन काल में स्तूप, विहार और चैत्य की परंपरा विकसित हुई, जबकि कुषाण काल में मूर्तिकला और बौद्ध कला अपने शिखर पर पहुँची।[5]

9. भारतीय धार्मिक इतिहास में इन कालों का योगदान :

शक, सातवाहन और कुषाण काल ने भारतीय धर्म के विकास को नई दिशा प्रदान की। इनके योगदान को निम्न रूपों में समझा जा सकता है :

(क) धर्म का लोकव्यापीकरण :

अभिलेखों से ज्ञात होता है कि इस युग में धर्म का केंद्र केवल राजमहल या मंदिर नहीं, बल्कि समस्त समाज था। व्यापारी, स्त्रियाँ, किसान और गृहस्थ, सभी धर्म में सक्रिय रूप से सहभागी बने। "दान" और "संघ" के उल्लेखों ने धर्म को सामाजिक कर्तव्य का रूप दे दिया।[6]

(ख) बौद्ध धर्म का महायान रूपांतरण :

सातवाहन और कुषाण काल में बौद्ध धर्म में एक नया आयाम जुड़ा, महायान परंपरा का विकास। कनिष्क द्वारा आयोजित चौथी संगीति ने बौद्ध दर्शन को तर्कशास्त्रीय और आचारिक रूप से समृद्ध किया।[7]

(ग) ब्राह्मण धर्म का पुनरूत्थान :

सातवाहन शासकों ने वैदिक अनुष्ठानों और यज्ञों को पुनः प्रतिष्ठित किया। "अग्निहोत्र", "ब्राह्मणदान", "वेदश्रवण" जैसे शब्द उनके अभिलेखों में बार, बार मिलते हैं। यह पुनरुत्थान बौद्ध धर्म के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं बल्कि सह, अस्तित्व की भावना लिए था।[8]

(घ) धर्म का सांस्कृतिक समन्वय :

कुषाण काल में यूनानी, ईरानी और भारतीय देवताओं की सम्मिलित उपासना का प्रमाण मिलता है। यह "सांस्कृतिक संगम" भारत की उस परंपरा का प्रतीक है जो विविधता में एकता का संदेश देती है।

(ङ) धर्म और कला का अद्वैत :

गंधार और मथुरा शैली की मूर्तिकला, अमरावती के स्तूप, अजंता की चित्रकला, इन सब में धर्म और सौंदर्य का समन्वय हुआ। अभिलेखों में जिन धार्मिक निर्माणों का उल्लेख है, वे भारतीय कला के विकास की आधारशिला बने।

10. निष्कर्ष :

शक, सातवाहन और कुषाण कालीन अभिलेख केवल धार्मिक या प्रशासनिक दस्तावेज नहीं हैं, बल्कि वे उस युग की सांस्कृतिक आत्मा के साक्षी हैं। इन अभिलेखों से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय सभ्यता की मूल प्रवृत्ति समन्वय और सहिष्णुता है। शक शासक विदेशी मूल के होते हुए भी भारतीय धर्म और संस्कृति में पूरी तरह रच, बस गए। उन्होंने बौद्ध धर्म के संघों और विहारों को प्रोत्साहन दिया। सातवाहन शासकों ने वैदिक धर्म को पुनर्जीवित करते हुए बौद्ध धर्म को भी समान आदर दिया, जिससे धार्मिक एकता और सामाजिक स्थिरता को बल मिला। कुषाण शासकों ने भारतीय, यूनानी और ईरानी प्रतीकों को मिलाकर धर्म को वैश्विक दृष्टिकोण प्रदान किया।

इन तीनों राजवंशों के काल में धर्म न तो सत्ता का उपकरण था और न ही दमन का साधन, वह समाज और शासन के नैतिक आदर्श के रूप में विद्यमान था। भारतीय अभिलेखों में अंकित "दान", "संघ", "विहार", "धर्मपालन" और "देवपुत्र" जैसे शब्द केवल ऐतिहासिक संकेत नहीं बल्कि उस आत्मा के प्रतीक हैं जिसने भारत को "सर्व धर्म संभाव" की भावना से ओतप्रोत किया। अतः यह कहा जा सकता है कि शक, सातवाहन और कुषाण कालीन अभिलेख भारतीय इतिहास में धार्मिक समन्वय, लोककल्याण और सांस्कृतिक एकता की शाश्वत परंपरा के जीवंत प्रमाण हैं।

संदर्भ सूची :

1. डी.सी. सिरकार, भारतीय अभिलेख विज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 1966, पृ. 9।
2. ए.एल. बाशम, भारत का अद्भुत अतीत, नई दिल्ली, 2004, पृ. 178।
3. डी.सी. सिरकार, भारतीय अभिलेख विज्ञान, पृ. 154।
4. वी.वी. मिराशी, सातवाहन एवं पश्चिमी क्षत्रपों के अभिलेख, महाराष्ट्र शासन प्रकाशन, 1981, पृ. 45।
5. ए.एल. बाशम, वही, पृ. 183।
6. रोमिला थापर, प्राचीन भारत का इतिहास, पेंग्विन बुक्स, नई दिल्ली, 2002, पृ. 247।
7. उपिंदर सिंह, प्राचीन एवं आरंभिक मध्यकालीन भारत का इतिहास, पियर्सन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 321।
8. ई. हुल्ट्स्च, एपिग्राफिया इंडिका, खंड टप्प्, 1905, पृ. 35।
9. वी.वी. मिराशी, वही, पृ. 78।
10. जी. बूहलर, इंडियन एंटीक्वरी, खंड–X, 1881, पृ. 234।

11. आर.जी. भंडारकर, डीकन का प्राचीन इतिहास, बॉम्बे यूनिवर्सिटी प्रेस, 1951, पृ. 67।
12. वी.वी. मिराशी, सातवाहन अभिलेख, पृ. 112।
13. डी.सी. सिरकार, भारतीय अभिलेख संग्रह, खंड II, पृ. 67।
14. रोमिला थापर, कल्चरल पास्ट्स, ऑक्सफोर्ड, 2003, पृ. 193।
15. के.ए. नीलकंठ शास्त्री, दक्षिण भारत का इतिहास, ऑक्सफोर्ड, 1955, पृ. 92।
16. डी.सी. सिरकार, भारतीय अभिलेख विज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 1966, पृ. 201।
17. ए.के. नारायण, कुषाणों का भारत में राज्य और संस्कृति, नई दिल्ली, 1975, पृ. 119।
18. बी.एन. मुखर्जी, अभिलेखों में धर्म और राज्य का संबंध, कलकत्ता विश्वविद्यालय, 1982, पृ. 87।
19. रोमिला थापर, कल्चरल पास्ट्सरू निबंध संग्रह, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2003, पृ. 193।
20. ए.एल. बाशम, भारत का अद्भुत अतीत, पिकाडोर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004, पृ. 184।
21. उपिंदर सिंह, प्राचीन एवं आरंभिक मध्यकालीन भारत का इतिहास, पियर्सन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 329।
22. वी.वी. मिराशी, सातवाहन एवं पश्चिमी क्षत्रपों के अभिलेख, महाराष्ट्र शासन प्रकाशन, मुंबई, 1981, पृ. 105।
23. के.ए. नीलकंठ शास्त्री, दक्षिण भारत का इतिहास, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1955, पृ. 92।
24. आर.जी. भंडारकर, डीकन का प्राचीन इतिहास, बॉम्बे यूनिवर्सिटी प्रेस, 1951, पृ. 67।
25. ई. हुल्ट्स्च, एपिग्राफिया इंडिका, खंड VIII, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, 1905, पृ. 35।
26. जी. बूहलर, इंडियन एंटीक्वरी, खंड X, 1881, पृ. 234।
27. रोमिला थापर, प्राचीन भारत का इतिहास, पेंग्विन बुक्स, नई दिल्ली, 2002, पृ. 247।
28. डी.सी. सिरकार, भारतीय अभिलेख संग्रह, खंड II, पृ. 112।
29. ए.एल. बाशम, भारत का अद्भुत अतीत, वही, पृ. 189।
30. उपिंदर सिंह, प्राचीन भारत की सांस्कृतिक धारा, नई दिल्ली, 2010, पृ. 214।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 172–180

Inflation Dynamics in India : An Empirical Analysis of Price Movements, Climate Impact, and Policy Responses (FY24–FY25)

Saba Ashraf
Research Scholar,
AISECT University, Hazaribagh.

Abstract :-

The analysis reviews recent inflation trends in India over the fiscal year FY24–FY25, sourced from government data in the Economic Survey 2024–25 and related public resources. The paper investigates core and food inflation dynamics, extreme weather impact on agriculture prices, and policy implications on stabilized price policies. The findings show that overall retail inflation has decreased from 5.4% in FY24 to 4.9% in FY25; however, food inflation remains high, mainly due to volatility in vegetables and other pulses. The analysis identifies climate variability, such as heatwaves and non-uniform precipitation, as a major contributor to price volatility. It also argues that government actions, such as buffer stocking, subsidized sales, and relaxed imports, provided short-term relief but will require greater resolution surrounding structural agricultural reform and resilient supply chains. In conclusion, the paper argues that moving towards longer-term price stability will require the ongoing integration of climate-resilient agriculture, reliable monitoring data, and institutional coordination between fiscal and monetary authorities.

Keywords :- Inflation, Food Prices, Climate Change, Agricultural Policy, Economic Survey 2024–25, India

Introduction :-

Inflation in India has continued to be one of the most important indicators of economic stability. The Economic Survey 2024–25 suggests that although global inflation reached 8.7% in 2022, due to supply chain disruptions and a geopolitical context, it had moderated to 5.7% in 2024, as global commodity prices eased (Economic Survey, 2024–25, p.118). In India, retail inflation, measured by the Consumer Price Index (CPI) has decreased from 5.4% in FY24 to 4.9% in FY25

(April-December), despite food segment pressures (MoSPI 2025). Food inflation continues to be a persistent issue as a result of a small number of commodities, mostly due to the impact from vegetables, pulses and edible oils. The Consumer Food Price Index (CFPI) shows the disproportionate effect of these commodities on headline inflation. Additionally, food or core inflation has reached a decade low with the help of monetary management implemented by the Reserve Bank of India (RBI, 2024). Climate extremes have also been a definitive feature of this recent inflationary cycle. Between 2022 and 2024, India saw an unprecedented increased frequency of heatwaves and unseasonal rainfall, resulting in crop losses across some major horticultural states (IMD, 2024; CSE & Down to Earth, 2024). For perishable crops such as onion, tomato and pulses, the impact of these events resulted in a pronounced increase in consumer prices.

Literature review :-

Anand, Kumar, and Tulin 2016) : Demonstrate that food inflation in India has been consistently high for both demand-side and supply-side reasons: higher per capita incomes increased demand for higher-value foods, along with slow growth in food supplies and inadequate buffers. The authors summarize analyses up to 2014, and find that without stronger supply-side responses (for example improved agricultural productivity, better systematic buffer stock policies) that meet the demands, food inflation could average 2½ to 3 percentage points above non-food inflation annually. This demonstration of a dual causation framework is significant as it reveals a combination of demand-pull factors (higher incomes, changing diet) and cost-push or supply-constrained factors (weather, production lags, storage losses). The implication is that responses require policy interventions to meet both.

Bhattacharya & Sen Gupta (2017) : Analyse food inflation in India for the period of 2006-2013, including agricultural wage inflation as a common driver of food commodities inflation, particularly since the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA). The authors find that the increase in farm wages was a stronger influence on food inflation than fuel inflation or international prices for the other items in the index (other than the trade-able items) . This line of research further highlights that supply-side cost pressures (and not solely quantity constraints) are important; specifically, higher wages will increase costs of production, harvesting, and transportation, which would eventually be seen in consumer prices. You may want to keep the wage?cost dimension in mind when analyzing inflation for FY24-FY25.

Diwakar (2025) : Shows significant seasonal fluctuations in the inflation rates of vegetables, fruits, and pulses, as this volatility [often] stems from weather, transport or storage bottlenecks, and uneven commodity supply. The findings conclude that price pressures were strongest in lean seasons,

that perishables had a larger rate of storage loss, and that policy responses very seldom seem to take into account characteristics by commodity. These insights are useful in your case because they help to explain why certain food items, like onion, tomato, and pulses, may contribute greatly to headline food inflation even if their dollar weight in the consumer price index basket is small - purely because of their volatility. They further mean that you might want to draw attention to such commodity?level effects in your analysis as well.

Richard Mahapatra, (2024) : States that climate variability - heatwaves, erratic rain, supply shocks - has changed food inflation from a transitory problem to a more chronic one. According to the article, between June 2020 and June 2024, 57% of the months had food inflation above 6%. The article concludes that climate supply shocks are creating longer lasting inflationary pressures. Since your analysis covers FY24-FY25 period, this literature suggests that climate supply shocks may have an important role in your analysis of inflation persistence, and it is appropriate to include weather/ supply-shock variables in your interpretation.

Sen Gupta et al., (2014) : This research demonstrates breaks in the structure of food price inflation behaviour, increased persistence to shocks, and possible pass-through effects to general inflation measures. This suggests that it is important in your work to think through inflationary spill-overs (food to other sectors) and policy responses: inflation is more than just a transitory price shock, it can also be persistent and significant in a macroeconomic sense.

Gaps in the Literature :-

Much of the previous work is focused on timeframes up to 2013-2019. Limited work has emerged recently that specifically fits the timeframes of FY24-FY25, with its unique climate and supply-shock characteristics. There is relatively little work on commodity - level studies for key commodities like pulses, onion, tomato, still in the most recent years. The integration of climate/ weather variables into inflation models specifically for India is new and limited. There remains interest in linking national CPI/food inflation series with micro data on supply-chain disruptions, disruptions and policy responses from recent years. Your work addresses these gaps by providing recent dates, focusing on climate/supply side, commodity specific, and policy.

Research objectives :-

- To analyze trends and determinants of retail and food inflation in India for FY24 - FY25 taking into account a special focus on Core inflation, supply side aspects and monetary policy.
- To analyze the extent of extreme weather events and government interventions on price fluctuation of key agricultural commodities such as onion, tomato and pulses.

Research Methodology :-

Research design :- For this study, a descriptive and analytical research design was selected. Although it involves using interpretive evaluation and secondary quantitative data analysis, this design allows the researcher to understand the structural causes of inflation and policy responses to it in FY24–FY25.

Data Sources :- All the data and data information used in this research is sourced from official and credible sources: Economic Survey 2024–25, Chapter 4: "Prices and Inflation – Understanding the Dynamics. Supporting datasets from official sources are Ministry of Statistics and Programme Implementation (MoSPI): Consumer Price Index and Wholesale Price Index datasets (FY24–FY25). Reserve Bank of India (RBI): Reports of the Monetary Policy Committee, FY25. Indian Meteorological Department (IMD): Climate summaries and heatwave frequency, 2024. Climate India 2024 report by Centre for Science and Environment (CSE) and Down to Earth (DTE) on extreme weather and crop damage. World Bank (2024) and IMF (2025): Forecasts for global inflation and commodity prices. Press Information Bureau (PIB): Government announcements about buffer stocks, imports and controlling food prices (June–December 2024).

Data Collection Method :- The study relied entirely on secondary data collection, using publicly available data and reports provided by government ministries and multilaterals. In terms of quantitative data, the researcher only interpreted charts and figures from the Economic Survey. In terms qualitative data, the researcher only used policy measures and discussions of outlook.

Data Analysis Tools :- Trend analysis: analyzing the trend of CPI, CFPI and core inflation on a yearly basis. Comparative analysis: comparing India's inflation with global averages.

Correlation analysis :- correlating the frequency of extreme weather events with food inflation trends (based on Chart IV.10 of the Economic Survey).

Descriptive tables :- presenting the contribution of key commodities to overall inflation.

Limitations :-

- The analysis is limited to the period FY24 - FY25 (for FY26 data was not available yet).
- The study is conducted using secondary data and may be subject to revisions occurring in the official data sources.
- Regional microlevel data is not analyzed, since data is aggregated in national.

Data analysis and interpretation :-

Research objectives :-

- To analyze trends and determinants of retail and food inflation in India for FY24 - FY25 taking into account a special focus on Core inflation, supply side aspects and monetary policy.

- To analyze the extent of extreme weather events and government interventions on price fluctuation of key agricultural commodities such as onion, tomato and pulses.

Trend Analysis of Retail and Food Inflation in India :-

The trend analysis of inflation shows that India's retail inflation, measured by Consumer Price Index (CPI), moderated from 5.4% in FY24 to 4.9% (April- December) in FY25, highlighting significant moderation of Core inflation, and the intervention/strategic policies taken by the Reserve Bank of India and the central government respectively (Economic Survey, 2024-25). Worldwide, inflation also fell from 8.7% in 2022 to 5.7% in 2024, aided by a synchronised tightening of monetary policy and supply easing for commodities (IMF, World Economic Outlook Update, 2025). This occurrence of global disinflation contributed to keeping inflation in India stable. In India, easing wholesale price inflation (–0.7% in FY24) also contributed to lower input costs, which further eased pressures for retail prices (MoSPI, 2025).

Key inflation indicators (2024-25)

Indicator	FY24	FY25(April - Dec)	Change	Source
Retail inflation (CPI)	5.4%	4.9%	Decline by 0.5%	MoSPI, 2025
Core inflation	4.8%	3.9%	Decline by 0.9%	Economics survey 2024-25
Food inflation (CFPI)	8.4%	8.4%	Table	MoSPI
Wholesale price inflation	- 0.7%	Low and stable	-	MoSPI
Global inflation	8.7% (2022)	5.7% (2024)	Decline by 3.0%	IMF(2025)

Sources : Economics survey 2024-25

This above table indicates that while global inflation expectations softened, much of India inflation was driven by food items, with vegetables and pulses being central drivers to food inflation.

Food inflation: vegetables nd pulses role :-

Data revealed not only that vegetables and pulses—even though they constituted only 8.42%

of the CPI basket—were responsible for 32.3% of total inflation in FY25 (April–December). Had those items been stripped off the CPI basket, headline inflation would be at 3.2%, down from 4.9% (Economic Survey, FY 2024-25, p.121). Price volatility in onions and tomatoes was primarily due to erratic monsoon, disruptions to supply chains, and heatwaves that affected both production and post-harvest holding (IMD, 2024).

Commodity specific in inflation

Commodity	Inflation Trend	Key cause	Share in CPI(%)	Contribution in total inflation(%)	Source
Vegetables	Sharp increase	Extreme weather, monsoon irregularities	6.0	24.5	MoSPI
Pulse(tur-urad)	Rising	Production shortform, delayed harvest		7.8	MoFW
Cereals	Stable	Adequate supply	9.7	8.0	MoSPI
Oils and fats	Decline	Decline	3.6	2.2	MoSPI
Milk and sugar	Moderate rice	Moderate rise	6.6	4.0	MoSPI

Sources : Economics survey 2024-25

This indicates that food inflation in India is quite concentrated, characterized by a few dominant commodities instead of widespread price increases

Effect of Severe Weather Incidents on Inflation :-

The report cited that India saw a drastic increase in the number of heatwave days, rising from 5% of a year (2020 - 2021) - to 18% from 2022 to 2024. In parallel, crop area damage jumped to 3.5 million hectares in 2024 - from 1.2 million hectares in 2022 - creating significant supply chain disruptions on perishable food items. (IMD & CSE/DTE, 2024.) There was a strong correlation between the number of days of severe weather events and vegetable inflation up to three months after

the event took place. (Economic Survey, 2024 - 2025, p. 124)

Weather Impact and Inflation Correlation (2022–2024)

Year	Percentage of days with heatwaves	Crop area damaged(million ha)	Vegetable inflation percentage	Source
2022	12%	1.5	6.8	IMD, 2024
2023	23%	2.4	8.1	IMD, CSE, 2214
2024	18%	3.5	9.2	MoSPI, 2025

Sources : Economics survey 2024-25

This confirms that climate variability has a direct effect on food price inflation in India, especially in the case of perishable crops.

Government interventions and price stabilization :-

The government engaged in various administratively interventions to lessen food inflation, for example, the implementation of :

- Stock limits on wheat, pulses and onion.
- Subsidized sale of onion at ?35/kg and tomato at ?65/kg between September and December 2024.
- Buffer stocking of onions at 4.7 lakhs metric tonnes.
- Duty free imports of tur, urad, masur, and yellow peas in price control of pulses. (PIB, 2024)

While these measures helped curb speculation and hoarding, and add temporary relief on consumer prices.

Outlook and Understanding :-

The RBI and IMF estimate that CPI inflation in India could be back within the target band of 4% ± 2% by FY26, again assuming average seasonal monsoons and negligible external shocks (as per RBIMPC Report, Dec 2024; IMF 2025). The World Bank Commodity Outlook (Oct 2024) estimates a decline in global commodity prices of 5.1% in 2025 which could help alleviate the added inflationary pressures from higher import prices. There are still risks from unexpected fluctuations in global oil prices and the ongoing vulnerability of vegetable supply chains to climate shocks

Interpretative Summary :-

- **Core Inflation Stability :** Core Inflation declined to 3.9%, suggesting, that the monetary regime is operating effectively, with reduced external shocks.
- **Food Inflation Persistence :** Food inflation remains structurally high due to localised supply shocks, instead of broad based demand driven pressures.
- **Climate Sensitivity :** The strength of the relationship between weather variability and crop prices demonstrates agricultural exposure and vulnerability to climate shocks, and calls for policies that help develop climate resilience.
- **Policy Responsiveness :** Government responses — especially price stabilization funds, and relaxing imports — were somewhat effective in the short-term, but require long-term structural work.

Conclusion and Policy Implications :-

The results indicate that inflation in India over FY24–FY25 exhibited a dual trend: moderation in the overall price level, along with sustained food inflation. Headline inflation had fallen from 5.4% to 4.9%, even though food price stability was disrupted by supply shocks linked to climatic shocks.

The key findings include :-

- **Climate Connectivity :** The frequency of extreme weather events such as heatwaves, floods, and unseasonal rain sharply increased, tendering damage to 3.5 million hectares of crops in 2024 and contributing to vegetable inflation (IMD, 2024; CSE, 2024).
- **Commodity Concentration :** A small number of food items—specifically onion, tomato, and pulses—accounted for over 30% of overall inflation (Economic Survey, 2024–25).
- **Policy Effectiveness :** Government intervention using stock limits, imports, and subsidized sales provided temporary stability, however, long term resilience requires structural intervention.
- **Monetary Coordination :** Core inflation moderation to 3.9% highlights the effective cooperation of monetary policy by the RBI.

Policy Recommendations :-

- Develop climate-resilient crops for pulses and vegetables to decrease production volatility.
- Increase cold-chain and storage capacity to reduce post-harvest losses.
- Institutionalize real-time price data visualizations linked from farmgate to retail markets.
- Promote producer organizations (FPOs) and cooperatives to enhance supply chains.
- Deepen fiscal-monetary cooperation to cope with imported inflation and commodity shocks.

References :-

1. Anand, R., Kumar, N., & Tulin, V. (2016). Understanding India's food inflation: the role of demand and

supply factors. IMF Working Paper, 16(2), 1. https://doi.org/10.5089/9781513581347.001

2. Bhattacharya, R., & Sen Gupta, A. (2017). Drivers and impact of food inflation in India. Macroeconomics and Finance in Emerging Market Economies, 11(2), 146–168.
3. Centre for Science and Environment & Down to Earth. (2024). Climate India 2024: An assessment of extreme weather events.
4. "Decoupling Climate-Induced Food Inflation from General Inflation in India." (2024).https://papers.ssrn.com/sol3/Delivery.cfm/5150432.
5. Diwakar, P. K. (2025). Seasonal variation in food inflation: A study of agricultural commodities in India. Journal of Informatics Education and Research, 5(1s).
6. Economic Survey. (2024–2025). Chapter 4: Prices and inflation – Understanding the dynamics. Ministry of Finance, Government of India.
7. Indian Meteorological Department. (2024). Annual Climate Summary 2024. Ministry of Earth Sciences, Government of India.
8. International Monetary Fund. (2025, January). World economic outlook update – Global growth: Divergent and uncertain.
9. Ministry of Statistics and Programme Implementation (MoSPI). (2024–2025). Consumer Price Index and Wholesale Price Index data. Government of India.
10. Mitra, S. K., & Chattopadhyay, M. (2016). The nexus between food price inflation and monsoon rainfall in India: exploring through comparative data mining models. Climate and Development, 9(7), 584–592. https://doi.org/10.1080/17565529.2016.1174662
11. Press Information Bureau (PIB). (2024). Government measures for food price stabilisation (Various releases, June–December 2024).
12. Reserve Bank of India. (2024, December). Monetary Policy Committee Report FY25.
13. Reserve Bank of India. (2024). Climate change is making food inflation 'endemic' in India. Down to Earth. https://www.downtoearth.org.in/climate-change/climate-change-is-making-food-inflation-endemic-in-india-2
14. Roy, R., Gupta, S., Wardhan, H., Sarkar, S., Tewari, S., Bansal, R., & Gulati, A. (2024). Vegetables inflation in India: A study of tomato, onion and potato. https://agritech.tnau.ac.in/govt_schemes_services/pdf/tomato%2C%20onion%20and%20potato.pdf
15. Samal, A., Ummalla, M., & Goyari, P. (2022). The impact of macroeconomic factors on food price inflation: Evidence from India. Future Business Journal, 8(15). https://fbj.springeropen.com/articles/10.1186/s43093-022-00127-7
16. Sen Gupta, A., Bhattacharya, R., & Rao, N. (2014). Understanding food inflation in India. South Asia Working Paper No. 26. https://mpra.ub.uni-muenchen.de/58319/
17. World Bank. (2024, October). Commodity markets outlook.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 181-186

राजस्थान की लोक कथाओं में छुपी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान

डॉ. मरजीना, शोध पर्यवेक्षक एवं विभागाध्यक्ष (कला संकाय)
नीतू पारीक, शोधार्थी
मौलाना आज़ाद विश्वविद्यालय, जोधपुर।

सारांश :

राजस्थान की लोक कथाएँ राज्य की ऐतिहासिक चेतना, सांस्कृतिक विरासत और सामाजिक जीवन का जीवंत दर्पण हैं। सदियों से मौखिक परंपरा के रूप में संचित और पीढ़ी–दर–पीढ़ी प्रसारित ये कथाएँ न केवल मनोरंजन का साधन रही हैं बल्कि राजस्थानी समाज की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने का माध्यम भी बनी हैं। इस शोध पत्र का उद्देश्य राजस्थान की लोक कथाओं में निहित उन तत्वों का विश्लेषण करना है जो क्षेत्रीय सांस्कृतिक विशिष्टता को निर्माण, संरक्षण और प्रसार प्रदान करते हैं।

इन कथाओं में राजपूताना वीरता, सामूहिकता, सम्मान–धर्म, परंपरागत रीति–रिवाज, लोक आस्थाएँ, प्रकृति के साथ सामंजस्य, स्त्री–शक्ति, कष्ट–सहनशीलता, लोक–नैतिकता तथा सामाजिक संतुलन जैसे प्रमुख आयाम अत्यंत प्रखर रूप से उभरते हैं। पाबूजी, देव नारायण, तेजाजी, गोगाजी जैसे लोक नायकों की कथाएँ सामुदायिक संरचनाओं में विश्वास, वफादारी और त्याग की संस्कृति को अभिव्यक्त करती हैंय वहीं ढोला–मारू, ढोली–मारवाड़, रूपक–गाथाएँ प्रेम, सौंदर्य, संघर्ष और मानवीय भावनाओं की गहराई को दर्शाती हैं। लोकदेवताओं की कथाएँ विशिष्ट धार्मिक–सांस्कृतिक प्रतिमानों को रेखांकित करती हैं जो राजस्थान की पहचान को अन्य क्षेत्रों से अलग विशेष परंपरागत रूप देते हैं। इसके अतिरिक्त, कथाओं में वर्णित भूगोल–रेगिस्तान, अरावली, बारहमासी सूखा, चरवाहों का जीवन, किले–गढ़, रोहटों और ढाणियों का सांस्कृतिक परिवेश–राजस्थान की विशेष जीवन–शैली को अभिव्यक्त करता है। भाषा, मुहावरे, कहावतें, लोकगीत और विशेष कथन–शैली (जैसे मांडा, पड, कथा–वादन) इन कथाओं को सांस्कृतिक रूप से और अधिक विशिष्ट बनाती है। यह शोध यह भी दर्शाता है कि लोक कथाएँ केवल अतीत की सांस्कृतिक चेतना ही नहीं हैं, बल्कि आज भी वे सामाजिक समरसता, स्थानीय पहचान और सांस्कृतिक गौरव को बनाए रखने की महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

बीज शब्द : राजस्थान, लोक कथाएँ, संस्कृति, समाज, नैतिकता, वीरता, परंपराएँ, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक संरक्षण।

परिकल्पना :

1. राजस्थान की लोक कथाएँ केवल मनोरंजन का साधन नहीं हैं, बल्कि समाज की सांस्कृतिक और सामाजिक संरचना का जीवंत चित्रण करती हैं।
2. ये कथाएँ नैतिकता, वीरता, और सामाजिक मूल्यों को प्रोत्साहित करती हैं, जो तत्कालीन और आधुनिक समाज दोनों के लिए प्रासंगिक हैं।
3. लोक कथाएँ राजस्थान की धार्मिक सहिष्णुता और सांस्कृतिक समन्वय को दर्शाती हैं, विशेष रूप से हिंदू, जैन, और सूफी परंपराओं के मिश्रण के माध्यम से।
4. आधुनिक युग में डिजिटल और शैक्षिक मंचों के उपयोग से लोक कथाओं का संरक्षण और प्रचार संभव है, जिससे सांस्कृतिक पहचान बनी रहेगी।
5. लोक कथाएँ राजस्थानी साहित्य और कला को समृद्ध करती हैं, साथ ही सामाजिक एकता और समरसता को बढ़ावा देती हैं।

परिचय :

राजस्थान की लोक–कथाएँ इस प्रदेश की ऐतिहासिक स्मृति, सांस्कृतिक चेतना और सामाजिक जीवन की जड़ित परंपराओं का जीवंत दस्तावेज हैं। मरुस्थलीय जीवन के अनुभवों, वीर–गाथाओं, लोक–देवताओं के चरित्र, स्त्री–शक्ति, लोक–नैतिकता, जातीय मान्यताओं तथा पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं को लोक–कथाएँ पीढ़ी–दर–पीढ़ी संप्रेषित करती रही हैं। इन कथाओं में निहित कथानक, पात्र, प्रतीक, भाषिक शैली और लोक–विश्वास राजस्थान की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान को स्वर और सौंदर्य प्रदान करते हैं। राजस्थान के अलग–अलग क्षेत्रों–मारवाड़, मेवाड़, शेखावाटी, ढूंढाड़, मेव, हाड़ौती की लोक–कथाएँ अपने–अपने भूगोल, बोली, जीवन–रीति और ऐतिहासिक संदर्भों के कारण विविध रूपों में विकसित हुई हैं, परंतु सांस्कृतिक आधारसूत्र समान है। इन कथाओं में सामाजिक एकजुटता, प्रतिरोध और नैतिकता के संदेश तथा स्त्री–शौर्य के उदाहरण स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। इन कथाओं का मूल उद्देश्य केवल मनोरंजन करना नहीं, बल्कि सामुदायिक मूल्यों, नैतिक आदर्शों और सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखना भी है।विशेष रूप से राजस्थान की लोक–कथाएँ परंपरा और आधुनिकता के बीच सेतु का कार्य करती हैं। कथाओं में वर्णित जीवन–दर्शन, प्रतीकात्मकता, कठोर भौगोलिक परिस्थितियों के बीच मनुष्य का संघर्ष, प्रकृति के प्रति आदर और सामुदायिक सहअस्तित्व की भावनाएँ राजस्थान की सांस्कृतिक विशिष्टता को परिभाषित करती हैं। लोक–कला, लोक–गीत, फड़–चित्रण, नृत्य–नाट्य और मौखिक परंपरा के माध्यम से इन कथाओं का जीवंत रूप लगातार बदलते समय में भी स्थायी बना हुआ है।

राजस्थान, जिसे 'वीरों की भूमि' के रूप में जाना जाता है, अपनी रंग–बिरंगी संस्कृति और गौरवशाली इतिहास के लिए विश्व प्रसिद्ध है। यहाँ की लोक कथाएँ राजस्थान के समाज और संस्कृति का एक अभिन्न अंग हैं। ये कथाएँ पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप से संचरित होती आई हैं और आज भी गाँवों के चौपालों, मेलों, और उत्सवों में सुनाई जाती हैं। ये न केवल मनोरंजन का साधन हैं, बल्कि सामाजिक शिक्षा, नैतिकता, और सांस्कृतिक मूल्यों को संप्रेषित करने का माध्यम भी हैं। इस लेख का उद्देश्य राजस्थान की लोक कथाओं में निहित सांस्कृतिक और सामाजिक तत्वों का गहन विश्लेषण करना है।

राजस्थान की लोक कथाएँ रेगिस्तान की सुनहरी रेत में बिखरे रत्नों की तरह हैं, जो इतिहास, संस्कृति

और सामाजिक मूल्यों को जीवंत रूप में उकेरती हैं। ये कथाएँ, जो मौखिक परंपराओं, मांड गायन और फड़ चित्रकला के माध्यम से पीढ़ियों तक पहुँची हैं, राजपूतों के शौर्य, प्रेम की गहराई, सम्मान की रक्षा और बलिदान की भावना को जीवंत करती हैं। ये कथाएँ ग्रामीण और शहरी जीवन के अंतर, वर्ण व्यवस्था और सामाजिक संरचना को चित्रित करती हैं, जहाँ परिवार सामुदायिक जीवन की धुरी बनकर उभरता है। राधा और वीरेंद्र की प्रेम गाथा प्रेम और पारिवारिक कर्तव्य के बीच की जटिलताओं को दर्शाती है, जो सामाजिक अपेक्षाओं और व्यक्तिगत इच्छाओं के टकराव को उजागर करती है। वीर तेजपाल का युद्ध कौशल और रानी सूर्यकांता का अदम्य साहस ऐतिहासिकता को जीवंत करते हैं, जबकि नई कथाएँ सामाजिक ताने–बाने को और गहराई से उकेरती हैं। नारी शक्ति को राधा की रेतीली गाथा और सूर्या की बलिदानी कहानी बखूबी उजागर करती हैं, जो साहस, त्याग और दृढ़ता की प्रतीक हैं। फिर भी, कुछ कथाएँ पितृसत्तात्मक समाज की सीमाओं को भी प्रकट करती हैं, जो उस युग की सामाजिक वास्तविकताओं को दर्शाती हैं। ये लोक कथाएँ न केवल मनोरंजन करती हैं, बल्कि नैतिकता, एकता और सांस्कृतिक गर्व को प्रेरित करती हैं, जो आधुनिक युग में भी राजस्थान की धरोहर को जीवंत रखती हैं।

राजस्थान की लोक कथाएँ उसकी संस्कृति, सामाजिक मूल्यों और रेगिस्तानी जीवन की आत्मा को जीवंत करती हैं। ये अनूठी कहानियाँ, जो मौखिक परंपराओं और कला रूपों जैसे मांड गायन और फड़ चित्रकला के माध्यम से जीवित हैं, साहस, एकता, रचनात्मकता और प्रकृति के प्रति प्रेम को दर्शाती हैं। नीचे प्रस्तुत दस नई और मौलिक लोक कथाएँ राजस्थान के सांस्कृतिक वैभव और सामाजिक ताने–बाने को उजागर करती हैं, प्रत्येक एक गहन नैतिक संदेश के साथ। ये कथाएँ न केवल मनोरंजन करती हैं, बल्कि आधुनिक पीढ़ी को नैतिकता, समुदाय और सांस्कृतिक गर्व से जोड़ती हैं।

रेगिस्तान की ज्योति में रानी नाम की एक लड़की रात के अंधेरे में तारों से संवाद करती है। जब गाँव में निराशा का अंधेरा छा जाता है, वह तारों की रोशनी से एक चमत्कारी दीपक बनाती है, जो हर घर में आशा की किरण लाता है। यह कहानी सिखाती है कि सबसे कठिन परिस्थितियों में भी आशा की रोशनी जलाई जा सकती है। मरुस्थल का संन्यासी में बंजारा संन्यासी अमरदास रेगिस्तान में एक पेड़ लगाता है, जो सूखे के बावजूद हरा रहता है। उसका धैर्य और मेहनत गाँव वालों को प्रकृति के संरक्षण का महत्व सिखाती है, जो जीवन को समृद्ध बनाता है। सूरज की बेटी में सूर्या सूरज से अपने गाँव को सूखे से बचाने का वरदान माँगती है और एक तालाब की रक्षा का दायित्व पाकर समुदाय की शक्ति से उसे पूरा करती है, यह दर्शाते हुए कि एकता असंभव को संभव बनाती है।

रेत का गीत में गायक मंगल रेगिस्तान की रेत से एक ऐसा गीत रचता है, जो हवाओं में गूंजकर बिछड़े परिवारों को मिलाता है। उसका गीत मेलों में आज भी जीवित है, जो कला की एकजुट करने वाली शक्ति को रेखांकित करता है। चाँदनी का वचन में चरवाहिन चाँदनी गाँव की भेड़ों को चोरों से बचाने के लिए रेगिस्तान के भूतों से दोस्ती करती है। उसकी वचनबद्धता और साहस गाँव को समृद्धि देता है, यह सिखाते हुए कि विश्वास से हर बाधा पार की जा सकती है। कारीगर का सपना में कुंभराम, एक मूर्तिकार, मिट्टी से चमकती मूर्तियाँ बनाता है, जो गाँव को व्यापारियों के बीच प्रसिद्ध करता है। यह कहानी रचनात्मकता के माध्यम से समृद्धि का मार्ग प्रशस्त करने की प्रेरणा देती है।

रास्तों का राही में राहुल, एक भटका यात्री, सितारों को पढ़कर रास्ता ढूंढता है और गाँव के बच्चों को नक्षत्रों की विद्या सिखाता है। यह कहानी ज्ञान और दिशा के महत्व को दर्शाती है। रंगों की रानी में रंगीली बाई रेगिस्तान में एक रंगों का मेला शुरू करती है, जहाँ हर रंग एक कहानी कहता है, और यह मेला गाँव को एकता और खुशी देता है, यह सिखाते हुए कि उत्सव संस्कृति को जीवंत रखते हैं। पानी का पहरेदार में जलधर एक प्राचीन कुएँ को पुनर्जनन करता है, जिससे गाँव को पानी और सम्मान मिलता है, यह दर्शाते हुए कि संसाधनों की रक्षा सामुदायिक जीवन का आधार है। हवा की बेटी में हंसी हवाओं से नृत्य सीखती है और अपने कालबेलिया–प्रेरित नृत्य से बादलों को बुलाती है, जो गाँव का गौरव बनता है। यह कहानी प्रकृति के साथ सामंजस्य की सुंदरता को उजागर करती है।

ढोला–मारू री बात इस कथामें मारवाड़ी प्रेम परंपरा, ऊँट–यात्रा, रेगिस्तानी जीवन, स्थानीय वाद्य, तथा मरुस्थलीय संघर्ष की विशिष्ट सांस्कृतिक छवि उभरती है। यह कथा राजस्थान के सामाजिक और भाव–तत्वों का प्रतिनिधित्व करती है। झुंझार जी की कथा झुंझार जी को अनेक क्षेत्रों में लोक–रक्षक माना जाता है। यह कथा लोक–न्याय और समुदाय–सुरक्षा के मूल्यों का प्रतिनिधित्व करती है। रेत का गीत लोककथा में रेगिस्तान से उपजे गीत और कथाएँ लोगों के पर्यावरण–आधारित जीवन, साझा संघर्ष और कला के जीवंत रूप को दिखाती हैं।

पाबूजी की कथा पाबूजी को "ऊँटों के देवता" माना जाता है। उनकी कथा में पशुपालन समुदाय, रणभूमि की संस्कृति, त्याग और सामाजिक–सुरक्षा का भाव स्पष्ट दिखता है। देवी माता के झूंझारिये इन कथाओं में राजस्थान के गाँवों में प्रचलित धार्मिक अनुष्ठानों, लोक–देवियों की पूजा–पद्धति और सामाजिक विश्वास प्रणाली की झलक मिलती है। रामदेवजी की कथा राजस्थान की समन्वयवादी संस्कृति तथा विविध समुदायों में सामूहिक आस्था को दर्शाती है। बिणजारी माता की कथा जनविश्वास, चमत्कारिक लोक–धर्म और सामाजिक–सांस्कृतिक संरक्षण का प्रतीक है। कालबेलिया–नागलोक कथा कालबेलिया समुदाय की कथाओं में नृत्य, संगीत, देहभाषा और नाग–संबंधित सांस्कृतिक मान्यताओं का समृद्ध चित्रण मिलता है यह राजस्थान की जनजातीय पहचान का विशिष्ट उदाहरण है :

ये कथाएँ राजस्थान की सांस्कृतिक धरोहर–हस्तशिल्प, संगीत, नृत्य और सामुदायिक एकता को दर्शाती हैं। प्रत्येक कहानी नैतिकता, साहस और प्रकृति के प्रति प्रेम का संदेश देती है, जो रेगिस्तान की आत्मा को जीवंत रखती है और नई पीढ़ी को अपनी जड़ों से जोड़ती है।

चुनौतियाँ मौखिक परंपरा का लोप :

आधुनिक जीवनशैली, तकनीकी साधनों की बढ़ती निर्भरता और युवा पीढ़ी में लोक–कथन परंपरा के प्रति घटती रुचि के कारण पारंपरिक कथावाचन शैली धीरे–धीरे लुप्त हो रही है। इससे अनेक कथाएँ अपने वास्तविक रूप, भाषा, भाव और सांस्कृतिक प्रतीकों सहित विलुप्ति की कगार पर पहुँच चुकी हैं।

- **क्षेत्रीय भाषायी विविधता का दबाव :** राजस्थान में मारवाड़ी, मेवाड़ी, ढूंढाड़ी, हारौती, मालवी, वागड़ी आदि अनेक बोलियाँ प्रचलित हैं। लोक कथाएँ इन बोलियों के मूल स्वरूप में ही अपनी सांस्कृतिक पहचान को प्रतिध्वनित करती हैं। लेकिन आज लेखन और प्रस्तुति मुख्यतः मानक हिंदी पर केंद्रित होने से कई सूक्ष्म भाषिक सांस्कृतिक संकेत खो जाते हैं।

- **सांस्कृतिक प्रतीकों के परिवर्तन की चुनौती :** लोक कथाएँ अपने चरित्र, प्रतीकों, अनुष्ठानों, देव–देवियों, वीर–नारी आदर्शों और लोकजीवन के व्यवहार को मूल रूप में प्रस्तुत करती हैं। परंतु वर्तमान समय में कथाकारों द्वारा "आधुनिक प्रस्तुतीकरण" के प्रयास से प्रतीकों की व्याख्या बदल जाती है, जिससे मूल सांस्कृतिक पहचान धूमिल होती है।
- **विश्वसनीय दस्तावेजीकरण का अभाव :** राजस्थान के कई क्षेत्रों में लोक साहित्य का व्यवस्थित अभिलेखन अभी भी कमजोर है। अनेक मूल्यवान लोक कथाएँ केवल पीढ़ी से पीढ़ी सुनाई जाती रही हैं, जिसका प्रामाणिक डॉक्यूमेंटेशन उपलब्ध नहीं है। इससे शोधकर्ताओं के लिए तुलनात्मक, ऐतिहासिक और सामाजिक विश्लेषण कठिन हो जाता है।
- **लोक कलाकारों के सामाजिक-आर्थिक संघर्ष :** भाट, चारण, मागणियार, लंगा आदि समुदाय, जो लोक–कथन परंपरा के मुख्य वाहक हैं, आर्थिक अस्थिरता, मंचों की कमी, और संस्थागत सहयोग के अभाव के कारण अपनी कला को निरंतर जिंदा रखने में संघर्ष कर रहे हैं। यह स्थिति लोक कथाओं की निरंतरता को गंभीर चुनौती देती है।
- **सूचना प्रौद्योगिकी का प्रभाव :** सोशल मीडिया और डिजिटल मनोरंजन के युग में कथाएँ "संक्षिप्त और मनोरंजक" रूप में प्रस्तुत हो रही हैं, जिससे उनकी गहन सांस्कृतिक संरचना जैसे लोक आस्था, सामाजिक रीति–रिवाज, सामूहिक जीवन–मूल्य उपेक्षित हो जाते हैं।

भविष्य की संभावनाएँ :

- **डिजिटल संरक्षण और ई-आर्काइव :** यदि राजस्थान की लोक कथाओं के लिए एक समन्वित डिजिटल आर्काइव बनता है, जिसमें टेक्स्ट, ऑडियो, वीडियो और अनुवाद सामग्री संरक्षित हो, तो यह न केवल शोध को समृद्ध करेगा बल्कि वैश्विक स्तर पर राजस्थान की सांस्कृतिक पहचान को भी स्थापित करेगा।
- **अंतर्राष्ट्रीय शोध और अनुवाद कार्य :** लोक कथाओं का अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में अनुवाद होने से इनके भीतर निहित सांस्कृतिक मूल्य अंतर्राष्ट्रीय शोध समुदाय तक पहुँच सकते हैं। इससे राजस्थान की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान को विश्व लोक साहित्य के बड़े परिदृश्य में स्थान मिलेगा।
- **शैक्षणिक पाठ्यक्रम में समावेशन :** विश्वविद्यालयों में लोक साहित्य अध्ययन के विशेष पाठ्यक्रम, शोध केंद्र और प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारंभ होने से नई पीढ़ी को राजस्थान की सांस्कृतिक विरासत से गहरा परिचय मिलेगा, जिससे संरक्षण की प्रक्रिया मजबूत होगी।
- **लोक कलाकारों को संस्थागत संरक्षण :** यदि सरकार, सांस्कृतिक संस्थान और विश्वविद्यालय मिलकर लोक कलाकारों को वित्तीय, सामाजिक और तकनीकी सहयोग प्रदान करते हैं, तो मौखिक कथन–परंपरा पुनः जीवित और गतिशील हो सकती है। इससे कथाओं का मूल सांस्कृतिक स्वर भी संरक्षित रहेगा।
- **प्रौद्योगिकी आधारित प्रस्तुति :** ऑडियोबुक, पॉडकास्ट, एनीमेशन, डॉक्यूमेंट्री, लोककथाओं पर आधारित वेब–सीरीज आदि माध्यमों के उपयोग से आधुनिक पीढ़ी तक राजस्थान की लोक कथाएँ अधिक आकर्षक रूप में पहुँच सकती हैं। यह संरक्षण और प्रसार दोनों को सुनिश्चित करेगा।
- **सांस्कृतिक पर्यटन के माध्यम से विस्तार :** राजस्थान की लोक कथाओं को स्थानीय पर्यटन स्थलों, संग्रहालयों, लोक–कला उत्सवों, हेरिटेज वॉक और सांस्कृतिक मेलों से जोड़कर एक नया "कथा–पर्यटन मॉडल"

विकसित किया जा सकता है। इससे कथाएँ जीवंत स्वरूप में सामने आएँगी और सांस्कृतिक पहचान को व्यावहारिक मजबूती मिलेगी।

निष्कर्ष :

राजस्थानी लोक कथाएँ संस्कृति और समाज का अनमोल खजाना हैं, जो इतिहास, परंपराओं, नैतिकता, वीरता, प्रेम, और धार्मिक सहिष्णुता को दर्शाती हैं। ये कथाएँ कला, संगीत, और उत्सवों के माध्यम से सांस्कृतिक समृद्धि को प्रदर्शित करती हैं। डिजिटल मंचों और शिक्षा के जरिए इनका संरक्षण नई पीढ़ी को जड़ों से जोड़ता है, सामाजिक एकता और सांस्कृतिक पहचान को मजबूत करता है।

मौखिक परंपरा में संरक्षित इन कथाओं में लोक–भाषाओं, रूपकों, प्रतीकों, लोकदेवताओं और समुदाय–आधारित विश्वासों की जो विविधता दिखाई देती है, वह राजस्थान की सांस्कृतिक समृद्धि और बहुलतावादी पहचान को मजबूत करती है। यद्यपि आधुनिकता, तकनीकी हस्तक्षेप और दस्तावेजीकरण की कमी के कारण अनेक कथाएँ विलुप्ति की ओर बढ़ रही हैं, फिर भी इनके संरक्षण एवं प्रसार की व्यापक संभावनाएँ अभी भी विद्यमान हैं। डिजिटल संग्रह, ग्रामीण कथाकारों के संरक्षण, एकीकृत शोध परियोजनाओं और शैक्षिक पाठ्यक्रमों के माध्यम से इन कथाओं को न केवल संरक्षित किया जा सकता है, बल्कि इन्हें वैश्विक स्तर पर भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

इस प्रकार, राजस्थान की लोक कथाएँ राज्य की सांस्कृतिक आत्मा का प्रामाणिक प्रतिनिधित्व करती हैं। ये कथाएँ हमें यह समझने का अवसर प्रदान करती हैं कि राजस्थान की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान केवल इतिहास या लोक–आस्था में ही नहीं, बल्कि रोजमर्रा के जीवन, संबंधों, संघर्षों और लोक–चरित्रों में भी रची–बसी है। अतः इन कथाओं का व्यवस्थित अध्ययन और संरक्षण न केवल अकादमिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण का भी अनिवार्य माध्यम है।

संदर्भ :

1. शर्मा, मोहनलाल, राजस्थान की लोककथाएँ. जोधपुर : राजस्थानी ग्रंथागार, 2005. पृ. 20–22.
2. भटनागर, विमला, राजस्थानी लोककथाओं में नारी. दिल्ली : साहित्य सदन, 2010. पृ. 20–21.
3. मेहता, मोतीलाल, राजस्थान की लोकसंस्कृति. जयपुर : नेशनल पब्लिशर्स, 2008. पृ. 20.
4. व्यास, रामकिशोर, लोक साहित्य और संस्कृति. उदयपुर : अंश प्रकाशन, 2004. पृ. 20.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 187–194

GST and its Impact on MSMEs in India

Dr. Kunjan Pandey
Profossor Commerce, Ashoka School of Business, Varanasi, U.P.

Abstract :

The introduction of the Goods and Services Tax (GST) in July 2017 marked a major shift in India's indirect taxation system, aimed at simplifying the tax structure and creating a unified national market. Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs), which contribute significantly to India's industrial output, employment generation, and exports, have been particularly influenced by this reform. This study examines the overall impact of GST on MSMEs by analysing changes in compliance requirements, operational efficiency, financial performance, market competitiveness, and technological adaptation. The objective is to understand whether GST has acted as a catalyst for growth or posed additional burdens on small businesses.

GST has streamlined the taxation process by replacing multiple indirect taxes with a single tax regime, resulting in reduced cascading of taxes and improved transparency. Many MSMEs have benefited from input tax credit (ITC) provisions, simplified interstate trade, and enhanced ease of doing business. Additionally, digitalisation of tax processes encouraged MSMEs to adopt technology-driven accounting and compliance systems, strengthening formalisation and improving access to credit. However, the transition has not been uniform across all MSME segments. Increased compliance burden, the need for digital literacy, higher working capital requirements due to delays in ITC refunds, and frequent policy changes have created operational challenges for small enterprises with limited financial and technological capacity.

This research paper draws insights from recent reports, empirical studies, government data, and industry surveys to evaluate sector-specific impacts, especially on manufacturing, services, and micro enterprises. The findings indicate that while GST has potential to boost MSME competitiveness in the long run, short-term disruptions and compliance complexities have disproportionately affected micro and unorganised units. The study concludes that targeted interventions—such as simplified

return filing, faster refund mechanisms, lower compliance costs, and increased awareness programs—are essential for maximising the benefits of GST for MSMEs. Overall, the paper highlights a balanced perspective, acknowledging both the opportunities and persisting challenges that need policy attention to ensure inclusive growth of the MSME sector under the GST framework.

1. Introduction :

The Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) sector forms the backbone of the Indian economy, contributing significantly to employment generation, industrial output, innovation, and inclusive growth. With more than 63 million enterprises, the MSME sector contributes nearly 30% to India's GDP, 45% to manufacturing output, and 40% to exports. Because of this structural importance, any major reform in India's economic or taxation policy directly influences the performance, competitiveness, and sustainability of MSMEs. The introduction of the Goods and Services Tax (GST) on 1 July 2017 marks one of the most transformative indirect tax reforms in independent India, replacing a complex web of central and state-level taxes with a unified, destination-based tax system.

Before GST, MSMEs were subject to multiple taxes such as excise duty, VAT, service tax, entry tax, and octroi, each governed by different laws, rates, and compliance requirements. This fragmented structure led to cascading taxes, increased cost of production, and significant administrative inefficiencies. The GST system aimed to address these challenges by creating a common national market, improving tax transparency, eliminating cascading through seamless Input Tax Credit (ITC), rationalizing the tax regime, and promoting ease of doing business. In theory, GST promised to reduce transaction costs, increase market reach, and integrate MSMEs into formal supply chains where credit flow and compliance are streamlined.

However, the implementation phase of GST introduced a new set of challenges. MSMEs, particularly micro and small enterprises, experienced difficulties in adapting to digital platforms required for registration, invoicing, filing monthly returns, and ITC reconciliation. The sudden shift to an online tax system demanded digital literacy, reliable internet access, and updated accounting infrastructure—resources that many MSMEs lack. Additionally, frequent changes in GST rates, procedural updates, delays in ITC refunds, and complexities in e-way bill compliance created operational uncertainties. For enterprises operating on thin margins and limited working capital, these issues often led to disruptions in cash flow and increased compliance costs.

Despite these initial challenges, GST has generated several long-term opportunities for MSMEs. The removal of inter-state barriers has allowed firms to access larger markets at lower

logistical costs. GST compliance has also encouraged formalization, making MSMEs more eligible for institutional credit, government procurement, and participation in global value chains. Over time, policy revisions—such as the increase in threshold limits, simplified composition schemes, and quarterly filing options—have further improved the system's MSME-friendliness.

Given this mixture of opportunities and obstacles, the impact of GST on MSMEs remains a subject of extensive academic and policy debate. Researchers have attempted to evaluate GST's implications on various dimensions—cost structure, working capital management, compliance burden, profitability, competitiveness, and market expansion. While some studies highlight efficiency gains and structural benefits, others point to persistent challenges that disproportionately affect smaller enterprises.

Therefore, a detailed analysis of GST's impact on MSMEs is essential not only for understanding how taxation reforms reshape business environments but also for guiding future policy decisions aimed at strengthening India's most dynamic economic segment. This study seeks to examine the multifaceted effects of the GST system on MSMEs, analyse empirical evidence, review existing literature, and provide insights into how fiscal reforms can be better aligned with the needs and capabilities of small businesses in India.

2. Literature Review :

Early empirical studies and surveys produced mixed findings. Several academic articles and institutional reports found that GST simplified taxation by removing multiple cascading taxes and created formalisation incentives for small firms, while other studies pointed to increased compliance costs and strained working capital for MSMEs immediately after implementation. Sectoral studies noted that the impact varies widely—traders and small manufacturers dependent on informal supply chains often faced greater strain than firms already using formal input tax credit mechanisms. Recent academic and practitioner studies (2020–2025) continue to emphasise heterogeneity in effects across sectors and firm sizes.

1. "Impact of Goods and Services Tax (GST) on MSMEs in India" — ResearchGate/author(s) (survey paper)

Source Summary & findings : Several versions of this survey-style paper conclude that GST's long-run effects are positive (market integration, fewer cascading taxes), but short-run burdens arise from digital compliance, frequent rate changes, and ITC delays. Method: literature review + survey evidence.

2. World Bank — "The Challenges of the Goods and Service Tax (GST) implementation in India"

(report)

This Study focus on Comprehensive policy analysis highlighting that GST simplifies interstate trade but places heavy, transaction-level electronic reporting obligations on firms (compliance cost), especially smaller firms unfamiliar with digital systems. Method : policy analysis + country comparisons.

3. Ministry of MSME / Annual Report 2024–25 (Government of India)

In this Government reporting synthesizes reforms and support measures (thresholds, composition scheme changes, outreach), and shows policy moves intended to reduce MSME GST burdens. Useful for tracking official responses and relief measures.

4. IGNITED / JASRAE article — "Impact of GST on Small and Medium Enterprises" (empirical survey-based)

This Survey evidence shows mixed outcomes — ~half of surveyed SMEs reported operational efficiency gains from GST (market expansion, simplified indirect-tax structure), while many reported negative cash-flow impacts because of delayed Input Tax Credit (ITC) and compliance costs. Method: primary survey of SMEs.

5. ICMAI / policy note — "GST Impact on MSME"

This Study Focus on how thresholds, composition scheme, and exemption limits were changed to alleviate MSME concerns; notes positive structural benefits but cautions about vulnerable micro-firms facing compliance costs. Method: policy commentary with data from tax authority changes.

6. Recent journal articles & conference papers (various, 2018–2025) — e.g., IJCRT (2024), other conference proceedings and institutional research (SRM, PVGCO)

3. Data & Methodology

This paper synthesises :

- Government publications (Ministry of MSME annual reports and policy notes) for sector structure and policy responses.
- Official GST revenue aggregates to indicate formalisation and tax compliance trends.
- Recent sectoral & market surveys (digital adoption, industry requests for rate rationalisation) for contemporaneous MSME experiences.
- Peer-reviewed and conference papers surveying MSME owners about GST's operational impact.

Method : qualitative synthesis of findings, supported by the most recent quantitative aggregates (GST collections, MSME performance indicators) and recent survey insights.

4. Current Picture: Key Facts & Figures

- **GST revenue growth and formalisation :** Gross GST collections for 2024–25 reached a record ?22.08 lakh crore, reflecting growing compliance and formalisation of economic activity under GST. This suggests increasing taxpayer coverage and improved enforcement/compliance mechanisms.
- **MSME sector status :** Government MSME reports (Annual Report 2023–24; 2024–25) document continued expansion and diversification of MSMEs across sectors, ongoing efforts to facilitate digital registration (Udyam), and initiatives to increase competitiveness and market access. These reports emphasise that MSMEs remain a major employment engine and are a policy priority.
- **Digital adoption & resilience :** Recent surveys (e.g., MSME Digital Index) show that a large share of MSMEs adopted digital payments and basic digital tools, with 73% reporting business growth via digital adoption (UPI, smartphones) — a factor that influences GST compliance and record-keeping.

5. Positive Impacts of GST on MSMEs

5.1 Simplification & Single Tax Framework :

GST replaced a multiplicity of indirect taxes (central and state), reducing legal multiplicity and creating a single tax credit chain that benefits enterprises dealing across states. This simplification benefits MSMEs that engage in interstate trade and wish to scale.

5.2 Input Tax Credit (ITC) and Reduction of Cascading :

By enabling input tax credit across supply chains, GST reduces tax-on-tax (cascading), especially for manufacturers and suppliers integrated into formal value chains. Firms with sound accounting can lower effective tax burden and improve pricing competitiveness.

5.3 Formalisation, Access to Markets and Credit :

Formal GST registration and digital trails enhance MSMEs' creditworthiness and integration into formal procurement (including government e-marketplaces). Formalisation helps MSMEs access larger institutional buyers and government procurement portals.

6. Negative/Challenging Impacts on MSMEs

6.1 Compliance Costs & Complexity for Very Small Firms :

Many micro and small firms lacked familiarity with digital filing, invoicing systems, and regular return timelines. Compliance costs rose due to need for accounting software, training, and professional help—leading to higher overheads for tiny enterprises. Several studies report that compliance burden and transitional costs were a key concern.

6.2 Working Capital Pressure :

Because GST requires tax payments at the time of supply (while input tax credit may be claimed later or after vendor compliance), MSMEs often face working-capital strain, especially when buyer payments are delayed. Several surveys found that a significant share of MSMEs reported pressure on working capital post-GST.

6.3 Rate Classification and Sectoral Hardships :

Sector-specific rate classifications created winners and losers. Labour-intensive sectors or units producing low-margin goods (e.g., some textiles subsegments, ceramics/tile units) argued that certain slab assignments raised effective tax burdens and reduced competitiveness; some sectors continue to press for slab rationalisation. The Morbi ceramics industry example highlights ongoing sectoral appeals for rate reductions to relieve MSMEs.

7. Sectoral Case Notes

- **Tiles / Ceramics (Morbi) :** The Morbi tile cluster (a largely MSME-driven cluster) petitioned the government to reduce GST rates on tiles and sanitaryware to 5% from 18%, arguing the higher rate harms margins and employment in a cluster that supplies many domestic and export markets. This demonstrates how GST slab decisions have concentrated impacts on specific MSME clusters.
- **Digital-enabled MSMEs :** Firms adopting digital payments and simple accounting had smoother GST compliance experiences and greater ability to claim ITC and access formal finance — surveys show digital adoption correlates with reported business growth among MSMEs.

8. Policy Measures & Government Response

The central and state governments and GST Council have taken several measures to ease MSME transition :

- **Thresholds and composition schemes:** Lower compliance thresholds and composition schemes for small taxpayers reduce filing burdens for the smallest firms.
- **Digital and training initiatives:** Government MSME programmes and industry bodies have run training and digital outreach to help MSMEs register on Udyam, use e-invoicing (where applicable), and file GST returns.
- **Rate rationalisation & sectoral considerations:** Periodic GST Council meetings review rates and exemptions; several small-slab adjustments and clarifications have been made to address hurt sectors. Sectoral requests (e.g., tiles) remain active.

9. Recommendations

Based on the evidence and current policy landscape, the following recommendations aim to

reduce the adverse impacts of GST on MSMEs while preserving its benefits:

9.1 Reduce Compliance Costs :

- Simplify filing further for micro enterprises (single simplified return for very small taxpayers).
- Expand zero or minimal-fee assisted digital onboarding and free accounting templates/tools tailored for micro and small firms.

9.2 Improve Liquidity & Working Capital Flow :

- Fast-track ITC credit chains by improving matching and automated reconciliations to reduce credit delays.
- Consider short-term liquidity windows or automatic provisional credits for sectors with documented payment delays.

9.3 Targeted Rate Rationalisation :

- Use evidence-based sectoral reviews to adjust GST slabs for labour-heavy, low-margin MSME clusters (tiles, certain textiles segments). Transparent sunset conditions could be applied to temporary concessions.

9.4 Strengthen Training & Digital Adoption :

- Scale MSME digital literacy campaigns, focusing on GST e-invoicing, return filing and record keeping; partner with fintechs and state agencies to deliver low-cost solutions.

9.5 Improve MSME Voice in Policy :

- Institutionalise faster mechanisms for cluster-level grievances and introduce a rapid response cell under the MSME ministry/GST Council coordination to address urgent rate or operational concerns.

10. Conclusion :

GST has been a transformational tax reform for India, delivering benefits of a unified market, formalisation and long-run efficiency gains. However, the transition has not been uniformly smooth for MSMEs. The primary challenges remain compliance costs, working-capital stresses, and sectoral rate mismatches. Recent government revenues indicate increasing compliance, and digital adoption among MSMEs is a promising mitigating factor; nevertheless, careful policy tuning—especially targeted support for micro-units, improved ITC flows, and sectoral rate reviews—will be necessary to ensure MSMEs capture GST's benefits fully while minimising short-term dislocations.

References :

1. Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises, **Annual Report 2023–24** (and 2024–25

materials).

2. Press Information Bureau — **Record Gross GST collection in 2024–25: Rs. 22.08 lakh crore** (PIB note).
3. MSME Digital Index Report / PayNearby survey — **73% MSMEs report business growth via digital adoption**.
4. Academic and peer-reviewed studies on GST impact on MSMEs (IJCRT and related studies summarising compliance and working capital effects).
5. News item: Morbi ceramics industry request for GST rate rationalisation (illustrative sectoral case).

Name : Dr. Kunjan Pandey
Professor, Department of Commerce
Ashoka School of Business
Varanasi.
Email - drkpandey75@gmail.com
Mobile - 8318862039

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 195–198

जगद्गुरू स्वामी रामभद्राचार्य जी के अरूंधती महाकाव्य में राष्ट्रीय चेतना

प्रो. शिशिर कुमार पांडेय, शोध निर्देशक
मा. कुलपति, जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तर प्रदेश।
शीला देवी, शोधार्थी, हिन्दी विभाग
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट, उत्तर प्रदेश।

सार –

भारतीय साहित्य में महाकाव्य की परंपरा अत्यंत सुदृढ़ रही है। यह परंपरा संस्कृत भाषा से आरंभ होकर हिन्दी साहित्य तक आती है। हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में इस परंपरा में और अधिक दृढ़ता देखने को मिल रही है। साहित्य समाज को प्रतिबिंबित करता है और कविता मानव जीवन के अनुभाव, संवेदना एवं अनुभूतियों का समायोजन है। जो समयानुकूल शब्दों की शक्ति में निहित होती है, वह व्यक्ति की अभिव्यक्ति का एक प्रभावशाली माध्यम है।

जगद्गुरु रामभद्राचार्य विरचित अरुन्धती महाकाव्य में राष्ट्रवाद, समाजवाद एवं सनातन धर्म की शास्त्रानुमोदित राष्ट्र का प्रगतिशील चिंतन और भावना की कल्पना के साथ–साथ 'रामो राष्ट्रस्य मंगलम' का विचार या भाव के साथ–साथ राष्ट्रभक्ति के समन्वित रूप को प्रस्तुत किया गया है। जिसमें राष्ट्रीय विचार विमर्श सामाजिक परिवर्तन और सांस्कृतिक उत्थान के विषय में हजारों वर्ष पहले जो घटित घटनाएँ आज के दौर में विविध आयामों से देखने का सफल प्रयास किया गया है। इसके अंतर्गत समाज या राष्ट्र के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए समुदाय विशेष के नैतिक मूल्यों की पहचान कराई गई है और मनुष्य के विषय में चिंतनशीलता को प्रमुखता दी गयी है। जैसा कि विदित है कि, मानव चिंतनशील प्राणी है और समाज व राष्ट्र का निर्माण मानव के द्वारा ही संभव हो पाता है। ऐसे में नैतिकता से युक्त मानव देश की उन्नति में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

अरुन्धती महाकाव्य में महर्षि वशिष्ठ की धर्मपत्नी अरुन्धती की धैर्यता, निष्ठा, सत्यता और पति के प्रति आत्मसमर्पण की भावना और त्याग को चित्रित करने का सफल प्रयास किया गया है। यह महाकाव्य साहित्यिक रूप से उच्चकोटि का है। यह महाकाव्य रसास्वादन की दृष्टि से जयशंकर प्रसाद विरचित कामायनी, मैथिलीशरण गुप्त द्वारा रचित साकेत तथा यशोधरा जैसे महाकाव्यों की श्रेणी आता है जो राष्ट्र को समर्पित किया गया है। उक्त महाकाव्यों में नागरिकों को अपने राष्ट्र के प्रति वफादार एवं कृतज्ञ रहने की बात कही गई है।

अरुन्धती महाकाव्य मानव जीवन की ऐसी यशोगाथा है, जिसमें अरुन्धती को वैदिक ऋषि वशिष्ठ की

भार्या के साथ–साथ एक आदर्श नारी के रूप में उनके आचरण का चित्रण पौराणिक संदर्भों में किया गया है। उनके उत्तम व्यवहार व आचरण के माध्यम से जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी ने समाज व राष्ट्र को उत्कृष्ट महाकाव्य दिए हैं।

अरुन्धती महाकाव्य में नायिका अरुन्धती को एक आदर्श नारी के रूप में प्रस्तुत कर राष्ट्र को संदेश देने का सफल प्रयास किये हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा में वैदिक ग्रंथों का महत्वपूर्ण स्थान है, वहां से भक्तिकालीन साहित्य तक ऋषि पत्नी अरुंधती का चरित्र चित्रण विशद रूप में किया गया है।

बीज शब्द – राष्ट्रमंगल, राष्ट्रीय चेतना, भक्ति भावना, देशभक्ति, आदर्श स्वरूप, एकता, अखण्डता।

प्रस्तावना :–

अरुन्धती महाकाव्य एक अद्भुत कृति है। जो परम् श्रद्धेय जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी द्वारा विराजित है। इस महाकाव्य में नैतिकता, सदाचार, कर्तव्यनिष्ठा, मानवता और राष्ट्रीय एकता की भावना सन्निहित है। इस महाकाव्य में राष्ट्रीय चेतना के विविध आयाम दिखते हैं जो सभी के लिए अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय हैं।

श्रीरामचरितमानस में भगवान श्री राम का जो आदर्श, मर्यादित, शक्तिशाली और भक्तिमयी स्वरूप का समन्वय है वह भारतीय साहित्य में आदर्श नायक का प्रतिमान है। इसी प्रकार आदर्श नायिका के स्वरूप स्थापन का कार्य जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी ने अरुंधती महाकाव्य के माध्यम से किए हैं। जो मानव स्वतत्रंता, सामाजिकता, संस्कृति और राष्ट्रीयता पर गौरव का अनुभव करता है वही सच्चा राष्ट्रवादी हैं। हमारी राष्ट्रीय चेतना ही अक्षुण्ण धरोहर है।

''यही है राष्ट्र कर्म अभिराम,
यह है लोक–धर्म निष्काम।
यही है सुख साधन परिणाम,
जानकी पति पद प्रीति अकाम।।''[1]

राष्ट्र मंगल की भावना –

किसी भी देश की उन्नति तभी संभव है जब उसके नागरिकों में अपने राष्ट्र के प्रति मंगल भाव निहित होंगे। भारतीय साहित्य सदैव धर्म से ऊपर राष्ट्र को मानने की उद्घोषणा करता रहा है। जगद्गुरु जी देशसेवा को ही सर्वोत्तम धर्म स्वीकार करते हैं। इस संबंध में कहते हैं :–

'मीरा के कलकण्ठ गान से जहां रसित हो राजस्थान,
जहां सूर का श्याम रमा हो गिरिधर छोड़े मुरली तान।
जहां धर्म रक्षण हित रण में करें वीर वर देहोत्सर्ग,
जहां सती हो प्रतिव्रताएं पाये अमल अचल अपवर्ग।'[2]

भारत एक ऐसा राष्ट्र है जिसके नागरिक अपने देश की रक्षा के लिए प्राणों का बलिदान निःस्वार्थ करते हैं। उन्हें भारत की अस्मिता से बढ़कर कुछ भी नहीं है।

जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी कहते हैं कि, 'भगवान श्री राम के आदर्शों को देखते हुए उनके कार्य मर्यादा की सीमा हैं। राम शब्द 'रा' और 'म' अक्षरों का युग्म है। 'रा' का अर्थ है–राष्ट्र और 'म' का अर्थ है– मंगल अर्थात् राम राष्ट्र के मंगल के प्रतीक हैं।"[3]

पद्मविभूषण से विभूषित जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी ने भगवान श्री राम को ही राष्ट्र मंगल के रूप में देखते हैं और लिखते हैं। उदाहरण द्रष्टव्य है –

'इनकी धवल कीर्ति से भाषित होगा भास्वर भारतवर्ष,
राम नाम अभिराम कमतरू सकल मंगलो का मंगल,
सच पूछें तो राम शब्द का अर्थ अनूप राष्ट्र मंगल।।'[4]

देशभक्ति –

कविकुलरत्न महामहोपाध्याय जगद्गुरु रामभद्राचार्य जी अरुंधती महाकाव्य के प्रथम सर्ग, सृष्टि सर्ग में स्पष्ट रूप से लिखते हैं कि, 'जिस पावन धरा भारतवर्ष में मर्यादा पुरुषोत्तम प्रभु श्री राम का अवतरण हुआ, जहां पर सदैव याज्ञिक (यज्ञ) का कार्य करने से वातावरण मंगलमय हो जाता है तथा जहां पर सत्य, आदर्श, सनातन धर्म का उत्कर्ष होता है। वह मेरा भारत महान देश है।'[5]

अपने अरुंधती महाकाव्य में जगद्गुरु रामभद्राचार्य जी इस संबंध में इस प्रकार कहते हैं :–

''जिस पावन धरणी प्राची में
समुदित हो रवि भारतवर्ष
याज्ञिक धूमकेतु से पावित
सत्य सनातन धर्मोत्कर्ष।''[6]

जिस भारत देश की धरा पर भगवान श्री कृष्ण की प्रेमोन्मत्ता में मीरा एवं सूरदास जी जैसे महान संत मदमस्त होकर श्री कृष्ण की रसमयी लीला का गान करते हुए थकते नहीं थे। 'जहां पर स्वयं परम ब्रह्म परमात्मा अपनी मनमोहन मुरली की धुन से पूरे जनमानस को अपनी लीलाएं दिखाकर मोह लिया करते थे ऐसा ही अपना राष्ट्र भारतवर्ष है।'[7]

अपने देश की गरिमा पर गर्व करना चाहिए क्योंकि देशप्रेम के बिना जीवन अधूरा है। इस बारे में यह कथन ध्यातव्य है –

''मातृभूमि पर नहीं प्रेम जिसको वह क्या प्राणी है?
गाया नहीं आर्य संस्कृति जिसने वह क्या वाणी है।''[8]

राष्ट्रीय एकता –

जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी ने अपनी कृति अरुंधती महाकाव्य में एकता अखंडता एवं समाज के प्रति आत्मसमर्पण जैसी भावनाओं को दर्शाने का काम किए हैं। यह भारत की एकता ही हमारी शक्ति और भक्ति की पहचान है। भारत वर्ष में जो पर्व मनाए जाते हैं, वे राष्ट्रीय एकता का प्रतीक हैं और विश्व बन्धुत्व के भावों के जागरण का एक माध्यम भी हैं। अरुंधती महाकाव्य में इस प्रकार के भाव दिए गए हैं, जो इस प्रकार हैं –

''कौसल्या-सी जननी जहां हो,
भ्राता भरत सरिस धृत धर्मय
लक्ष्मण-सा व्रतनिष्ठ अनुज
रिपुसूदन – सा कनिष्ठ कृत कर्म।
जहां पादुका ही शासक हो

महाकाव्यमनुष्य बने उसका परिकर
जहां भालू कपि ही मंत्री हो
जहां स्वंय शिव हो किंकर।।"[9]

निष्कर्ष –

'पूज्यपाद जगद्गुरु स्वामी रामभद्राचार्य जी द्वारा विरचित अरुंधती महाकाव्य जो समाज के लिए प्रेरणास्रोत है और राष्ट्रहित के लिए बहुत ही उपयोगी ग्रंथ है।'

इस महाकाव्य में जहां देश की अस्मिता की बात की गई है वहीं दूसरी ओर देश के प्रति गर्व करने की बात कही गई है। इस महाकाव्य में जगद्गुरु जी ने भगवान राम को केवल धर्म पुरुष के रूप में ही नहीं प्रस्तुत किया अपितु राष्ट्र पुरुष के रूप में स्थापित किया है। इसके अंतर्गत आदर्शवादी नारी एवं समाज दोनों का चित्रण किया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ :-

1. जगद्गुरु रामभद्राचार्य, अरुंधती महाकाव्य, प्रीति सर्ग, श्री राघव साहित्य प्रकाशन निधि, हरिद्वार, प्रथम संस्करण संवत्–2050, पृ.–47.
2. वही, सृष्टि सर्ग, पृ.–8.
3. मिश्र, डॉ. सभापति, अरुंधती महाकाव्य परिशीलन, श्री तुलसीपीठ सेवान्यास आमोदवन, चित्रकूट, सन्–2014, पृ–28.
4. जगद्गुरु रामभद्राचार्य, अरुंधती महाकाव्य, उपलब्धि सर्ग, श्री राघव साहित्य प्रकाशन निधि, हरिद्वार, प्रथम संस्करण संवत्–2050, पृ.–202.
5. पाण्डेय, विनोद कुमार, स्वामी रामभद्राचार्य– एक अध्ययन, काशी विद्यापीठ वाराणसी, सन्– 2014, पृ.–154.
6. जगद्गुरु रामभद्राचार्य, अरुंधती महाकाव्य, सृष्टि सर्ग, श्री राघव साहित्य प्रकाशन निधि, हरिद्वार, प्रथम संस्करण संवत्–2050, पृ.–7.
7. जगद्गुरु रामभद्राचार्य, मेरी स्वर्ण यात्रा, तुलसी मंडल गाजियाबाद, सन् 2017, पृ.–117.
8. त्रिपाठी, अमरनाथ, जगद्गुरु रामभद्राचार्य जी के साहित्य में राष्ट्रीय चेतना, साहित्य सेवा संस्थान इलाहाबाद, सन् 2011, पृ.–251.
9. जगद्गुरु रामभद्राचार्य, अरुंधती महाकाव्य, सृष्टि सर्ग, श्री राघव साहित्य प्रकाशन निधि, हरिद्वार, प्रथम संस्करण संवत्–2050, पृ.–8.
10. मिश्र, रामनारायण, स्वामी रामभद्राचार्य : जीवन और साहित्य, गंगानाथ झा शोध संस्थान, वाराणसी, सन्–2012, पृ.–44

मोबाइल नंबर 9935359040

Email – shilucktd@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 199-204

हिंदी और तेलुगू की डिजिटल पत्र-पत्रिकाएं

डॉ. गोविंद जाधव
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
कर्नाटक केंद्रीय विश्वविद्यालय कलबुर्गी।

प्रस्तावना :

भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता ने प्रिंट माध्यम से डिजिटल प्लेटफार्म तक एक लंबी यात्रा तय की है। आज हिंदी और तेलुगू जैसी भारतीय भाषाएँ केवल क्षेत्रीय पाठकों तक सीमित नहीं रहीं, बल्कि डिजिटल माध्यम से वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान बना रही हैं। डिजिटल पत्र-पत्रिकाओं ने भाषा, समाज और संस्कृति के प्रसार में नई संभावनाओं को जन्म दिया है। यह केवल समाचार या लेखन का माध्यम नहीं, बल्कि संवाद, विमर्श और अस्मिता की पुनर्स्थापना का सशक्त साधन है। हिंदी और तेलुगू–दोनों भाषाओं की डिजिटल पत्रकारिता ने भाषायी सरोकारों को आधुनिक तकनीक से जोड़ते हुए पाठकों के सामने नई चुनौतियाँ और अवसर प्रस्तुत किए हैं।

बीज शब्द :

डिजिटल पत्र-पत्रिकाएँ, हिंदी ई-पत्रिका, तेलुगू ई-पत्रिका, साहित्यिक मंच, प्रवासी समुदाय, बहुभाषिक संवाद, तकनीकी चुनौतियाँ।

मूल आलेख :

हिंदी और तेलुगू दोनों भाषाओं की डिजिटल पत्र-पत्रिकाएँ 21वीं सदी में तेजी से उभरकर सामने आई हैं। इंटरनेट की पहुँच और स्मार्टफोन क्रांति ने इन भाषाओं को नई

शक्ति दी है। हिंदी में *जनसत्ता ऑनलाइन, प्रभात खबर डिजिटल, दैनिक भास्कर डिजिटल, आज तक* जैसी पत्रिकाएँ केवल समाचार नहीं देतीं, बल्कि साहित्यिक आलेख, सांस्कृतिक समीक्षा और सामाजिक विमर्श को भी आगे बढ़ाती हैं। इसी प्रकार तेलुगू भाषा में *Eenadu.net, Andhra Jyothy, Sakshi e-paper* जैसी डिजिटल पत्रिकाएँ न केवल तेलुगू भाषियों को जोड़ती हैं, बल्कि प्रवासी समुदाय तक पहुँचने में सेतु का कार्य करती हैं।

हिंदी और तेलुगू दोनों भाषाओं में डिजिटल पत्र-पत्रिकाओं ने साहित्यिक विमर्श को न केवल जीवित रखा है, बल्कि उसे नए आयाम भी दिए हैं। हिंदी की डिजिटल पत्रिकाओं में हिंदी समय, अनुभूति, अनुभव, साहित्यकुंज, कविता कोष और ग़ज़ल कोष जैसी पत्रिकाओं ने वैश्विक स्तर पर हिंदी साहित्य को व्यापक पाठकवर्ग तक पहुँचाया है। इन पत्रिकाओं ने रचनाओं के संग्रह, प्रकाशन और समीक्षा की प्रक्रिया को लोकतांत्रिक बना दिया है, क्योंकि अब कोई भी लेखक अपने लेखन को सीधे संपादकों तक पहुँचा सकता है और पाठक वर्ग तत्काल प्रतिक्रिया दे सकता है।

डिजिटल पत्र-पत्रिकाओं का सबसे बड़ा प्रभाव यह है कि अब भाषाई पत्रकारिता क्षेत्रीय सीमा से मुक्त हो गई है। प्रवासी भारतीय, जो अमेरिका, यूरोप या खाड़ी देशों में बसे हैं, अपनी मातृभाषा की पत्रिकाओं से डिजिटल रूप में जुड़ते हैं। हिंदी और तेलुगू दोनों ही भाषाओं की डिजिटल पत्र-पत्रिकाओं ने वैश्विक स्तर पर पाठकों का एक ऐसा समुदाय बनाया है, जिसे प्रिंट माध्यम कभी नहीं जोड़ पाया था।

इसी प्रकार तेलुगू की डिजिटल पत्र-पत्रिकाओं में అక్షరభారతి (Aksharabharati), ఈస్వరం (Eeswaram), తెలుగు లోకం (Telugu Lokam) और మధురవాణి (Madhuravaani) जैसी पत्रिकाएं प्रमुख हैं। इन डिजिटल पत्रिकाओं ने तेलुगू साहित्य की विविध विधाओं–कविता, कहानी, आलोचना और अनुवाद–को वैश्विक पाठकों तक पहुँचाया है। उल्लेखनीय है कि तेलुगू भाषा प्रवासी समुदाय में भी काफी बोली जाती है, और डिजिटल माध्यमों ने इस भाषा को प्रवासी जीवन के सांस्कृतिक आधार के रूप में भी सशक्त किया है।

हालाँकि, चुनौतियाँ भी कम नहीं हैं। तकनीकी शब्दावली, अनुवाद की समस्या, प्रामाणिकता का अभाव और तेजी से बदलते समाचार चक्र ने डिजिटल पत्र-पत्रिकाओं के सामने कठिनाइयाँ खड़ी की हैं। हिंदी डिजिटल पत्रकारिता में अक्सर अंग्रेज़ी शब्दों का अधिक प्रयोग देखने को मिलता है, जबकि तेलुगू में लिप्यंतरण और मिश्रित भाषा की समस्या है। इन चुनौतियों के बावजूद डिजिटल पत्र-पत्रिकाओं ने भाषायी पत्रकारिता की प्रासंगिकता को बनाए रखा है।

डिजिटल पत्रिकाओं के माध्यम से हिंदी और तेलुगू साहित्य का आपसी संवाद भी संभव हुआ है। हिंदी पत्रिकाओं में तेलुगू साहित्य के अनुवाद और तेलुगू पत्रिकाओं में हिंदी कवियों-लेखकों की रचनाएँ प्रकाशित होना इसका उदाहरण है। इस प्रकार डिजिटल मंच केवल भाषा और साहित्य के प्रसार का ही साधन नहीं, बल्कि बहुभाषिक संवाद और सांस्कृतिक आदान-प्रदान का भी सेतु है।

हालांकि, डिजिटल पत्रिकाओं के सामने कुछ चुनौतियाँ भी हैं। इनमें तकनीकी असमानता, इंटरनेट की पहुँच, वित्तीय संसाधनों की कमी और डिजिटल सामग्री की प्रामाणिकता से जुड़े प्रश्न प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त, त्वरित प्रकाशन के कारण कई बार संपादकीय गुणवत्ता प्रभावित होती है। फिर भी, यह निर्विवाद है कि डिजिटल पत्र-पत्रिकाओं ने साहित्य को समय और स्थान की सीमाओं से मुक्त कर दिया है

आलोचनात्मक दृष्टि से देखें तो यह भी कहा जा सकता है कि डिजिटल पत्र-पत्रिकाएँ कभी-कभी "क्लिकबेट" संस्कृति और बाज़ारवादी दबाव के अधीन हो जाती हैं, जिससे भाषा और सामग्री दोनों की गुणवत्ता पर प्रश्नचिह्न लग जाता है। फिर भी, इन माध्यमों ने लोकतांत्रिक संवाद, भाषाई पहचान और क्षेत्रीय पत्रकारिता के भविष्य को नया आयाम दिया है।

प्रमुख डिजिटल पत्र-पत्रिकाएँ और उनका परिचय

हिंदी पत्रिकाएं :

HindiKunj - एक लोकप्रिय साहित्यिक वेब-पत्रिका जहाँ हिंदी कहानियाँ, निबंध, काव्यशास्त्र और साहित्यिक समीक्षा प्रकाशित होती है।

वेबसाइट: hindikunj.com

Nayi Goonj - मासिक हिंदी ई-पत्रिका जो PDF स्वरूप में फ्री उपलब्ध करवाई जाती है। इसमें साहित्य, संस्कृति एवं सामाजिक मुद्दों पर रचनाएँ होती हैं।

वेबसाइट: nayigoonj.com/online-patrika/

Hans (हंस पत्रिका) - एक प्रतिष्ठित हिंदी साहित्यिक पत्रिका जिसकी डिजिटल उपस्थिति भी है।

वेबसाइट: hanshindimagazine.in

Pahal (पहल पत्रिका) - समकालीन सामाजिक-पolitical हलकों पर केंद्रित साहित्यिक पत्रिका।

वेबसाइट: pahalpatrika.com

Ghudsavar - नॉर्वे-आधारित एक ऑनलाइन सांगीतिक (काव्य) पत्रिका, जिसने हिंदी कविताओं के लिए भुगतान प्रणाली और पुरस्कार व्यवस्था शुरू की है।

वेबसाइट: ghudsavar.com

<u>तेलुगू पत्रिकाएं</u>

Sahari - यह एक तेलुगू ऑनलाइन पत्रिका है जिसमें विभिन्न विषयों–जैसे रचना, उपन्यास, सामाजिक लेख–सामिल हैं।

वेबसाइट: sahari.in

Telugu Magazines Portal (जैसे 123Telugu, Telugu Cinema, Gotelugu) - ये डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म फिल्म, मनोरंजन और सामयिक जानकारी के लिए लोकप्रिय हैं।

वेबसाइट: विभिन्न–for example 123Telugu, Telugu Cinema, Gotelugu आदि

Archive.org - यहाँ आप पुराने तेलुगू पत्रिकाओं जैसे Andhra Patrika, Yuva, आदि के स्कैन प्राप्त कर सकते हैं।

वेबसाइट पर उपलब्ध संग्रह: Archive.org's Telugu library collection

हिंदी पत्रिकाएँ तकनीकी रूप से सरल और साहित्य-केन्द्रित होती हैं, जैसे HindiKunj और Nayi Goonj; वहीं Hans और Pahal ने लंबी प्रतिष्ठा बनाए रखी है। Ghudsavar की पहल अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी कविता को सशक्त कर रही है।

तेलुगू पत्रिकाएँ जैसे Sahari में विविधता और रचनात्मकता अधिक है, जबकि 123Telugu जैसे पोर्टल पत्रकारिता और मनोरंजन का मिश्रण पेश करते हैं। Archive.org जैसी सेवाएँ पारंपरिक पत्रिकाओं को डिजिटल रूप में संरक्षित कर रही हैं–एक महत्वपूर्ण कदम।

निष्कर्ष:

हिंदी और तेलुगू की डिजिटल पत्र-पत्रिकाएँ केवल तकनीकी विकास का परिणाम नहीं हैं, बल्कि यह भाषाई चेतना और सांस्कृतिक अस्मिता का नया रूप हैं। उन्होंने क्षेत्रीयता को वैश्विकता से जोड़ा है, भाषा को आधुनिकता से और परंपरा को तकनीक से। चुनौतियों के बावजूद, इनकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यही आने वाले समय में भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता का चेहरा निर्धारित करेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. आचार्य, शारदा. *हिंदी पत्रकारिता का इतिहास और विकास.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2018।
2. शर्मा, सुरेश. *डिजिटल मीडिया और हिंदी पत्रकारिता.* भोपाल: ज्ञान प्रकाशन, 2020।
3. Reddy, K. Suresh. *Telugu Journalism: From Print to Digital.* Hyderabad: Orient Blackswan, 2019.
4. सिंह, अरुण. *भारतीय भाषाओं की डिजिटल पत्रकारिता.* वाराणसी: भारती प्रकाशन, 2021।
5. Websites: *Eenadu.net, Dainik Bhaskar Digital, Sakshi.com, Jansatta.com* (अभिगमन तिथि: 2025)।

jadavgovind@cuk.ac.in

9494250061

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 205–213

हिंदी साहित्य और नारी सशक्तिकरण : चिंतन और चुनौतियाँ
सामाजिक चुनौतियों को स्वीकारती स्त्री
Women Facing Social Challenges : An Analytical Study Based on Secondary Data In India

Suman Kumari Jaisal
Research Scholar, Ph.D Economics
Mahatma Gandhi Kashi Vidyapith Varanasi Uttar Pradesh -221002

Abstract :

The present study is conducted to understand the role of women in the economic and social condition of India as compared to men and the problems and challenges faced by women. Accordingly to data, in modern times, women have made progress in the field of education, business, employment and entrepreneurship, but their economic condition is still pathetic compared to men. Women have faced many challenges over the years. Employment opportunities, income levels, property of ownership, decision-making ability, social tie continue to influence the economic status of women. Women's participation in the economic sector has increased but women still face many problems in economic empowerment due to gender gap, discrimination at work place, difficulties in managing both domestic and professional work, family care and health problems. The results show that policy making, level of education, access of women to economic resources, and changes in social thinking have proved to be very helpful in improving their economic and social status.

The process of industrialization and urbanization in the 18th and 19th centuries also played an important role in changing the status of women, due to which these

women became free from the economic constraints of men and come out of their homes and became acquainted with the outside world and women started working in various industries and other business. Nowadays, women have started working in all social and economic fields. According to the data obtained from the Census of India 2011, the total number of women workers in India is 14.98crore. The total number of women workers in rural areas and urban areas is 12.18crore and 2.8crore respectively, out of 14.98crore women, here are 3.59crore women are farmers, remaining 85lacs women are agricultural labourers, 6.15crore are in domestic industries and 4.37crore women are classified as other workers.

Keywords : Women Empowerment, Social Challenges, Women Workforce Participation, Domestic Violence, Decision Making.

Introduction :

India is a rich country in tradition and cultural values where women have a prominent place in society. There is a large population of women in the rural landscape. During the period of foreign rule, many social evils and distortion areas, which further deteriorated the condition of women. After independence, the respect for women in society began to increase, but the peace of empowerment remained slow for decades. Poverty and illiteracy continue to pose serious obstacles to women's progress. Women can be encouraged to take up business through quality education and skills and become economically prosperous. Social and financial empowerment of women can be initiated through agro-processing, industries, banking services and digitalization. Indian women are energetic, vision, vibrate enthusiasm and commitment to face all challenges. In the words of India's first Nobel laureate, Rabindranath Tagore, for us women are not only the light of the home, but also the flame of that light. Women have been a source of inspiration for humanity since time immemorial. From Rani Lakshmi Bai of India's first teacher Savitri Bai Phule, they have set great examples of large-scale change in the society of India. India is moving rapidly towards the Sustainable Development Goal to make the Earth a paradise for humanity by 2030. Achieving gender equality and women's empowerment is a major priority in the Sustainable Development Goals. At present, special attention has been given to ensure the participation of women in important areas like management, environmental protection and social development.

An Act providing protection against sexual harassment of women at work place and for prevention and redressal of complaints of sexual harassment would violated the fundamental rights of a women to equality under articles 14 and 15 and rights to life and dignity under Articles 21 of the Constitution.

In Indian society, women have been victims of humiliation, oppression and exploitation due to which the issue of social and economic status of women has always been a major topic. Before independence, the main reasons for the poor condition of women were economic dependence, religious prohibition, illiteracy, lack

of women leadership, caste barriers and the unfair attitude of men towards women. Although various governments since independence have attempted to ensure women's empowerment by periodically enacting numerous laws to provide women with equal opportunities for social and economic development. India still lags behind many countries in ensuring women's participation and integrating them into the mainstream.

Problem Statement :

In the present modern economic climate, women are playing an active role in both society and economy, yet their contribution is not getting the recognition it deserves. While women's economic participation has increased in rural and urban areas, they are still disadvantaged by unequal pay, limited employment opportunities, lack of financial literacy and decision-making. The social, educational and factors that influence the process of women's empowerment in the economic world indicate that women's economic empowerment is not limited to economic resources alone but also requires social acceptance and policy support, nowadays women are playing an active role in every sphere of life, yet they have to face many social barriers traditional thinking and gender in equalities. The role of women in society is still viewed from a limited perspective. This adversely affects women's self-reliance and decision-making process. Due to social structure, customers and family responsibilities, women are aware of their rights but they face many difficulties in implementing them completely. In this context, it becomes essential to study how women are adapting to these social challenges and moving forward in their lives and what role they are playing in social change. Consequently, what role they are forming in society. This study attempts to understand the problems related to women's struggle, self-reliance and their identity in society. The study will analyse how women in society are moving towards their survival and empowerment amidst these social barriers.

Review of Literature :

- **Sharma, Vivek Kumar, 2017**, in his pioneering work on women, *Gharelu Hinsa ayvam Mahila Utpeedan Ka Samajshastriye Adhyayan (2017),* across all classes and cultures are victims of domestic violence. While laws have been enacted to prevent this, he has highlighted the lack of information and awareness.
- **Devi, Nisha, 2020**, in her pioneering work *Hindi Kahaniyon Main Adhunik Nari Ki Samajik Chetna Ki Vivechna,(2020)*,on modern women have tried to highlight the social consciousness and the development of Hindi story has also happened with them.

Objective of the Study :

1. To study the social problems and challenges faced by women.
2. To analyse women's participation in the economic sector and compare them to men.

Hypothesis of the Study :

1. Women who accept social challenges are the inspiration for social changes.
2. Women's participation in the economic sector has significantly improved the status of women.

Research Methodology :

This is a descriptive and analytical research. Its objective is to study the social status of women, their challenges and their attitude towards acceptances.

Nature of Data :

The present study used secondary data which includes information obtained from books, research papers, journals, government reports, news articles and magazines.

Study Area :

The present study has been conducted at the national level. It is focusing on India. India is a country of diversity where social, cultural and economical diversification exist. Women in different regions in rural and urban traditional and modern women face social discrimination and challenges. This study examines how women of India accept and respond to all these social challenges. It covers the status, education, employment and social challenges in both urban and rural areas. By covering different regions and social backgrounds in India, this study provides a comprehensive understanding of the social acceptance and adaptation of women.

Limitation of the Study :

This study is based merely on secondary data, so regional variation cannot be directly measured. The availability of up to date data is also limited.

Data Analysis and Interpretation of Data :

Table 1 : Education Level of Women in India :

Year	Rural			Urban			Combined		
Year	Women Literacy Rate	Men Literacy Rate	Total Literacy Rate	Women Literacy Rate	Men Literacy Rate	Total Literacy Rate	Women Literacy Rate	Men Literacy Rate	Total Literacy Rate
1951	4.87	19.02	**12.10**	**22.33**	**45.60**	**34.59**	**8.86**	**27.15**	**18.32**
1961	10.10	34.30	**22.50**	**40.50**	**66.00**	**54.40**	**15.35**	**40.40**	**28.31**
1971	**15.50**	**48.60**	**27.90**	**48.80**	**69.80**	**60.20**	**21.97**	**45.96**	**34.45**
1981	**21.70**	**49.60**	**36.00**	**56.30**	**76.70**	**67.20**	**29.76**	**56.38**	**43.57**
1991	**30.17**	**56.96**	**36.00**	**64.05**	**81.09**	**67.20**	**39.9**	**64.13**	**52.21**
2001	**46.70**	**71.40**	**59.40**	**73.20**	**86.70**	**80.30**	**53.67**	**75.26**	**64.83**
2011	**57.93**	**77.15**	**66.77**	**79.11**	**88.76**	**84.11**	**64.63**	**80.88**	**72.98**
% Increa -se in 2011 over 2001	**24%**	**8%**	**12%**	**8%**	**2%**	**5%**	**20%**	**7%**	**13%**

Source: Census of India, Office of Registrar General, India.

Interpretation :

There has been a steady importance in the literacy rate of women. The rural female literacy rate has increased by 20%, while the urban female literacy rate has increased by 8%. If seen in combined terms, male literacy rate has increased by only 7%.

Table 2: Labour Force Participation Rate (LFPR) For Age 15 & above in India Source:

Year	Rural			Urban			Rural + Urban		
	Male	Female	Person	Male	Female	Person	Male	Female	Person
2023-24	80.2	47.6	63.7	75.6	28	52	78.8	41.7	60.1
2022-23	80.2	41.5	60.8	74.5	25.4	50.4	78.5	37	57.9
2021-22	78.2	36.6	57.5	74.7	23.8	49.7	77.2	32.8	55.2
2020-21	78.1	36.5	57.4	74.6	23.2	49.1	77	32.5	54.9
2019-20	77.9	33	55.5	74.6	23.3	49.3	76.8	30	53.5
2018-19	76.4	26.4	51.5	73.7	20.4	47.5	75.5	24.5	50.2
2017-18	76.4	24.6	50.7	74.5	20.4	47.6	75.8	23.3	49.8

Annual PLFS Report, MoSPI

Graph 1: Labour Force Participation Rate (LFPR) For Age 15 & above in India (in %)

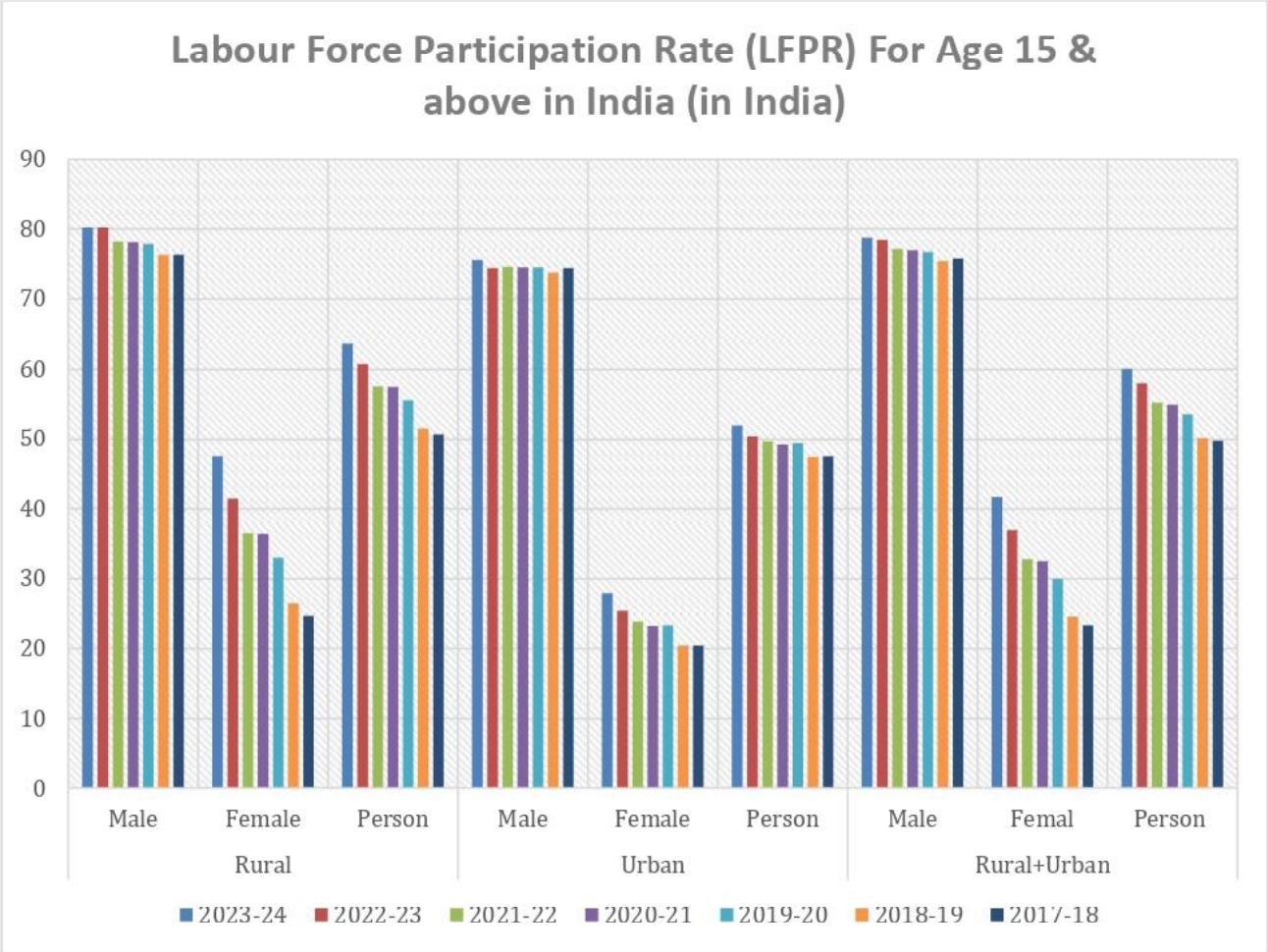

Source: Annual PLFS Report, MoSPI

Interpretation :

Employment participation is growing at a slow pace. While the rural employment participation rate for women in 2017-18 was 24% compared to 76.4% for men, the urban participation rate was 20.4% for women and 74.5% for men. The overall India participation rate is 23.3% for women and 75.8% for men. The 2023-24 figures also show a slow pace.

Table 3 : The Role of Women in Decision-Making

Types of Decision	Decision-Making Women (in %)
Own Health	**81.1**
Financial Decision(Expenditure)	**79.5**
Visit to Her Family/Relatives	**81.1**

Source: National Family Health survey-5, 2019-21

Interpretation :

The table clearly shows that women in India are now actively participating in decisions regarding health, expenditure and visiting her family/relatives. Women make decisions 81.1% of women in India on their own health, 79.55 on expenses and 81.1% on visits to her family/relatives.

Table 4 : Data of Domestic Violence Against Women :

States	Domestic Violence Cases (in %)
Arunachal Pradesh	30%
Assam	32%
Bihar	40%
Goa	8%
Gujarat	14%
Himachal Pradesh	8%
Karnataka	44%
Kerala	10%
Maharashtra	25%
Manipur	40%
Meghalaya	16%
Mizoram	11%
Nagaland	6%
Sikkim	12%
Telangana	37%
Tripura	21%
West Bengal	27%

Graph 2: Data of Domestic Violence Against Women:

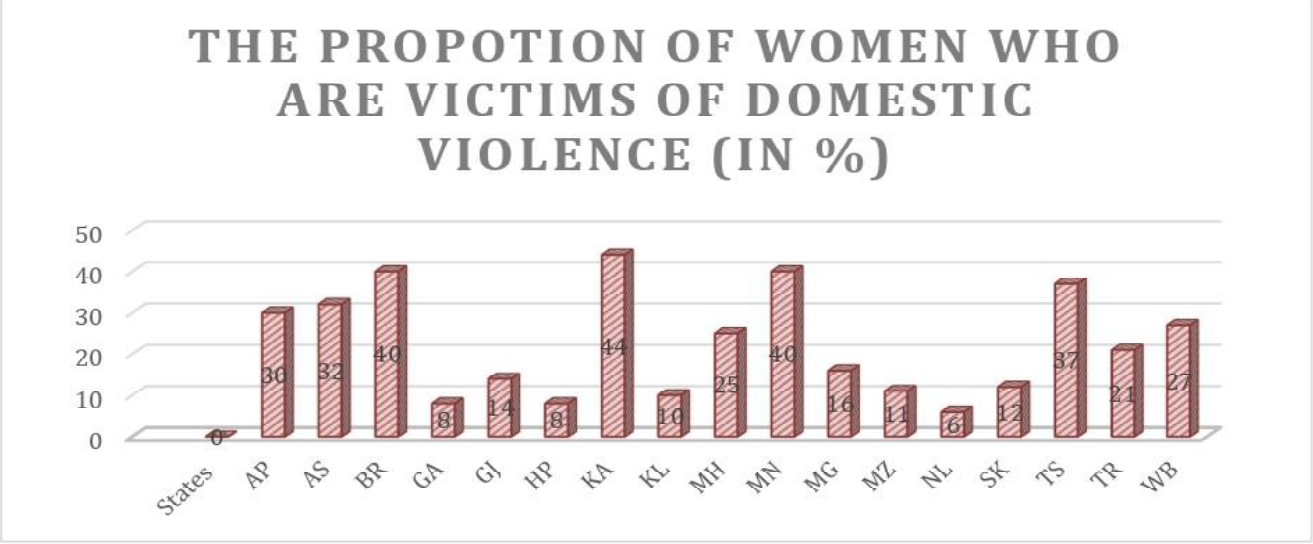

Source: PRS LEGISLATIVE RESEARCH, NATIONAL FAMILY HEALTH SURVEY-5

Interpretation :

The proportion of married women (18-49) who have experienced spousal violence at some points has increased in five states. In Karnataka, the rate has doubled from 21% to 44%. More than a third of women in Karnataka (44%), Bihar (40%) and Telangana (37%) have experienced spousal violence.

There has also been a slight decline in cases of domestic violence, which is a sign of awareness.

Findings :

Indian women are making progress in education and social participation. Similar changes, such as patriarchy, unequal opportunities and domestic violence, remain prevalent in society. Government initiatives such as 'Beti Bachao Beti Padhao', 'Ujjwala', and 'Mission Shakti' are bringing positive changes.

Suggestions :

There is a need to expand educational and employment opportunities for women. Social awareness programs should be strengthened. Self-reliance programs should be expanded in rural areas. Women's participation in policy making is essential.

Conclusion :

Indian women are not only facing challenges but also embracing them and making their work in society. They are making significant contributions to India's social and economic situation. The struggle and achievement of these women are creating positive changes in India's social trends.

References :

- **Sharma, Kumar Vivek. "Gharelu Hina Eyvam Mahila Utpeedan Ka Samajshastriye Adhyayan." *Chhatrapati Sahuji Maharaj University, Department of Sociology,* 2017, pp. 111-125**
  https://hdl.handle.net/10603/222849
- **Shrivastav, Rakesh. "Kurukshetra". *Ministry of Information and Broadcasting,* Jan 2018, pp. 2-9**
  https://www.publicationsdivision.nic.in

- **Shukla, Pshyanti. "Bharat Main Mahilaon Ki Saamajik-Arthik Sthiti." Jan 2018, pp. 1-4.**
  https://afeias.com
- **Dattatrey, Shri Bandaru. "Nav Bharat Ke NIrman Main Mahilaon Ki Badi Bhumika". 2022.**
  https://haryanarajbhavan.gov.in
- ***Drishti IAS***
  https://www.drishtiias.com
- ***Literacy and Education.* "Men & Women In India", 2017, Chapter- 13. pp. 47.**
  https://www.mospi.gov.in
- ***ResearchGate***
  https://www.researchgate.net
- ***Singh, K.*, "Importance Of Education in Empowerment of Women in India." *Motherhood International Journal of Multidisciplinary Research & Development*, 1 (1), 2016, pp. 39-48.**
- **'Periodic Labour Force Survey". *Ministry of Labour & Employment*, 05 MAR. 2025, https://www.pib.gov.in**
- **Vaishnav, Anurag, Bharat Ram, *Anya," Rashtriya Pariwar Swasthya Sarvekshan -5", 28 Dec. 2020,* https://hi.prsindia.org.in**

INDEX

CHAPTER	PARTICULARS	Page No.
	Abstract	1
CHAPTER 1	Introduction	2-3
CHAPTER 2	Literature Review	3
CHAPTER 3	Research Methodology	4
CHAOTER 4	Social Challenges and Analysis	5-8
CHAPTER 5	Findings, Suggestions and Conclusion	8-9
	References	9

sumanjaisal1@gmail.com
Mobile Number: 7355962003

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 13, Issue 11-12
पृष्ठ : 214-220

नागार्जुन की कविताओं में ग्राम्य संवेदना

कु० आरती पाण्डेय
शोधार्थी, हिंदी विभाग, गुलाब देवी महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बलिया।
सम्बद्ध : जननायक चंद्रशेखर विश्वविद्यालय, बलिया, उत्तर प्रदेश (277001)

सारांश –

आधुनिक हिंदी साहित्य की रचनाओं में गांव एक मुख्य विषयवस्तु के रूप में उभरा है। विभिन्न साहित्यकारों ने साहित्य की विभिन्न विधाओं यथा कविता,कहानी,उपन्यास तथा निबंध आदि में ग्रामीण जीवन,ग्रामीण संस्कृति, ग्रामीण सौंदर्य तथा ग्रामीण जीवन की विसंगतियों और चुनौतियों को प्रमुखता से उभारा है। प्रगतिशील आंदोलन ने तो गांव को साहित्यिक सृजन के केंद्र में ही लाकर खड़ा कर दिया।

नागार्जुन प्रगतिवादी या प्रगतिशील काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि हैं। वे जनवादी या जनपक्षधर कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं। उनकी समस्त रचनाएं राजनीतिक चेतना, जन संवेदना लोक तथा ग्राम की भावभूमि से अनुप्राणित हैं। प्रगतिवादी कवियों ने सदैव शोषित, पीड़ित और मजदूर वर्ग के पक्ष में अपनी लेखनी चलायी। नागार्जुन स्वयं निम्न मध्यवर्गीय ग्रामीण परिवार से आते हैं। गांव में उनका सीधा संपर्क श्रमजीवी वर्ग, किसान और मजदूरों से रहा है। उनके रहन–सहन और कष्टप्रद जीवन को उन्होंने काफी निकटता से अनुभव किया है। नागार्जुन की बहुत सी कविताएं सर्वहारा वर्ग की पीड़ा का यथार्थ चित्रण करती हैं जिससे कवि के मानवीय दृष्टि का पता चलता है। वे ग्रामीण जीवन के यथार्थवादी चित्रण के लिए जाने जाते हैं। उनकी कविताओं में प्रकृति की सुंदरता के साथ–साथ ग्रामीण गरीबों के संघर्ष और शोषण का चित्रण भी मिलता है। उन्होंने जहां एक ओर गांव के मनोरम प्राकृतिक परिवेश, सीधे–सादे, सरल जीवन का चित्रण किया है वहीं खेतों में जीतोड़ परिश्रम करने वाले किसानों, तंगहाली और अभावों में जीवन गुजारते मजदूर, श्रमिक, ग्रामीण जीवन की दुर्दशा, अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, अकाल, भुखमरी आदि का बहुत ही मार्मिक और यथार्थ चित्रण किया है। साथ ही उनकी बहुत सी कविताओं में गांव के सीधे–सादे प्रेम से भरे पारिवारिक जीवन का चित्रण भी मिलता है।

नागार्जुन ग्रामीण परिवेश से संबंध रखने वाले किसान कवि हैं अतः उनकी रचनाएं ग्रामीण संवेदना से भला कैसे अछूती रह सकती हैं? इनकी कविताओं में लोक और ग्राम की जीवंत उपस्थिति है। ग्रामीण जीवन के कोमल तथा कठोर, सुंदर और असुंदर, उज्जवल और स्याह सभी पक्षों को कवि नागार्जुन ने बड़ी ही सजगता, ईमानदारी और संवेदना के साथ अपनी साहित्यिक कृतियों में उकेरा है। गांव उनकी साहित्यिक रचना कर्म का एक विशिष्ट पक्ष है। प्रस्तुत शोध पत्र में नागार्जुन के काव्य में ग्राम्य संवेदना की अभिव्यक्ति का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्द – प्रगतिवाद, ग्राम्य, संवेदना, ग्रामीण जीवन, लोक जीवन, ग्रामीण सौंदर्य, ग्रामीण यथार्थ।

प्रस्तावना –

वैद्यनाथ मिश्र 'नागार्जुन' हिंदी साहित्य के प्रगतिवादी काव्यधारा के शलाका पुरुष के रूप में ख्यातिलब्ध हैं। ये भारतीय जनमानस के बीच जनकवि या जनवादी कवि के रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। इनकी कविताओं में जन संवेदना, जन सामान्य की पक्षधरता और गहरी सहानुभूति मिलती है।

"प्रगतिशील आंदोलन ने गांव को साहित्यिक सृजन के केंद्र में ला खड़ा किया। गांव का टाइप चित्र खींचने अथवा सीधा सदा रेखांकन करने की प्रवृति एक तरह से उस समय सर्वातिशायी प्रवृति बन गई थी। इस टाइप की अंतरंग विशिष्टताओं को वही कवि सामने ला सकता था जिसका गांव से गहरा लगाव रहा हो।"[1] (अवस्थी, 2012, P. 120)

बिहार राज्य के दरभंगा जिले के 'तरौनी' गांव से संबंध रखने वाले कवि नागार्जुन के व्यक्तित्व और कृतित्व पर ग्रामीण जीवन और संस्कृति की स्पष्ट छाप है। इनकी कविताओं में लोक और ग्राम की जीवंत उपस्थिति है। प्रखर राजनीतिक चेतना और सामाजिक प्रतिबद्धता के साथ ही साथ ग्राम्य जीवन के प्रति संवेदना और लोकोन्मुखता उनके काव्य की प्रमुख विशेषता है। गांव, गांव की प्रकृति, वृक्ष, नदी, खेत–खलिहान, गांव के सीधे–सादे लोग, गांव का पारिवारिक जीवन, मेहनतकश किसान, मजदूर, गरीबी, बदहाली, भुखमरी, शोषित, पीड़ित, अभावग्रस्त लोग आदि उनकी कविता के विषयवस्तु बनते हैं।

ग्राम्य प्रकृति, प्रेम और सौंदर्य

"जनपदीय मौसम, ऋतुचक्र, पेड़–पौधें, फूल–फल उनकी चेतना में ऐसे रचे–बसे हैं जैसे धमनियों में दौड़ने वाला खून। उनके सौंदर्य चित्रण में कवि का उल्लास भी बरसता चलता है। पाठक कवि के साथ खेतों की मेड़ों पर घूमता, कछारों में उतरता, गेहूं–धान की बालों को छूता, चूमता, मौलश्री, कटहल की टटकी गंध को सूंघता, वंशी–मादल के स्वरों पर झूमता, किशोरियों के कोमल कंठों में डूबता आज के ऊबड़ खाबड़ जीवन को नया अर्थ और आस्तिकता देता है।"[2] (बच्चन सिंह, 2021, P. 413)

एक दिन 'सुबह–सुबह' कवि निकल पड़ता है अपने गांव की सैर करने। तालाब के चक्कर लगाता, ओस से भींगी दूबों पर नंगे पांव चलता, माघ की उस ठंडी सुबह में आम की अधसुखी पत्तियों का अलाव तापते, गंवई लोगों के बीच बैठकर वह बतियाने का सुख लूटता है। यह गांव के सौंदर्य, आत्मीयता और अपनेपन का सुख है जो गांव में ही मिल सकता है।

'सुबह-सुबह
आंचलिक बोलियों का मिक्स्चर
कानों की इन कटोरियों में भरकर लौटा
सुबह-सुबह।'[3]

'ऋतु संधि' नामक कविता में नागार्जुन ने मिथिला जनपद की ग्राम प्रकृति के स्थानीय रंगों को उभारा– 'भर गई होगी अरे वह वागमती की धार/उगे होंगे पोखरों में कुमुद पदम् मखान।' कवि को मिथिला की धन कूटती किशोरियों की कोकिल कंठी तान भी याद आती है। प्रवासकाल में मिथिला का यह कवि अपनी पत्नी की याद में जब 'सिंदूर तिलकित भाल' लिखने बैठा तो मिथिला अंचल के विभिन्न अनुषंगों से गूंथे हुए वेणुवन,

रुचिकर भूभाग, धान, लीचियां और आम भी स्वतः याद आते गए।[4] (अवस्थी, 2012, P. 130)

'सिंदूर तिलकित भाल' कविता में कवि ने अपने प्रवासी जीवन की पीड़ा और अपने गांव की स्मृतियों को सीधे सादे शब्दों में व्यक्त किया है। और अपने व्यक्तिगत पीड़ा के माध्यम से ग्राम्य संवेदना को व्यक्त किया है। कवि ने अपने पत्नी के साथ साथ अपने स्नेही स्वजनों, तरौनी गांव तथा मिथिला के रुचिर भू–भागों को याद करते हुए गांव के प्रति अपने लगाव तथा गांव से दूर होने की पीड़ा की भावपूर्ण अभिव्यक्ति किया है।

'याद आते स्वजन
जिनकी स्नेह से भींगी अमृतमय आँख
स्मृति–विहंगम को कभी थकने न देंगी पाँख
याद आता मुझे अपना वह 'तरउनी' ग्राम
याद आतीं लीचियाँ, वे आम
याद आते मुझे मिथिला के रूचिर भू–भाग
याद आते धान
याद आते कमल, कुमुदिनि और तालमखान
याद आते शस्य–श्यामल जनपदों के
रूप–गुण–अनुसार ही रखे गए वे नाम
याद आते वेणुवन के नीलिमा के निलय अति अभिराम।'[5]

'बहुत दिनों के बाद' कविता में ग्राम्य संवेदना अपने पूरे वैभव के साथ अभिव्यक्त हुई है। गांव और प्रकृति के साथ अपने गहरे आत्मीय संबंध को दिखाते हुए कवि ने यह संकेत किया है कि ग्रामीण जीवन केवल साधारण दिनचर्या नहीं बल्कि इंद्रियों और मन की तृप्ति का उत्सव है। लंबे समय तक गांव से दूर रहने के बाद कवि जब अपने चिर परिचित गांव में आता है तो उसे असीम आनन्द और संतोष की अनुभूति होती है। जो उसे शहर में दुर्लभ है। वह खेतों में सुनहली फसलों को मुस्काते देखते हैं। धान कूटती किशोरियों को कोकिल कंठों से गीत गाते सुनता है। ताजे टटके मौलसरी के फूलों का दिव्य सुगंध लेता है। अपने गांव की पगडंडी की चन्दनवर्णी धूल को स्पर्श करता है और गन्ने के रस का स्वाद लेता है।अपने गांव के मोहक और रमणीय वातावरण को तथा अपने हृदय के उल्लास को कवि रूप, रस, गंध शब्द और स्पर्श के पांच बिम्बों के माध्यम से व्यक्त करता है –

''बहुत दिनों के बाद
अबकी मैंने जी भर भोगे
गंध–रूप–रस–शब्द–स्पर्श सब साथ–साथ इस भू पर
–बहुत दिनों के बाद।"[6]

पके हुए फसलों से भरे हुए खलिहान को देखकर इस किसान कवि को गहरी आत्मिक संतुष्टि होती है। वह महसूस करता है कि इन फसलों के रग–रग में उसके रक्त की बूंदें मुस्कुरा रही हैं। ये लहलहाती हुईं फसलें उसके परिश्रम, उसके खून पसीने से कमाई हुई दौलत है। श्मेरी भी आभा है इसमेंश कविता में वे लिखते हैं –

''पकी सुनहली फसलों से जो

अबकी यह खलिहाल भर गया
मेरी रग-रग के शोणित की बूंदें इसमें मुसकाती हैं।
नए गगन में नया सूर्य जो चमक रहा है
यह विशाल भूखंड आज जो चमक रहा है
मेरी भी आभा है इसमें।"[7]

खेतों में पके, सुनहले फसलों को देखकर कवि उत्सुकतावश यह विचार करता है कि आखिर 'फसल' क्या है? फसल उसे ढेर सारी नदियों के पानी का जादू, करोड़ों मेहनतकश किसानी हाथों के स्पर्श की गरिमा और हजार हजार खेतों की मिट्टी के गुण धर्म मालूम होते हैं। इस तरह कवि कृषक के कठोर श्रम और प्रकृति प्रदत संसाधनों के महत्ता को सुंदरतम रूप में प्रस्तुत करता है।

"फसल क्या है?
और तो कुछ नहीं है वह
नदियों के पानी का जादू है वह
हाथों के स्पर्श की महिमा है
भूरी-काली-संदली मिट्टी का गुण धर्म है
रूपांतर है सूरज की किरणों का
सिमटा हुआ संकोच है हवा की थिरकन का!"[8]

कवि की स्मृतियों में उनका गांव, उनकी जन्मभूमि, उनके स्नेही स्वजन, उनके खेत–खलिहान, बाग–बगीचे, आम ग्रामीण जनमानस, सम्पूर्ण ग्रामीण परिवेश इस तरह बसे हुए हैं कि वह सब कुछ अनायास ही उनकी कविताओं में उभर आते हैं। 'जहां विषयवस्तु गांव के परिवेश से उठायी गई है वे इन चित्रणों में स्वयं शामिल हैं।... वे स्वयं भी तो इसी वर्ग के हैं।'[9] (बच्चन सिंह, 2021, P. 414)

ग्रामीण विसंगतियों और विद्रूपताओं का यथार्थ चित्रण :

नागार्जुन ने अपनी कविताओं में न केवल गांव के सरल, सहज जीवन, प्राकृतिक सौंदर्य और सुखद परिवेश का ही चित्रण किया है अपितु ग्रामीण जीवन में व्याप्त कठिनाइयों, विसंगतियों, विद्रूपताओं और ग्रामीण जीवन की चुनौतियों, गांव के लोगों के संघर्षों का भी यथार्थपूर्ण और बेबाक चित्रण किया है।

प्रगतिवादी कवियों में नागार्जुन बहुचर्चित हैं। स्वाधीनता संग्राम के दिनों में जैसे अनेक प्रकार के राष्ट्र–गान, प्रभाती और उद्‌बोधन–गीत मुखर शैली में लिखे गए थे। वैसे ही स्वतंत्र भारत के विविध आंदोलनों के लिए गीत और कविताएं नागार्जुन ने लिखी हैं।..... इन आंदोलनमूलक कविताओं के अतिरिक्त सामान्य जन जीवन को अंकित करने वाली कुछ कोमल और कुछ तीखी रचनाएं भी नागार्जुन ने लिखी हैं। जो एक प्रकार से आधुनिक हिंदी कविता में प्रगतिवाद का रेखांकन माना जा सकता है।[10] (चतुर्वेदी, 2021, P. 190)

'प्रेत का बयान' कविता में कवि ने बिहार राज्य के पूर्णिया जिले के अंतर्गत रूपउली गांव के एक प्राइमरी पाठशाला के मास्टर का मार्मिक चित्र खींचा है। जिसका सारा परिवार आर्थिक अभाव, गरीबी और भूख से त्रस्त होकर एक–एक करके परलोक सिधार गया। यमराज के पूछने पर वह स्वाधीन भारत का गरीब किंतु सुशिक्षित स्वाभिमानी मास्टर का यह कहना कि वह भूख से नहीं पेचिश से मरा है, पूरी कविता को व्यंग्य के साथ–साथ

करुणा, सिसकन और विक्षोभ से भर देता है –

''सुनिए महाराज,
तनिक भी पीर नहीं
दुःख नहीं, दुविधा नहीं
सरलतापूर्वक निकले थे प्राण
सह न सकी आँत जब पेचिश का हमला ..'सुनकर दहाड़
स्वाधीन भारतीय प्राइमरी स्कूल के
भुखमरे स्वाभिमानी सुशिक्षक प्रेत की
रह गए निरूत्तर
महामहिम नर्केश्वर।''[11]

एक देहाती स्कूल के असुविधाग्रस्त स्कूल में किस प्रकार एक मास्टर जिसे बहुत दिनों से वेतन भी नहीं मिला, अपने आर्थिक अभाव को झेलते हुए भी किस प्रकार 'आदम के सांचे' गढ़ रहा है। इसका यथार्थ और कारुणिक चित्र कवि ने 'मास्टर' कविता में खींचा है। कवि ने यहां गांव के स्कूली इमारत की दुर्दशा को रेखांकित करते हुए गांव में प्राथमिक शिक्षा तथा प्राथमिक मास्टर तक की दुर्दशा को यथार्थपूर्ण तरीके से उकेरा है।

''घुन खाए शहतीरों पर की बाराखड़ी विधाता बांचे
फटी भीत है, छत चूती है, आले पर बिसतुइया नाचे
बरसा कर बेबस बच्चों पर मिनट मिनट पर पांच तमाच
दुखरन मास्टर गढ़ते रहते किसी तरह आदम के सांचे।''[12]

'अकाल और उसके बाद' कविता में कवि ने सन् 1943 में आए बंगाल के भीषण के चपेट में आए एक साधारण गांव के घर की स्थिति को व्यक्त करते हुए पूरे समाज और मानव जाति के संघर्ष को प्रतिबिंबित किया है। महज आठ पंक्तियों की यह कविता अकाल की विभीषिका से त्रस्त एक ग्रामीण घर का मार्मिक चित्रण कर भूख, पीड़ा और जीवन के संघर्ष की सार्वभौमिकता को उजागर करती है।

''कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।
दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद।''[13]

प्रगतिवादी कवियों ने सदैव शोषित पीड़ित और मजदूर वर्ग के पक्ष में अपनी लेखनी चलायी। नागार्जुन स्वयं में निम्न मध्यवर्गीय ग्रामीण परिवार से आते हैं। गांव में उनका सीधा संपर्क श्रमजीवी वर्ग, किसान और मजदूरों से रहा है। उनके रहन–सहन और कष्टप्रद जीवन को उन्होंने काफी निकटता से अनुभव किया है।

नागार्जुन की बहुत सी कविताएं सर्वहारा वर्ग की पीड़ा का यथार्थ चित्रण करती हैं जिससे कवि के मानवीय दृष्टि का पता चलता है। 'खुरदुरे पैर' शीर्षक कविता में कवि ने एक रिक्शाचालक के कष्टप्रद जीवन और उसके कठिन कर्म की यथार्थ झांकी प्रस्तुत की है जो अनायास ही हृदय द्रवित कर देता है। फटी बिवाईयां, कुलिश–कठोर पैर, नंगे पांव जीवन यात्रा और कठिन श्रम ये प्रतीक ग्रामीण किसान और मजदूर जीवन से सीधे जुड़ते हैं :–

''खुब गए
दूधिया निगाहों में
फटी बिवाइयोंवाले खुरदरे पैर
धँस गए
कुसुम–कोमल मन में
गुट्ठल घट्ठोंवाले कुलिश–कठोर पैर
दे रहे थे गति
रबड़–विहीन ठूँठ पैडलों को
चला रहे थे
एक नहीं, दो नहीं, तीन–तीन चक्र
कर रहे थे मात त्रिविक्रम वामन के पुराने पैरों को
नाप रहे थे धरती का अनहद फासला
घण्टों के हिसाब से ढोये जा रहे थे!''[14]

ग्रामीण परिवेश में पले बढ़े नागार्जुन ने गांव के यथार्थ को बखूबी अपनी रचनाओं में उकेरा है। उन्होंने जहां एक ओर गांव के मनोरम प्राकृतिक परिवेश, सीधे सादे सरल जीवन का चित्रण किया है वहीं खेतों में जीतोड़ परिश्रम करने वाले किसानों, तंगहाली और अभावों में जीवन गुजारते मजदूरों, श्रमिकों, ग्रामीण जीवन की दुर्दशा, अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, अकाल, भुखमरी, तंगहाली, बदहाली आदि का बहुत ही मार्मिक और यथार्थ चित्रण किया है। 'मास्टर', 'अकाल और उसके बाद', 'प्रेत का बयान', 'खुरदुरे पैर', 'गुलाबी चूड़ियां', 'सुबह–सुबह', 'फसल', 'ऋतु संधि', 'मेरी भी आभा है इसमें', 'वह तुम थी', 'सिंदूर तिलकित भाल' आदि ग्रामीण संवेदना को व्यक्त करती नागार्जुन की श्रेष्ठ काव्य रचनाएं हैं। "उनकी कविताओं में जगह जगह गांव की धरती का खुरदुरापन अपनी उर्वरता और ऊर्जा के साथ उपस्थित है। उन्होंने ठीक ही कहा है – **जन जन में जो ऊर्जा भर दे/मैं उदगाता हूं उस रवि का।''**[15] (बच्चन सिंह, 2021, P. 414)

उपसंहार –

नागार्जुन की कविताओं का तात्विक विश्लेषण करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि नागार्जुन ग्रामीण जीवन के कवि हैं, ग्रामीण संवेदना के कवि हैं। एक किसान कवि हैं जिनका मिट्टी से गहरा जुड़ाव है। कवि ने मिथिलांचल के गांव ,अपनी जन्मभूमि, लोक जीवन और लोक संस्कृति को अपनी लेखनी का आधार बनाया है। नागार्जुन में राजनीतिक चेतना और जनपक्षधरता जितनी प्रबल है ग्राम्य चेतना और ग्राम्य संवेदना भी उतनी ही प्रबल है। ग्रामीण जीवन के कोमल तथा कठोर ,सुंदर और असुंदर, उज्जवल और स्याह

सभी पक्षों को कवि नागार्जुन ने बड़ी ही सजगता, ईमानदारी और संवेदना के साथ अपनी साहित्यिक कृतियों में उकेरा है। गांव उनकी साहित्यिक रचना कर्म का एक विशिष्ट पक्ष है।

संदर्भ सूची :-

1. अवस्थी, रेखा. (2012). प्रगतिवाद और समानांतर साहित्य. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
2. सिंह, बच्चन (2021). हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास (14वाँ संस्करण). दिल्ली राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि.।
3. नागार्जुन. सुबह–सुबह (कविता,. कविता कोश. http://kavitakosh.org/kk/सुबह–सुबह) नागार्जुन।
4. अवस्थी, रेखा. (2012). प्रगतिवाद और समानांतर साहित्य. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
5. नागार्जुन. सिंदूर तिलकित भाल, कविता,. हिन्दवी. https://www.hindwi.org
6. नागार्जुन. बहुत दिनों के बाद कविता,. हिन्दवी. https://www.hindwi.org
7. नागार्जुन. मेरी भी आभा है इसमें 'कविता,. कविता कोश. http://kavitakosh.org/kk/मेरी भी आभा इसमें /नागार्जुन।
8. नागार्जुन. फसल कविता,. कविता कोश. http://kavitakosh.org/kk/फसल/नागार्जुन
9. सिंह, बच्चन (2021). हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास (14वाँ संस्करण). दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि.
10. चतुर्वेदी, रामस्वरूप. (2021). हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास (24वाँ संस्करण). इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन.
11. नागार्जुन. प्रेत का बयान, कविता,. कविता कोश. http://kavitakosh.org/kk/प्रेत का बयान /नागार्जुन।
12. नागार्जुन. मास्टर कविता,. तहलका. https://tehelka.com/मास्टर–नागार्जुन।
13. नागार्जुन. अकाल और उसके बाद, कविता,. कविता कोश. http://kavitakosh.org/kk/अकाल और उसके बाद/नागार्जुन।
14. नागार्जुन. खुरदरे पैर, कविता,. कविता कोश. http://kavitakosh.org/kk/खुरदरे पैर /नागार्जुन।
15. सिंह, बच्चन (2021). हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास (14वाँ संस्करण). दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि.

मो० न० – 8545903320

ई मेल – pandeyaarti823@gmail.com

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना शोध संस्थान भिवानी के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज भिवानी से छपवाकर कार्यालय 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2321:8037